श्रीमन्निकुञ्जविहारिणे नमः

भक्ति रस फुटकर प्रसंग

संकलन कर्त्ता—

बाबा विश्वेश्वर शरण

प्रकाशक—

श्री ब्रज सेवा समिति, वृन्दावन

प्रथमावृत्ति ५००

वि० सं० २०१९

प्रकाशक—

श्री व्रज-सेवा-समिति

वृन्दावन

★

संकलनकर्त्ता—

बाबा विश्वेश्वरशरण

★

अक्टूबर १९६२

★

न्यौछावर—

भगवत प्रेम

★

मुद्रक—

छाजूराम रानीलावाले

श्रीसर्वेश्वर प्रेस

वृन्दावन

॥ श्रीमन्निकुञ्जविहारिणे नमः ॥

भक्ति रस-फुटकर प्रसंग
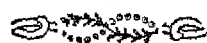
* अथ राधा बालविनोद लीला *

दोहा—अब बरनौं श्री राधिका, बाल चरित्र अनूप ।
लाइक दाइक सुमति मुहि, गुरु वर श्रीहित रूप ॥१॥
कीरति कृपा सदेह मनु, सुता जु रूप सदेह ।
मंगल निकर सदेह तहाँ, अस रावलि पति ग्रेह ॥२॥
अजिर भूप वृषभानु कैं, राजति गोपी वृन्द ।
चारु चकोरी मुदित मनु, निरषति अद्भुत चन्द ॥३॥
सुन्दर मन्दिर पालनौं, लली झुलावति माइ ।
कर गहैं डोरी पाट की, हरष न हिये समाइ ॥४॥
सिर पर टोपी तास की, कोर लगीं मणिमाल ।
पीत झँगुरिया तन लसै, दिपतु चखौंडा भाल ॥५॥

* चौपाई *

कीरति कुँवरि झुलावै पलना । आइ जुरैं सब पुर की ललना ॥
चुटकी दै दै कै दुलरावैं । महा मोद भरि मंगल गावैं ॥
किलकि किलकि बहु कौतुक करैं । चरन अँगूठा मुख में धरैं ॥
अम्बुज कनक खिली मनु कली । इह विधि सोभित आँनन लली ॥
सब अवतारनि कौ जौ मूल । ताके कोटि प्राण सम तूल ॥
कीरति दूध पलति है सोई । अतरकि कथा क है कहा कोई ॥
लै बैटै जु अङ्क जब रानी । महा भाग जो मुनिनु बखानी ॥
स्तन पान करैं कंचन तनी । मुख तें झरति दूध की कनी

सो ब्रज के वाइस चुनि खात । ब्रह्मादिक जाकों पछितात ॥
बदन निरखि प्रमुदित ब्रजनारि । दिन दिन बढ़त जु राजकुँवारि ॥१०॥
भेष बदलि सब शक्ति जु आवैं । दरशन अवसर तेऊ न पावैं ॥
शिव विधि आदि उमा है रहैं । बाल चरित सब देख्यौ चहैं ॥११॥
जो सुख गोप गोपिकनि लह्यौ । फनिपति हूँ पै परन्तु न कह्यौ ॥
गोधन बढ़ै बढ़ै सुख छिन छिन । बढ़ै लक्ष्मी घर घर दिन दिन ॥१२॥
लाड बढ़ै कीरति उर नयौ । प्रेम प्रकाश सकल ब्रज भयौ ॥
जब गौरंग घुटुरुवनि चली । बाजति पग पैंजनियाँ भली ॥१३॥
ज्यौं ज्यौं होतु घूँघुरिनु नाद । कुँवरि हिये बाढ़तु अहलाद ॥
जब मुरि देखति मैया ओरी । अधरनिमें मुसिकनि थोरि थोरी ॥१४॥
जननी उर सनेह जब सरसै । दूध उरोजनि तें तब बरसै ॥
भुज भरि लेइ पय पान करावैं । चन्दन पलि कियाँ पुनि पौंढावैं ॥१५॥
झीने पट छनि छनि छबि निकसै । रानी देखि देखि हिय बिकसै ॥
भूख लगै तब हीं पुनि जगैं । मचलैं कर पद पटकन लगैं ॥१६॥
लेइ उठाइ ताही छिन अङ्क । जननी निरखै वदन मयंक ॥
अतिलड़िकौ पय धापि पिवावै । हाथ खिलौना पुनि जु गहावै ॥१७॥
दइ बैठारि अजिर के मांहिं । ठाढी करैं जु गहि गहि बांहिं ॥
पुनि मैया पग चलन सिखावैं । घर की देहरि ताहि नखावैं ॥१८॥
देहरि नाखी भानु दुलारी । जननी मांन्यौ मङ्गल भारी ॥
राधा नाम माइ कहि बोलै । भरै हूंकरा पुनि मुख खोलै ॥१९॥
नाम आपुनौ समुझन लगी । जो टेरै तित आवैं भगी ॥
कनक घूंघरू झनकैं खरैं । कर पग चूरा हँगुली गरैं ॥२०॥
श्रवन झूमका शोभित महा । नथुली की छबि बरनौं कहा ॥
इन्दु नील मणि कठुला लसैं । ज्यौं उर रुरकै त्यौं लखि हँसैं ॥२१॥

दिन दिन अतिलडि भई सयानी । मुख ते निसरै मीठी बानी ॥
तात देखि मन उपजै मोद । दौरि जाइ कैं बैठी गोद ॥२२।
बाबा अपने हाथ जिमावैं । लै लै ग्रास कुँवरि सचु पावैं ॥
कबहूं अँगुरि करि जु वतावैं । बाबा वह दिखि बाँनर आवैं ॥२३।
लागैं गरैं कछू मन डरैं । गौरंगी अस कौतुक करैं ॥
बाबा कहै कुँवरि मो॑नी । लाउ उठाइ दूध दोहँनी ॥२४।
जाइ दोहँनी कर सौं गहैं । उठै न तब बाबा तन चहैं ॥
अधिक हँसैं लखि रावलि ईश । रवँकि गोद लैंइँ कर धरिशीश॥२५।
ऐसे लाडत निगमनि थाती । सीतल क्यों न होहि तिन छाती॥
अँगुरी गहैं अजिर मधि डोलैं । बाबा मैया कहि कहि बोलैं ॥२६।
श्रमित होहि तब बैठि जु रहैं । मुहि लै गोद माइ सौं कहैं ॥
बेटी मो लगि दौरी आउ । तू कर गहिं कैं मोहि उठाउ ॥२७।
फूली फूली राधा आवैं । जननी को कर गहि जु उठावैं ॥
करि करि जोर लली उचकावैं । हँसि हँसि कैं कीरति सम्हरावैं ॥२८।
बेटी अब कै बल करि फेरि । श्री दांमा भैयौं ले टेरि ॥
बैठे उठै जोर पुनि करैं । मैया टारी हूँ नहिं टरैं ॥२६।
उठि कै रानी ठाढी भई । बढ़ी कुँवरि मन फूल जु नई ॥
बेटी मोहि उठाइ जु लई । हौं अब तोपै बलि-बलि गई ॥३०।
ऐसे लाड लडावैं नित-नित । रानी सुख भींजी जु रहै चित ॥
अतर्कि सुकृत कीरति लह्यौ । को अस समरथ चाहै कह्यौ ॥३१।

दोहा—ऐसी जा मुख मोहँनी, वचन बिलोवत हीय ।
न्याइ धन्य कीरति भई, जिन अस जाई धीय ॥३२॥
सर्वेस्वरि जाकें उदर, बास कियौ दस मास ।
मुक्ति अचाही हूँ करत, जा पौरी की आस २३

* चौपाई *

भानु पौरि खेलति गौरंग । गोपनि सुता अनेक जु संग ॥
लाड तोतली बातें करैं । मैया कें उर आनन्द भरैं ॥३४॥
अँगुरि गहि रानी लै आई । आँगन माँहिं आंनि बैठाई ॥
अजिर मांहिं ही खेलति रहौ । बाहिर जाँन देव जिनि गहौ ॥३५॥
बाहिर एक जु हाऊ आवै । लरिका लरिकिन कौं डरपावै ॥
पौंरी बाहर पाँव न धरिये । वा हाऊ ते अति मन डरिये ॥३६॥
मैया हाऊ कहत जु काकौं । कैसो है बताइ दै ताकौं ॥
बेटी वाको नाम न कहनौं । वह उतारि लै जैहैं गहनौं ॥३७॥
बाबा बाहि न आवन दै हैं । मौं कौं जाइ बचाइ जु लै हैं ॥
पुनि श्रीदांमा खेलतु आयौ । ताकौं राधा टेरि बुलायौ ॥३८॥
हाऊ कहाँ रहतु है भैया । मो सों कहि गई अबही मैया ॥
अरी बहिन तुहि माइ डरावै । ह्याँ हाऊ नहिं आवन पावै ॥३९॥
मोहूं को डरपावे अब हूँ । मैं हाऊ देख्यौ नहिं कबहूँ ॥
वीर बहिन ऐसे बतराये । दोऊ मिलि मैया पै आये ॥४०॥
झूंठ नाम हाऊ कौ लेहि । हमहि न बाहिर खेलन देहि ॥
बाबा सों करि हैं जु पुकार । हमें डरावति बारम्बार ॥४१॥
बेटा महा धूत श्री दाम । मोहि न करन देहि घर काम ॥
अब यह कूटक नयौ बनायौ । बहिन्यैं हूँ सिखाइ कै लायौ ॥४२॥
इक अरबीली राधा लली । ताहि सिखावत तू विधि भली ॥
फैनी मिश्री दूध मिलाइ । भाजनि भरि धरयौ आगे लाइ ॥४३॥
बहिनि बीर जेमौ इक ठौर । हरैं हरैं मिलि लेहु जु कौर ॥
राधा कौं श्रीदाँम जिमावैं । बिच बिच ग्रास आप मुख लावैं ॥४४॥
राधा कहे तोतली बतियाँ नीरति सुनि सुख उपजै छतियाँ

भैया खेलन लै चलि मोहि गुडिया एक देउँगी तोहि ४५
जौ तू बाहिर खेलन जाइ। मैया को जिनि बात सुनाइ ॥
जाइ कपाट पौरि कै दै है। मो पै तो पै गुसा जु ह्वै है ॥४६।
रानी सुनति जु दै कैं कान। मन ही मन लगै अधिक सिहान॥
लली लला जेंयइ इक साथ। जननी आइ धुवाये हाथ ॥४७।
जल अचवाइ खिलौना दये। बैठि अजिर दोऊ खेलत भये॥
गोपनि सुता आइ भई भेली। नांनाँ विधि के खेल जु खेली ॥४८।
रांनी निकट बोलि सब लई। गोभनि भरि भरि मेवा दँई ॥
बेटी लली खिलावो घर में। जाँन देहु जिनि और बगर में ॥४९।
लली निकसि जब बाहिर जाइ। मोकौं घर आँगन न सुहाइ ॥
बाहिर जान जु अरबी करै। कहौ बात ज्यौं यह मन डरै ॥५०।
काकी लै गोदी बैठावैं। तन उबटन करि कै जु न्हवावैं॥
प्रफुलित वदन मनौ जलजात। दमकत हैं दर्पन से गात ॥५१।
तिनकौं पौंछति काकी कर वर। पुनि पहिरावति सुन्दर अम्बर॥
लघु भूषन पहिराये अंग। अचिरज रूप कुँवरि गौरंग ॥५२।
काकी उर अति भरी हुलास। लै आई कीरति के पास ॥
रज मंडित जु कुँवरि के तन में। देखत भइ खटक मो मन में॥५३।
नव नव लाड जु तुम विस्तरौ। लेहु न्हवाइ न आलस करौ ॥
अति खेलन इहि बांनि जु पड़ी। रहै राति दिन रज में भरी ॥५४।
बेटी सिख तू सुनै न मेरी। देइ उराहनौ काकी तेरी ॥
हौं लेहुँ जबहिं न्हावन नाम। बाहिर भाजै तजि कै धाम ॥५५।
चोटी गुहन मोहि नहिं देही। गुहन लगौं तब हग भरि लेही॥
यह सुनि सकुचि कुँवरि जो भोरी। चितै रही मैया मुख ओरी ॥५६।
हँसि लागी काकी कै गरैं सोभा की उलैंड मनु परैं

बाल बिनोद कुँवरि अस रचै । तात मात पुरजन सुख सचै ॥५७॥
पिढा पटा मैया जु मँगावै । कुँवरि जाइ कर सौं उचकावै ॥
ऐचैं फिरैं अजिर के महियाँ । माइ जाइ गहि लावै बहियाँ ॥५८॥
डिबिया आरैं धरी बतावै । ताहि लैंन कौं राधा धावै ॥
पहुँचै नहिं तब उद्दिम करैं । मूढा खैंचि चरन तर धरैं ॥५९॥
लेइ उतारि पुनि मुरि मुरि देखैं । जननी अपनौं भाग विशेषैं ॥
लाइ माइ कैं हाथ गहावै । रानी रोम रोम सचु पावै ॥६०॥
राधा मेरी भई सयानी । यौं कहि वारि वारि पियौ पानी॥
दृष्टि बचाइ जु छाप बगेलैं । ललीहिं खिलावैं आपुन खेलैं ॥६१॥
मैं मुन्दरी कहुँ डारि जु दई । ढूँढि लाउ हौं बलि बलि गई॥
किलकि किलकि कैं डोलै भगी । तुरत ही हाथ मूँदरी लगी ॥६२॥
अँगुरिनु पहिरैं खसि खसि परैं । पद पटकावैं कौतिक करैं ॥
अधिक गुसा करि पटकि जु दीनी। कीरति हँसि उठाइ कर लीनी॥६३॥
मैया मुँदर भौंडी तेरी । यह तौ बनी न अँगुरी मेरी ॥
जौ तू प्यारी मेरी माइ । या मुँदरी कौं देहु बगाइ ॥६४॥
वह मुँदरी दूजैं कर लई । बोली यौं बगाई मैं दई ॥
रानी कह्यौ कर्यौ तैं मेरौ । बहुत भलो मैं मान्यौ तेरौ ॥६५॥
हँसि कै लई लगाइ जु अंक । चूम्बन लागी वदन मयंक ॥
आनंद सिंधु मगन रहै मात । निसिबासर नहिं जानै जात॥६६॥

दोहा—लाड और आनन्द कौ, भाँन भवन मित नांहि ।
नेह परतु नहि भीर कौ, गोपी आवैं जांहि ॥६७॥
खेलति हरि अहलादिनी, मन्दिर रावल भूप ।
दिन दिन के बिन भित चरित, वृन्दावन हित रूप ६८

जब पिछली रजनी रही, कुँवरि जगी तिहि बार ।
मैया कौं जु जगावही, झटकि झटकि उर हार ॥६६॥
रानी तू निद्रा जु बस, सुनति न मेरे बैंन ।
मोहि कलेऊ दै जु अब, भोर भयौ लखि नैंन ॥७०॥

* चौपाई *

अतिलडि पुनि पुनि ऐसें कहै । सुनि कीरति चुपकी ह्वै रहै ॥
प्रात भयो उठ बैठो माइ । मोहि कलेऊ देहु कराइ ॥७१॥
बेटी अबहिं दरशति राति । तू कहा सोवति में बरराति ॥
इतनी बात मात की सुनि सुनि । गहि अंचल झकझोरति पुनि पुनि॥
सोवत ते बाइस ह्वै जागे । प्रात जनावत बोलन लागे ॥
कुरुकुट नाद उच्च सुर कीयो । तू न सुनत पै मैं सुन लीयो ॥७२॥
अरी मेरी राधा निपट सयानी । हौं वारने गई तो बानी ॥
करुना भीजि उठी तब मैया । लेति लली की भूरि बलैया॥७४॥
दीपक धरयौ चौमुखौ बारि । दधि के भाजन धरे निकारि॥
अपु कर दांतिनि ललिहिं कराई । भरि कटोर गाढी दधि लाई ॥७५॥
पीसी मिश्री तामें डारी । पुनि लाइ दियौ कर सुकुँवारी॥
मैया मुहि तू हाथ जिमाइ । पाछें दधि को मथियौ जाइ॥७६॥
माइ जिमावति गाढी प्रीति । गावति गिरि जस की रस रीति॥
प्रात जानि श्रीदामा जग्यौ । आइ माइ पै ठिनकन लग्यौ॥७७॥
वाहू कौं दांतिनि करवाइ । अपनी ढिंग बैठारयौ लाइ॥
बीर बहिन जेंवति इक ठौर । होडी होडा माँगत कौर ॥७८॥
रानी कहै न ऊधम करौ । हरैं हरैं ग्रास बदन तुम धरौ॥
गाइ खरिक तें दुहि दुहि लाये । काँवरि ग्वाल काँध धरैं आये॥७६॥
धरि धरि जात अजिर के माहीं । इक आवै पुनि इक फिर जांही

भरि गये भवँन भरे पुनि अँगना । देखि देखि राधा भई मगनाँ॥८०॥
मैया पय भाजन हैं कितने । मोहि गनाइ देहु तू तितने ॥
राधा तू अरबीली महा । भाजन गनि कै करि है कहा ॥८१॥
मैया अपने घर की संपति । मुहि न बतावै तू स्यानी अति ॥
केते खरिक जु देस भयानें । किते खरिक है इहि बरसाने॥८२॥
किती गाइ अरु केती बाछी । कहि मोसों मेरी मैया आछी॥
गाँव गाँव गोधन छये घनें । बेटी मोपै गनत न बनें ॥८३॥
गन्यौं चहै जो वछियाँ गाइ । तौ तू बूझि तात सौं जाइ ॥
मैया जो तू भई उदास । तौ हूँ जाउँ तात के पास ॥८४॥
अब तू राधा भई सयानी । मेरी बात जु उलटी मानी ॥
तब हीं आये रावल राइ । राधा लई कण्ठ लपटाइ ॥८५॥
बैठे चौकी आनन्द भरि कैं । लीनी अंक सीस कर धरि कौं॥
कहा कहा भोजन रुचै जु तोकौं । सो सो कहि दै तू अब मोकौं॥८६॥
मुहि उदास तू लागति काहैं । करयौ कलेउ है किधौं ना है॥
बाबा हौं जु उठी ही भोर । माइ जगाई मैं बरजोर ॥८७॥
करयौं कलेऊ तब जु अघाइ । एक बात मैं बूझी माइ ॥
वछियाँ गाइ हमारैं केती । तू गनाइ दै मोकौं तेती ॥८८॥
वह उदास सी परी जु मूझि । कह्यौ अपने बाबा सौं बूझि ॥
सुनि हँसि परे जु रावलि धनी । बेटी निपट सयानी गनी ॥८९॥
पुनि कह्यौ तू भोरी निरधार । गाइ गनत को पावै पार ॥
देस भयानें ठावैं ठाँव । गोधन खरिक छये बहु गाँव ॥९०॥
मंडल सांधि नंदीस्वर रानौं । उनि घर गोधन कितौ बखानौं॥
नौ भ्रातनि की अस प्रभुताई गोधन संख्या करी न जाई ९१

दोहा—इत उत बहु गोधन बढ्यो, इहि ब्रज मंडल मांहि।
गाइनु संख्या को करैं, ग्वालनि की मित नांहिं॥९२॥

* चौपाई *

बाबा मैया साँची कही। मैं यह अरबी यौं ही गही॥
भीतर ते पकवाँन मँगायौ। बाबा ने अपु हाथ जिमायौ॥९३॥
बेटी तुहि को रुचै खिलौंना। बाबा दिहु मँगाइ मृग छौंना॥
पढे शुक सारौ और जु मैंना। मदनी गाइनु को इक टैंना॥९४॥
करि दिहु उनकौ खरिक जु न्यारौ। मोकौं अति हीं लागैं प्यारौ॥
मणि पिंजरा करि देहु अनूप। तिन में पंछी नाना रूप॥९५॥
सब कौ पग पैंजनी गढावौं। सौंनी सुघर खोजि बुलवावौं॥
तात मात मो वीर मल्हावैं। ऐसे पंछी मोकौं भावैं॥९६॥
गुडियनि कौं शिंगार हौं करौं। नीकी विधि मणि चौकी धरौं॥
भैया मो सौं कहि कहि जाइ। तेरी गुड़ियाँ दैउँ वगाइ॥९७॥
ऐसैं कहैं चहूँ दिसि फिरैं। देखन देउँ न तब वह चिरैं॥
पुनि पुनि कहैं जु ऐसे मोकौं। कारी सासु मिलैगी तोकौं॥९८॥
दौर्यौ आवै यौं कहि जाइ। जब तब मोकौं देहि चिराइ॥
हौं भैया के गीत जु गाऊँ। सब सखियनि मिलिकै दुलराऊँ॥९९॥
मेरी गुडिया धरै दुराइ। करौं निहोरो तब देइ लाइ॥
बेटा लाड बहिन कौ करौ। गुडिया अब दुराइ जिनि धरौ॥१००
हौं गुडिया देखन कौं आऊँ। बहु पकवान भेंट कौं लाऊँ॥
तबहीं पट आड़ौ करि लेहि। मोहि न गुडिया देखन देहि॥१०१
मोसौं कहै चोर तू भैया। याकौ पच्छ करै पुनि मैया॥
बहिनि बीर कौ झगरौ सुन्यौ। रावलि पति सुकृत सुख लुन्यौ॥१०२
दृग भरि आये आनन्द वारि। दोऊ मिलइ दीने पुचकारि

बेटा बहिनि लिये मन रहो। बचन कठोर न मुख ते कहौ ॥१०

दोहा–रावलि पति आनन्द भरि, दहलि गये सब गात।
सुता और सुत लाड में, सुख भींजे बतरात ॥१०४॥
श्री राधा मुख जो कह्यौ, सो दियौ भाँन मँगाइ।
पंछी पिंजरा पैंजनी, मृग सुत मदनी गाइ ॥१०५॥
गिरि की कृपा विचारि कैं, गये अथांई राज।
शीतल रवि ज्यौं दिपत हैं, बैठे गोप समाज ॥१०६॥
चहुं दिशि फूले कमल से, पुरजन पुनि सब भ्रात।
रवि कुल विरद बखाँन हीं, जाचक अलि मंडरात ॥१०७॥
जहां तहां के दूत सब, कहत सन्देसे आइ।
मन दै नीके सुनत हैं, लायक रावल राइ ॥१०८॥

* चौपाई *

भोज बिरियाँ भीतर आये। पाई ध्वाई पुनि पटा बिछाये ॥
बैठे आइ सहित परिवार। कीरति रानी परसै थार ॥१०९
छोटी झारी छोटी थारी। श्री दांमा राधा कौं न्यारी ॥
टेरि टेरि वृषभाँनु बुलावैं। खेल मगन वे सुनैं न आवैं ॥११०
बेटी राधा दौरी आउ। भैया श्री दांमा कौं लाउ ॥
राधा श्रवन टेर सुनि परी। आइ दौरि हियें मुद भरी ॥१११
आउ आउ श्री दांमा भैया। तुहि बोलत हैं बाबा मैया ॥
कर पद ध्वाइ जु बैठे पास। भान भरे मन अधिक हुलास ॥११२
एक ग्रास राधा मुख देत। दुतिया ग्रास श्री दांमा लेत ॥
बाबा मोकौं खीर जु प्यारी। देहु भराइ सु मेरी थारी ॥११३
मैया कहै न मोपै मांगै। बाबा जू पै ठिनकन लागै ॥
गाइनु गिनती कही न मो सौं क्यौं अब हौं बोलौंगी तो सौं ११४

तेरे बाबा हूं न बताई। तऊ तोहि परतीति न आई॥
तब बोल्यौ श्री दांमा वीर। राधा थार भराई खीर॥११५
यौं ही मुहि भरि देहौं तोहि। न तरु बहिनि चिरावै मोहि॥
नाना विंजन रानी परसै। जेंवत सबहीं कौ मन सरसै॥११६
भोजन अधिक मानि रुचि कीनौं। अँचवन बहुरि सबनि मिलि लीनौं॥
कीरति कहै बेटी सिख मानि। अब तू मोहि परोसि जु आनि॥११७
तब श्री राधा हौंसति आई। पाक भवन जननी जु पठाई॥
भाजन भरे उठैं न जब हीं। मैया कौं जु पुकारी तब हीं॥११८
मोहि परोसनि जुक्ति बताइ। भारो थार सकौं न उठाइ॥
भर जु कटोरा थोरौ लाइ। राधा मोकौं तू जु जिमाइ॥११९
कबहूँ जाइ माइ लै करै। कबहूँ कर भाजन खसि परै॥
लै लै पाक जु पाक मँगावैं। रानी मन कौतिक अति भावैं॥१२०
ज्यौं ज्यौं मैया करै बड़ाई। फूली कुँवरि न अंग समाई॥
श्रमित होहि तब बैठि जु रहै। मैया बहुरि चौंप दै कहै॥१२१
लली मोहि तू नाच नचावै। अबकैं क्यौं न कढ़ी लै आवै॥
परसि गई जु कटोरी भरि कैं। पुनि सिखिरिनि बेला भरि धरिकै॥१२२
कबहूँ लै जु अथानैं धावैं। बहुरि मुरब्बा खँडरव लावैं॥
तास ओढ़नी शिर ते खसी। मैया देखि कुँवरि दिशि हँसी॥१२३
दोऊ हाथ दही सौं सनै। सीस ओढ़नी धरत न बनै॥
हँसि दौरी रम्भा भौजाई। कुँवरि सीस ओढ़नी उढ़ाई॥१२४
भोजन करि अँचयौ जल रानी। महा भाग्य की महिमाँ मानी॥
राधा के कर चरन धुवाइ। लीनी आप अंक बैठाइ॥१२५
बेटी तैं मुहि परसि जिमायौ। बड़ो भाग्य मैं आज मनायौ॥
श्रमित भई मेरी चंपक बरनी। भांति २ मुहि सुखित जु करनी १२६

जूथनि मिलि अलि खेलन आई। कीरति उठि कैं सवहिं जिमाईं ॥
बाबा जू कें अजिर मँझार। बैठी सबै चक्र आकार ॥१२७
राधा सुन्दरि सब मधि लसै। खेल उमाहै मृदु मृदु हँसै ॥
लघु आभूषन राजैं अंग। सब तन अम्बर नाना रंग ॥१२८

दोहा—मधि शोभा कौ कलप तरु, सींच्यौ जल अनुराग ॥
भान अजिर अभिराम मनु, खिल्यौ रूप कौ बाग ॥१२९॥

* चौपाई *

कुँवरि खेल नाना विस्तरै। तात भवन में कौतिक करै ॥
चन्द कला सीं सखी प्रकास। राजति अतिलडि कीरति पास॥१३०
राधा नाम सु मैना पढ़ै। अच्छर सुद्ध वदन तिहि कढ़ै ॥
इक तोता मोहन उच्चरें। बजति पैजनी आँगन विचरैं ॥१३१
वह जु नन्दपुर तें है आयौ। नन्द बहुत हित मानि पठायौ ॥
कबहूँ कुँवरि चरण में लोटै। कबहूँ सखियन के मन पोटै ॥१३२
मैंना निपट कुँवरि की अंगी। राधा कहै कहै गौरंगी।
यह मैंना अति ही गुन ग्रामा। अपने करनि चुगावति स्यामा ॥१३३
मंगल भान भवन में सच्यौ। गुडिया गुडरा ब्याह जु रच्यौ।
मैया सौं कहि आई लली। ब्याह सौंज सजि दै विधि भली॥१३४

दोहा—कीरति मन हरषित भई, आगम सगुन मनाइ।
इहि आंगन होइँ बेग हीं, सांचे फेरे आइ ॥१३५॥
गुडरा राधा कुँवर कौ, रच्यौ ब्याह विस्तार।
गुडिया ललिता लली की, यह कियौ सबनि विचार ॥१३६॥
ललिता चम्पा पै गई, मन दै सुनौ जु माइ।
सांमा गुडिया व्याह की, सब हीं देहु मँगाइ ॥१३७॥

* चौपाई *

इत घोड़ी उत लाड़ी गावैं। सजनीं सब हीं न्यौतौ लावैं॥
इत उत सखी बाँटि कै लईं। सुखहि बढावन दुहुँ दिशि भईं॥१३८
हँसि-हँसि रीति भाँति सब करैं। आई लगन लै जु कर धरैं॥
कोऊ लगाइत कोऊ सिरदार। करन लगी सब मंगलचार॥१३६
कोऊ भई दूलह और बराती। कोऊ दुलहिनि की ओर घरैती॥
मैया घर ते पाक जु लाई। मंडप तर ज्यौंनार कराई॥१४०
फूलीं फिरैं व्याह छिन आयौ। ललिता सुन्दर मंडफ छायौ॥
रचना करी बितान तनायो। सजन आगमन अति मन भायौ॥१४१
श्री राधा बरात सजि लाई। खेत रीति ललिता जु कराई॥
बारौठी विधि करी जु ऐसे। दियौ दाइजौ रस रह्यौ जैसे॥१४२
दै जनवासौ पुनि बैठाये। त्यारी करि जेंवन जु बुलाये॥
पाइ धोइ मनुहारि जु करी। राधा ललिता अति मुद भरी॥१४३

दोहा—मंडफ तर जैंवन लगीं, परसैं सबही साज।
सोभा दृग देखैं बनैं, ऐसो बन्यो समाज॥१४४॥

* चौपाई *

सादर परसति गह मह होति। मंडफ बाढ़ी शोभा जोति॥
लेहुँ लेहुँ तुंग बिद्या भाषैं। चित्रा बांतनि अति रंग राषैं॥१४५
सखी सुदेवी नीकें परसैं। मुख मृदु हँसैं हियें सुख सरसैं॥
इन्दुलेखा रंगदेवी संग। कुँवरि साथ जेंवति भर रंग॥१४६
चंपक लता विसाखा कोद। भोजन करति बढ़ावति मोद॥
औरौं सखी वृन्द बहु लार। जेंवति अपनी रुचि अनुसार॥१४७
ग्रास बदलनौ इत उत कर्यौ। सुख सनेह सबहिनु लखि पर्यौ॥
करि अँचवन पुनि बीरीं लईं। सबहिं कुँवरि संग मेलीं भईं॥१४८
करि रस रीति भाँवरी पारि। पुनि कियौ पालिकचार विचारि॥

कीरति सुखित भई जु निहारि । कौतिक आई सब पुर नारि ॥१४६
राधा खेल अलौकिक महा । लगै लोक वत कहिये कहा ॥
नये-नये खेल करें जु उदोत । लखि आनन्द सबनि मन होत ॥१५०
बासर बीत्यौ रजनी भई । कीरति बोलि कुँवरि ढिग लई ॥
तो मन बहुत खेल में रहै । मोसौं कबहुँ न बातें कहै ॥१५१
तात संग अब व्यारू कीजै । मिश्रित सिता धापि पय पीजै ॥
भाँन लई पुचकारि जु अंक । मनहु कनक गिरि उदित मयंक ॥१५२
कुँवरि जिमावत जेंवत आपु । राधा मुख मृदु सुनत अलापु ॥
बाबा मेरौ भ्रात न आयौ । पहिलें तुम क्यों मोहि जिमायौ ॥१५३
राधा की सुनि कै हित बानी । भये मन मुदित राइ पुनि रानी ॥
सुनि बेटी वह तोसौं लरै । तू क्यौं पच्छ वीर की करै ॥१५४
लरै तऊ मन होइ न उदास । मोहि वीर बिनु रुचै न ग्रास ॥
सुनि अतिलडि के मीठे बैंना । तात सजल ह्वै आये नैंना ॥१५५
खेलत तैं श्री दांमा आयौ । कर पद ध्वाइ ताहि बैठायौ ॥
बीर बहिनि मिलि भोजन करैं । तात मात लखि आनन्द भरैं ॥१५६

दोहा—पय अधवट मिश्री परी, दुहुँनि धापि कियौ पान ॥
तन मन अति हीं सुखित ह्वै, जेंवत श्री वृषभान ॥१५७॥
मैया पलँग बिछाइ कैं, मोहि देहु पौढाइ ।
बाबा हूँ अब जेंइ चुके, तू जिनि गहरु लगाइ ॥१५८॥

* चौपाई *

रावल राइ आचवँन लियौ । बीरी खाइ सैंन पुनि कियो ॥
कीरति जेंयौ सबनि जिमाइ । कुँवरिहिं पलिका दियौ बिछाइ ॥१५९
मैया मोसौं कहि जु कहानी । अति रोचक मेरे मन मानी ॥
बूढी एक पौंरि पै आई । मधुर मधुर मोसौं बतराई ॥१६०

उनि मुहि कह्यौ रावल पति सुता। हौं सुनि भई जु अचरज जुता ॥
रावलपति कह्यौ तात सु नाम । रावलि कोऊ देस कै ग्राम ॥१६१
सब कोऊ जु नाम यह लेंहि । मुहि किनि कथा सुनाइ सु देहि ॥
मैया हिय-जिय अधिक सिहानी । जानी बेटी निपट सयानी ॥१६२
बेटी भानु सुता के तट में । रावलि गोकुल बसत निकट में॥
रावलि है तो तात सु ग्राम । याते है रावल पति नाम ॥१६३
गोकुल है दूजी रजधानी । भान सुता तट परम रवानी ॥
भान सुता दूजी को कहिये । यह जु मोहि समुझायो चहियै ॥१६४
भान सुता अनुजा यमराज । यमुना सब तीरथ सिरताज ॥
अरी भली मेरी कीरति माइ । यमुना रावल मोहि दिखाइ ॥१६५
अरु तैं गोकुल निकट बतायौ । ताकौ भेद न कहि समुझायौ ॥
यह नन्द ग्राम निकट ही राजै । तहाँ जु राजा नन्द विराजै ॥१६६
तिनकौ पहिलें राज ठिकानौं । तातैं कहिये गोकुल रानौं ॥
वे गोकुलपति यह रावलपति । सुनि राधा यौं कहति जु कीरति॥१६७
पुनि बूझन लागी अतिलडी । कह रजधानी काकी बड़ी ॥
इत उत गोधन बिनु जु प्रमान । तातैं दरसत एक समान ॥१६८
इत तौ मैया तू है रानी । उनि घर रानी कौन बखानी ॥
नाम जसोदा जगु जस जाकौ । नीकौ शील सुभाव जु ताकौ ॥१६९
उनि कौ मेरौ परम सनेह । ह्याँ ह्वाँ गनति एक हम येह ॥
उनकै पुत्र जनम जब भयौ । घर-घर मंगल बाढ्यौ नयौ ॥१७०
हौं तब दैंन बधाई गई । अधिक अधीन यशोमति भई ॥
गर्भ समय ही बदी सगाई । विधि कीनीं त्यौंही मन भाई ॥१७१
जब भई तेरे जनम बधाई । तब ब्रज रानी चाव सु लाई ॥
बहुत भाँति करिकैं मनुहारि लई सगाई गोद पसारि ।१७२

गोकुलपति ने बारम्बार । मन क्रम बच यह कियौ विचार॥
रावलपति मो मान जु राखौ । हेत सगाई मुख हाँ भाखौ ॥१७३
ज्यौं वांछित है सब ब्रज लोग । त्यौंही विधि जु बनायौ जोग ॥
तुम सज्जन लायक ब्रज एक । कहिबौ बनै न बार अनेक ॥१७४
ब्रजरानी ब्रजपति हित मानी । कीनी हाँ घरु वरु सम जानी ॥
पलना में दोऊ पौढाये । भई सगाई मंगल गाये ॥१७५
बहु न्यौछावरि यसुमति करीं । सब हिनु मुख्य जै धुनि उच्चरीं ॥
गारी गाई नौबत बाजी । ब्रजजन सबही देखि भये राजी॥१७६
अब जु ब्याह दिन आये लली । साँमाँ तात सजी विधि भली ॥
सुनि भई मुदित सकुचि कछु गई । निद्रा बस जु अतिलडि भई ॥१७७

दोहा—बढै मनोरथ माइ मन, निरषन चरित अनूप ।
नित गौरंगी तन बढै, तन संग बाढै रूप ॥१७८॥
बाल चरित्र अमी मनौं, पीवत धापैं नाहिं ।
भोरी बतियां लाड की, श्रवननि सुनति मिठाहिं॥१७९॥
राधा मूरति मोहनी, करैं सु लागै नीक ।
वृन्दावन हित रूप रचि, विधना काढी लीक ॥१८०॥
रोम रोम प्रति होंहिं जो, रसना करन प्रसंश ।
तदपि न चरित कहैं परैं, स्वामिनी श्रीहरिवंश ॥१८१॥
कृष्ण रुचै दधि चोरिबौ, राधा रुचिकर माइ ।
अस प्रिय तक्र जु घोष कौ, सक्र देखि पछिताहिं ॥१८२॥
लली लियौ दधि मचलि कैं,लाल बन्यो दधि चोर।
मिष्ट जु लाग्यौ अमी तैं, रस स्वादी दुहुँ ओर ॥१८३॥

* चौपाई *

कुँवरि मचलिबौ बरनौं अबै । सुनि लिहु ताकौ ब्योरौ सबै

दही बिना न कलेऊ करें। प्रात जानि कै जगि जगि परै ॥१८४
रजनी देखि सोइ पुनि जाइ। ऐसे कौतिक देखै माइ ॥
रानी सुखित होइ मन महियां। उर लगाइ लेइ गहि२ बहियां॥१८५
सुख में रजनी गई बिहाई। माँगी ग्वाल दोहँनी आई ॥
जागै सब ही दासी दास। गो दोहन को हियें हुलास ॥१८६
खरिकनि चले अलंकृत ह्वै कैं। अपने अपनै साजनि लैकैं ॥
सुनि कैं श्रवन चिरैयन सोर। कीरति जु उठि बैठीं भोर ॥१८७
नित कृत अपनौ सुविधि जु कियौ। पुनि ग्रह के कारज मन दियौ ॥
आई दही बिलोवन हारी। रई मथनियां सबहि निकारीं ॥१८८
जहाँ तहाँ दही घमरकौ राजै। मन अभिराम मनौ घन गाजै ॥
पुनी कीरति दधि मथन जु लगी। सुनि कै कुँवरि अतिलडी जगी॥१८९
लली लला सद माखन चाहैं। आपु मथैं इहिं हिय जु उमा है ॥
यह उत्साह रह्यौ हिय बाढि। थांरी लैऊँ बेगि दैं काढि ॥१९०
ठिनकन लगी लली अरबीली। जननी जनक लाड गरबीली ॥
मचलि आइ कै नैती गही। मैया देषि वदन तन रही ॥१९१
जननी पहिल जिमाइ जु मोहि। तब देऊँ दही बिलोवन तोहि ॥
बेटी तब लग तू मुख धोइ। जब लग लेउँ हौं दही बिलोइ ॥१९२
सद माखन बिनु तू नहिं खाइ। नेंक बिरमि काहे अकुलाइ ॥
कबहूँ बात समुझि नहिं कहै। दिन दिन अधिक भुराइ गहै ॥१९३
मैया तू बोलति अटपटी। मोहि भूख लागी चटपटी ॥
तोहि भूख दोपहर को लगै। मीठी बातें कहि मोहि ठगै ॥१९४
बेटी निपट अनौखी दीखी। लरिबे की बातें कहाँ सीखी ॥
मेरी अतिलडि प्रान समानि। माखन काढि लेंन दै मानि ॥१९५
बहुरि लडकि अँचल गहि लीनौं। कीरति दधि मथिबौ तजि दीनौं

अपु कर रानी बदन धुवायौ । दधि में सिता मिलाइ जिमायौ ॥१९६
पय कौं मथि जु पिवायौ घैया । दियो कराइ कलेऊ मैया ॥
तब मन हरषी वारिज मुखी । जननी निरषि भई मन सुखी ॥१९७
बहुरि लाड करि घेवर दियौ । दही बिलोवन पुनि मन कियौ ॥
लला अजिर में खेलति डोलै । आउ आउ कहि बनचर बोलै ॥१९८
आवत देख्यौ तब हीं भगी । घेवर डारि माइ उर लगी ॥
वह दिखि काटन आयौ धाइ । मोकौं लै अँचल जु छिपाइ ॥१९९
सँकति महा धीर नहिं धरैं । बड़ी बड़ी मुख स्वास जु भरैं ॥
डारि डारि लडुवा जु गिधाये । अब ये दिखि घर भीतर आये ॥२००
मेरो कह्यौ न करै अरबीली । बेटी तेरी बानि हठीली ॥
बारौं मरकट घुरकी दई । मेरी राधा अति डरि गई ॥२०१
उर लगि रहीं कँपित हैं गात । मुख ते निसरति नांहि न बात॥
प्यारी आँगन खेलौ जाइ । अब मैं बनचर दिये भगाइ ॥२०२
गुनी बुलाऊँ लेहुँ परीक्षा । तो तन बेगि कराऊँ रक्षा ॥
दौरीं जाह लली की धाइ । कोऊ इक जोगी लाउ बुलाइ ॥२०३
हाथ दिवाइ बहुत देउँ ताहि । जो कोउ कुँवरि भली कर जाहि॥
इक जोगी नित फेरी आवै । दरसन कौ समयौ नहिं पावै ॥२०४
पौरी बोल्यो मो तिहिं बार । जागै अलख राज दरबार ॥
आदर दै कै भीतर लाई । रानी देखत अधिक सिहाई ॥२०५
सीस नाइ रानी कहे बचना । जिनमें बहुत दया की रचना ॥
तुम दयाल मोपै सुख ढरौ । मन दै जतन कुँवरि कौ करौ ॥२०६
माई मेरे आगें आवौ । अपनी गोदी में बैठावौ ॥
डरी होय तौ फेरौं हाथ । भली करैगो मेरो नाथ ॥२०७
गुरु प्रताप अब अलख सु जागै । सब बलाय या घर की भागै ॥

बसन ढांपि कै कुँवरिहिं लाई । मैया को रावल समुझाई ॥२०८
यौं तौ छाया दृष्टि न आवै ।जब लगि कुँवरि न बदन दिखावै ॥
लली भली हौं करन जु आयौ । तै उलटौ मो तें डरपायौ ॥२०६
नाथ सुखित तुम आयें भई । तुम क्यों ऐसी मन धरि लई ॥
बसन खोलि कैं बदन दिखायौ । रावल अपनो हाथ फिरायौ ॥२१०
कर फेरत मुख लेत जँभाइ । अब मैं छाया दूरि भगाई ॥
चुटकी दै पुनि अलख जगावै । लै लै अंग भभूति लगावै ॥२११
कुँवरि चरन मो सीस धराई । तेरी सुता न बहुरि डराइ ॥
तुम दरसत जोगिन के राइ । क्यों मो सुता धरै सिर पाइ ॥२११
जोग जुगति जोगी ही जानै । माई तू जिनि डर मन मानै ॥
जो मोसौं तू हठ जु करैगी । तौ अब हीं तुव सुता डरैगी ॥२१३
लै कै चरन धरायौ सीस । रावल दीनी गहकि असीस ॥
तुव अति लडि होइ अस परताप । अलख पुरुष हू जपि हैं जाप ॥२१४

दोहा—रानी अब लगहूं जु तैं, मेरी करी न चिन्हार ।
गंडा बांधि गयौ गरै, राधा जनम सु बार ॥२१५॥
देहु कुँवरि की ओढनी, थार भरयौ पकवाँन ।
अतिलड़ि हाथ दिवाइयै, हौं अब करौं पयान ॥२१६॥
नाथ हाथ लच्छन परखि, कहिये बचन बिचारि ।
मेरी अतिलडि राधिका, होइ सुख बिलसन हारि ॥२१७॥
पूरब सुख बिलसे घनें, अब सुख बिलसन हार ।
हौं अज्ञा जैसे करौं, सो कीजै उपचार ॥२१८॥
भलौ नन्द घर बालका, भागवंत गुनवंत ।
तुम संकौ जिनि देखि सुनि, रचि हैं खेल अनन्त ॥२१६॥
सुता सगाई कीजियौ, नन्द महर घर जाइ

सुख सुहाग संपति बढ़ै, कहै जातु समुझाइ ।
सुता सुलच्छन तुम जनी, याकौ अचल सुहाग ॥२
रानी तुम अति कीजियौ, अतिलडि सौं अनुराग ॥२
बासी उत्राखंड कौ, नाथ पठायौ प्रेरि ।
कुँवरि ब्याह जब होहिगौ, तब आऊँगौ फेरि ॥२
कीरति नवि चरननि लगीं, वांछित दियौ मँगाइ ।
नाथ मगन निर्तन लगे, आनन्द उर न समाइ ॥२
कुँवरि जरी पट ओढनी, नाथहिं दई उढ़ाइ ।
मेवा अरु पकवान सौं, खप्पर दियौ भराइ ॥२
माता अब सुनि आसिका, नाथ कह्यौ समुझाइ ।
नर देवन में जो बली, पौंरि नवैं इहि आइ ॥२
फेरि लेत जु अजिर में, कीनौं सींगी नाद ।
नाथ विदा ह्वै के चले, उर बाढयौ अहलाद ॥२
रावल पूरौ सब गुननि, धारैं भस्म शरीर ।
राजत चन्द लिलाट जिहि, झरतु जटन ते नीर ॥२
भाग्य बली मेरी राधिका, जापै फेर्यो हाथ ।
छाया दृष्टि बलाय सब, जोगी लै गयो साथ ॥२
गोपनि सौं ऐसे कहति, रानी रावलि भूप ।
मो चाह्यौ सब होतु है, अतिलडि भाग अनूप ॥२२

* चौपाई *

रावल लाग्यौ अपनी बाट । कीरति तन मन मुदित निराट ॥
राधा कुँवरि सुखित अब भई । मेरे मन की शंका गई ॥२३
राजकुँवांरि सु दिन दिन बढै । त्यौं छबि जोति अँग २ कढै ॥
तात मात मन बढै उमाह । आये निकट सुता दिन ब्याह ॥२

सुख सुहाग संपति बढ़ै, कहै जातु समुझाइ ॥२२०
सुता सुलच्छन तुम जनी, याकौ अचल सुहाग।
रानी तुम अति कीजियौ, अतिलडि सौं अनुराग ॥२२१॥
बासी उत्राखंड कौ, नाथ पठायौ प्रेरि।
कुँवरि ब्याह जब होहिगौ, तब आऊँगौ फेरि ॥२२२॥
कीरति नवि चरननि लगीं, वांछित दियौ मँगाइ।
नाथ मगन निर्तन लगे, आनन्द उर न समाइ ॥२२३॥
कुँवरि जरी पट ओढनी, नाथहिं दई उढ़ाइ।
मेवा अरु पकवान सौं, खप्पर दियौ भराइ ॥२२४॥
माता अब सुनि आसिका, नाथ कह्यो समुझाइ।
नर देवन में जो बली, पौंरि नवैं इहि आइ ॥२२५॥
फेरि लेत जु अजिर में, कीनौं सींगी नाद।
नाथ बिदा ह्वै के चले, उर बाढ्यौ अहलाद ॥२२६॥
रावल पूरौ सब गुननि, धारैं भस्म शरीर।
राजत चन्द लिलाट जिहि, भरतु जटन ते नीर ॥२२७॥
भाग्य बली मेरी राधिका, जापै फेर्यो हाथ।
छाया दृष्टि बलाय सब, जोगी लै गयो साथ ॥२२८॥
गोपनि सौं ऐसे कहति, रानी रावलि भूप।
मो चाह्यौ सब होतु है, अतिलडि भाग अनूप ॥२२९॥

* चौपाई *

रावल लाग्यौ अपनी बाट। कीरति तन मन मुदित निराट॥
राधा कुँवरि सुखित अब भई। मेरे मन की शंका गई ॥२३०॥
राजकुँवांरि सु दिन दिन बढै। त्यौं छबि जोति अँग २ कढै॥
तात मात मन बढै उमाह। आये निकट सुता दिन ब्याह ॥२३१

श्रीराधा अति मिठ बोलनी । पुर उपवन बन खेलन डोलनि ॥
कबहूँ सखिन संग लै भीर । खेलन जाँइ सरोवर तीर ॥२३२
अति सुन्दर जु मृतिका लाइ । सुहथ खिलौना रचित बनाइ ॥
सदन बनावैं न्यारे न्यारे । तिन मै धरैं खिलौना प्यारे ॥२३३
निज ग्रह के सब कारज करैं । खेल मगन कौतिक विस्तरैं ॥
सब कौं सब जु बाँइनों देंहिं । सब पै तें सब सादर लेंइ ॥२३४
टोलनि टोलनि मँगल गावैं । कुँवरिहिं नाना खेल खिलावैं ॥
कबहूँ झूलहिं गहि गहि तरवर । कबहूं केलि करैं जल सरवर ॥२३५
कबहूं लैं जु मीन गति तरैं । जल में महा कुलाहल करैं ॥
कबहूं जल मुख पर लै सींचैं । कबहूं पार्छें रहि दृग मीचैं ॥२३६
कबहूं तोरि जु कमल बगेलैं । तकि तकि तन मारैं यौं खेलैं ॥
बुडकी लै जल हीं जल धावैं । भरैं चुहुंटियां अंक लगावैं ॥२३७
पुनि जल पैठैं उछरैं ऐसे । मीन करत कौतूहल जैसे ॥
तन अँगोछि पहिरैं जु निचोल । मिलैं जु अपने अपने टोल ॥२३८
जब भोजन की बिरियां जानैं । तात भवन कौं करैं पयानैं ॥
गोप घरनि मनु कृपा सदेह । बिटियनि कैं भींजी रहैं नेह ॥२३९

दोहा—प्रान उठत हैं लैंन कौं, जबहिं परत हैं दृष्टि ।
यातैं व्रज जानी परति, सबहिं अलौकिक श्रिष्टि ॥२४०॥
लाड अपूरब नित नयौ, नित जु अपूरब प्रीति ।
विधिहूं ध्यान न आवहिं, व्रज गरुबी रस रीति ॥२४१॥
श्रीराधा उर भरि लई, जननी मोद मनाइ ।
बीत गये मोहि कलप से, दूरि खेलन जिनि जाइ ॥२४२॥
सुहथ जिमाइ प्रीति सौं, रही बदन तन हेरि ॥
बेटी खेलौ ग्रह अजिर, दूरि जाहु जिनि फेरि २४३

मैया मोकों लै गई, साथिनि संग लगाइ।
मेरी उन सौं प्रीति अति, न्यारे रह्यो न जाइ ॥२४४॥
परचि रहीं तो लाड सौं, खेलत मो ढिंग आइ।
मेरे वे सब प्रान सम, सुनि लै कीरति माइ ॥२४५॥
श्रीराधा के वचन सुनि, मैया भरि लिये नैंन।
बारी मेरी कुलमणी, सीखी मीठे बैंन ॥२४६॥
कनक तनी कीरति सुता, पुर वर्द्धनि आनन्द।
वृन्दावन हित रूप अस, निकर लज्यानि चन्द ॥२४७॥
पावस रितु जु सुहावनी, बोलत केकी कीर।
देहु गढाइ हिंडोरना, मेरे प्यारे बीर ॥२४८॥
हरित भूमि पुनि द्रुम लता, सागर भरे गंभीर।
साँवन मन भावन जु यह, माइ रँगावौ चीर ॥२४९॥
श्रीराधा बानी सुनत, मैया मुदित न थोर।
रोप्यौ मानिक चौक में, रतत जटित हिंडोर ॥२५०॥
सावन मासनि मुकटमणि, राधा कौ त्यौहार।
अगनित गोपिन की सुता, झूलति जाकें लार ॥२५१॥

* चौपाई *

बेटी प्यारौ सावन मास। आयौ भरी जु हियें हुलास ॥
झूलति भान भवन भई भीर। रच्यौ हिंडौरौ प्यारे वीर ॥२५२
छवि हिंडोर न आवत भनी। जामें झूलति कँचन तनी ॥
श्रीराधा मन आनन्द जितौ। इक रसना हौं वरनौं कितौ ॥२५३
काकी ताई कीरति मैया। आइ झुलावत लेति बलैया ॥
लघु भूषण जगमगि रहे अंग। सोभित सखी वृन्द जिहि संग ॥२५४
बोलनि महा लाड की भरी। मुख विधु मनों सुधा झर परी ॥

झोटा दै जा सोदर मोहि। नीकें हौं जु मल्हाऊँ तोहि ॥२५५
नेरे आइ झुलावौ माइ। हौं गाऊँ त्यौं तू हूँ गाइ ॥
पुनि सुनि लै मैया चित लाइ। बीर मल्हावन मोहि सिखाइ ॥२५६
तू लै अपने सोदर नाम। त्यौं हौं दुलराऊँ श्रीदाम।
तू अपने जु तात कौं गाइ। हौं जु मल्हाऊँ रावलि राइ ॥२५७
तू कहि अपु जननी अनुराग। हौं गाऊँ कीरति बड़भाग ॥
ऐसी बात कही अतिलडी। सुनि सुनि हँसी जु छोटी बड़ी ॥२५८
कहौं हिंडोर जु सोभा कहा। भान भवन जगमगि रह्यौ महा ॥
रतन जडाये रचि रचि पांति। बढ़े जोति मिलि रवि ससि कांति॥२५९
डोरी गुही पाट मखतूल। रच्यौ वितान जु सुरंग दुकूल ॥
वीर रँगाई यह चूंनरी। ललिता निरखि आइ तू नरी ॥२६०
बरनौं कहा बधू कौ हेतु। हँसि हँसि पुनि २ झोंटा देतु ॥
कीरति सम न माइ जग और। पुर आरज बनितनि सिरमौर ॥२६१
मावन लाड लडावन काज। सजे अपूरब सब ही साज ॥
पिता भयाने देम जु धनी। संपति अमित परति नहिं भनी॥२६२
मेरे लाड चाय हिय सरसें। कृपा जलद ज्यौं नित सुख बरसें ॥
मो हित रच्यौ अजिर हिंडोर। ब्रज जन सबहिन को चितचोर ॥२६३
आई अब सावन सुदि तीज। उर उपजावन आनन्द बीज ॥
कीरति माइ सिंधौरा कीजै। मेरी सखिनु ओढनी दीजै ॥२६४
नाना बिधि के घृत पक सचौ। मेरे हाथनि मँहिदी रचौ ॥
नव नव भूषण अम्बर लैहौं। तब हौं तीज खेलन हौं जैहौं ॥२६५
मोहि कहत सब नृप की लली। तातें करि सिंगार विधि भली ॥
जे जे करत जु मोसों नेहु। तिनहूं कौं पट भूषन देहु ॥२६६
तब तुम रानी सोभा पावौ। मेरी सब साथिनि पहिरावौ

मो संग चलौ सखी मिलि सगरी हो लागौ तिनमे छवि अगरी ..२६७

दोहा–श्रीराधा विधु वदन तें, निसरत अमृत बैंन।
छाती माइ सिराति सुनि, मुख लखि शीतल नैंन ॥२६८॥
प्रात जाइकै झूलिहौं, प्रेम सरोवर तीर ॥
मोकौं सुविधि झुलावहीं, चलि श्रीदामा वीर ॥२६९॥
कुँवरि करनि मँहिदी रची, कीने पाक अनेक।
सुता सुविधि दुलरावने, कीरति लायक एक ॥२७०॥
ललितादिक सब सखिनु कौं, पट आभूषण देति।
नीकें लली झुलाइयौ, सबनि वारनैं लेति ॥२७१॥

* चौपाई *

मिंहदी रची सबनि के हाथ। बेटी सब मिलि जेंऔ साथ ॥
राधा मेरी चम्पक बरनी। सबहिनु के उर आनन्द भरनी॥२७२
ब्रज में तीज कुशल सौं आई। मैं मन मानी अधिक बधाई ॥
तुम सब मेरें प्रान समानि। मिलि खेलियौ सीख मो मानि ॥२७३
उत्सव महा तीज हरियारी। सब मन बाढ्यौ आनन्द भारी॥
यौं समझाइ बिदा पुनि दीनी। आपुन रानी सैन जु कीनी ॥२७४
प्रात हीं कीरति कुँवरि जगाई। करि उबटन नीके जु न्हवाई ॥
रानी सुहथ सिंगारति भई। लै बलाइ चकित रह गई ॥२७५
दृष्टि भार संका कछु भई। देखि न सकति अँक भरि लई ॥
प्रथम हीं राई लौंन उतारति। पुनि छवि पर त्रिन तोरि जु डारति॥२७६
सजि सजि आई सब जु सहेली। गावति मंगल भई जु भेली ॥
तन साजा मन अधिक उमाह। तीज खेल कौ अति उतसाह ॥२७७
अतिलडि आगें लै सब चलीं। सोभित करीं भानु पुर गलीं ॥
किधौं अद्भुत सागर अनुराग।किधौं चल्यौ पगनि रूप कौ बाग।२७८

किधौं अद्भुत सिसु तडित जु एह। किधौं रूप घन अवनि सदेह॥
अस बानिक सौं गवनी लली। जो देखियति तीज सुख फली॥२७९
प्रेम सरोवर तट अति कमनी। मनमथ कौ मन मोहनि अवनी॥
तहाँ हिंडोरौ निर्मित कियौ। मनो अवनि चेतन्नि जु हियौ॥२८०
बनीं ललित कदम्बनि की पांति। लता लपट रहीं अद्भुत भांति॥
सरवर मणिनु खचित चहुँ ओर। कोकिल कीर नदित जहां मोर॥२८१
षट पद गुंजत सौरभ लोभ। तरु बेलीनु बढावत सोभ।
निर्मल नीर भरयौ गँभीर। ठाढी भई कुँवरि तिहिं तीर॥२८२
पावस रितु जु हरति भई मही। ताकी सोभा पड़त न कही॥
सजल घननि की उमड़ी सैंनी। देखि मुदित बाला मृग नैंनी॥२८३
झूलैं फूलैं तरवर तट में। दमकत गात रंगीले पट में॥
कौंधि दामिनी घन दुरि जाति। देखि कुँवरि छबि मनहु लजाति॥२८४
रमकैं झमकैं छबि सों झूलैं। परसि परसि द्रुम डारिनु फूलैं॥
कोऊ झुलवति हैं निकट जु रहिकैं। कोऊ रिझवति हैं बातें कहिकैं॥२८५
सब मिलि करैं रँगीलो गान। मदन मरम मनु बेधति बान॥
ललित वदन पर श्रम कन दिपैं। ससि मंडल मनु उडुगन छिपैं॥२८६
तन फहरात कुसुँभि चीर। अँग २ उझलति सोभा भीर॥
दुति धर वारौं वदन विलोकि। सखिनु दृष्टि राखी जिनि रोकि॥२८७
झूलैं अप अपनें ओसरें। उतरि भट्ट यौं कहिं हँसि परें॥
इक पुनि झूलन कौं अरबरें। श्री राधा सौं बिनती करैं॥२८८
अरी बहिनी तू राज कुँवारि। रंचक हम हूं ओर निहारि॥
मुहि झूलन अभिलाषा बढी। तुहि बूझे बिनु अजहूं न चढी॥२८९
ललिता तुम जु सम्हारें रहौ। नहिं झूलै सु मोहि किन कहौ॥
तुम संग झूलन कौं जु उमाह। पुनि २ दिखियति सब मन चाह २९०

एक झूलि उतरैं इक चढैं। औसर तकैं एक मन बढैं ॥
तीज हरियारी आनन्द भरी। झूलन की परवी सी परी ॥२६१
इक राधा के निकट जु आइ। बोलैं अपनो प्यार जनाइ ॥
अबकैं मुहि अपु निकट जु लेहु। मन की साध पुजै सब देहु ॥२६२
आऊँ परसि उच्च द्रुम डार। झोंटा लै ह्वै मन अनुसार ॥
झूलैं करैं परम कौतूह। जहां वरषै आनन्द समूह ॥२६३
कीरति पाक डला पठवाये। ललिता ने सम्हराइ धराये ॥
दधि माखन के माट मथांनी। दै पठये रावलिपति रांनी ॥२६४
सवनि आइ प्यारी सौं कही। भूख नाहि परती अव सही ॥
पनवारे किये पात पलास। सब मन जैंवन कौ जु हुलास ॥२६५
पंकति करिकैं सव वैठारीं। कोऊ भई सुघर परोसन हारीं॥
कोऊ भरि पाकनि लैलै आवैं। कोऊ भई ठाढी जुक्त बतावैं ॥२६६

दोहा—चक्राकृति बैठीं सबै, मध्य कुँवरि गौरंग।
सोभा मंडल ससि उदित, पूरन कला जु संग ॥२६७॥
सब जेंवति रुचि मानिकै, नाना विधि पकवांन।
दधि माखन मिश्री मिल्यौ, परसतु चतुर सुजान ॥२६८॥

* चौपाई *

प्यारी को ललिता सु जिमावैं। जो २ रुचै सु लै लै आवैं ॥
वैस वरन एकै सुकुँवारी। मनु सोभा के सांचे ढारीं ॥२६९
एकै रुचि सौं भोजन करैं। इक इक मन लै वातनि ढ़रैं ॥
इक मुखि हँसि हँसि धरैं जु कौर। इक पकवाँन मँगावैं और ॥३००
इक लै स्वाद सराहैं भारी। एक करैं एकनि मनु हारी ॥
इक कीरति की प्रीति विशेषैं। एक छकी यह कौतुक देखैं ॥३०१
बन विहार रुचि भोजन कियौ आइ प्रेम रस अँचवन लियौ

कुँवरि सबनि को राखति माँन। हँसि हँसि देति आपु कर पाँन ॥३०२
बूझति सब सों करि जु सनेह। झूलौगी कि चलौगी ग्रेह ॥
बेटिनु कौ जु तीज त्यौहार। तात भवँन अति मंगल चार ॥३०३
प्यारि जु जबलगिहोंहि न साँझ। तब लगि झूलौ सखियनि माँझ॥
कोउ कहै रहि गयौ बासर थोरो। चलौ कुँवरि घर मानि निहोरो॥३०४
प्यारी सुनौ बात चित लाइ। मारग देखति कीरति माइ।
रही अधिक उर लाडजु भरि कै। लै हैं भवँन आरतौ करि कै ॥३०५
कोऊ भोरी चतुर सयानी। बोलति अपनी अपनी बानी ॥
ललिता कहति विचार जु बात। अब तुम चलौ कुँवरि घर तात॥३०६
कुसुम बीनि बहु भूषन रचै। सबहिनु अपने अंग अंग सचै॥
कुसुम गेंद पुनि कुसुमनि छरीं। खेल उमाहैं सब मन भरीं ॥३०७
कुसुम सिंगार कुँवरि तन कियौ। कुसुमनि कौ जु छत्र रचि लियौ॥
राधा सिर जु फिरावति चलीं। खेल अनोखे रचती जु अली ॥३०८
कुसुम बीजना कुसुमनि चौंर। मडल रची बैठीं इक ठौर ॥
गावति भरीं नवल अनुराग। फूल्यौ मनौ रूप कौ बाग ॥३०९

दोहा—अस क्रीडा करि घर चलीं, गावति अस छवि दैंन।
सुनि के टेर कुफेर अति, परि जु गयो मन मैंन ॥३१०॥
चंपतनी नख सिख बनी, भीजीं उर आनन्द।
गोपनि कुल दुलरावहीं, रचि रचि नव नव छन्द ॥३११॥
हँसनि लसनि दसनावलि, दमकत उच्च लिलाट।
सैंना मदन लज्यौंवनी, अस छवि बरषति बाट ॥३१२॥
अति सुख बरषै घोष में, धन्य तीज त्यौहार।
आई जहाँ हिंडोरना, रच्यौ बृषभाँनु दुवार ॥३१३॥
सुख समूह उतपति करति, राधा शोभा ऐंन

माइ लई करि आरतौ, लखि शीतल भये नैंन ॥३१४।
कीरति सबहिनु कौं दियो, ओलिनु भरि पकवाँन ।
तात अजिर बैठी लसति, अतिलडि श्री वृषभाँन ॥३१५।
सॉवन सुख की लूटि सी, गोप सुता मिलि लेति ।
रॉनी राधा कुँवरि सम, सब कौं आदर देति ॥३१६।
नित उठि रंग हिंडोरना, झूलति भरीं हुलास ।
नित उठि खेल नये रचैं, ललितादिक रहि पास ॥३१७।

* चौपाई *

कबहूँ पाडर खंडी जहाँ । रचैं हिंडोरौ इहि विधि तहाँ ॥
कबहूं नौबारी चौबारी । झूलैं श्री वृषभानु दुलारी ॥३१८
कबहूं भान सरोवर तट में । झूलैं फूलैं सखी संघट में ॥
कबहूं निकट साँकरी खोरी । झूलति कुँवरि मुदित नहिं थोरी॥३१९
कबहूं राधा चंपक बरनी । गहवर झूलैं कौतिक करनी ॥
कबहूं गढ़ विलास सुख सचैं । गिरि की सिखर हिंडोरौ रचैं ॥३२०
कबहूं कुंड दोहनी नीरें । कबहूं पीरी पोखर तीरें ॥
सांवन अस हुलास श्री राधा । झूलत कबहूं न पूजै साधा ॥३२१
कबहूं सिला खिसिलिनी जाइ । तहाँ झूलैं हिंडोर चित चाइ ॥
कबहूं सूरो खरिकैं कूल । झूलति फरकैं अंग दुकूल ॥३२२
कबहूँ झूलैं ताऊ धाम । कबहूं काका ग्रह अभिराम ॥
कबहूँ झूलैं बट संकेत । कमनी ठौर बढै लखि हेत ॥३२३
अरुन अरुन द्रुम पल्लव कौंप । देखि बढैं झूलनि कौं चौंप ॥
मन को मोद बढावैं सखी । सब सनेह की मूरति लखी ॥३२४

दोहा—भयौ सलून्यौं जा दिना, सुख बढि पर्‌यौ अनन्त ।
तात ग्रेह आनंन्द निधि, उमग्यौ तिहि नहिं अन्त ३२५

राखी बाँधति वीर कर, जुरयौ सकल परिवार ।
शिर जव धरि पुनि तिलक करि, लाडू भरि दिये थार ॥३२६॥
नौ भाँननि की नंदिनी, राखी बाँधति पाँन ।
तात मात सोदरनि तें, वांछित गावति मौंन ॥३२७॥
साँवन सुख अरु लाड सुख, को लै जानै और ।
विलसन हारी राधिका, सबहिंनु की सिरमौर ॥३२८॥
आनन्द वरषैं राधिका, पावस बरषै तोइ ।
वह करैं अँवनी हरित इहि, निरखि हरित हिय होइ ॥३२६॥
बिनु मित लाड कहा भनौं, रसना नांहि अनेक ।
वृन्दावन हित रूप निधि, क्यौं कहै रसना एक ॥३३०॥
मन्दिर भान बधावनौं, कबहूं परत न छेह ।
पै सावन त्योहार सौं, राधा अधिक सनेह ॥३३१॥
भादौं निर्मल नभ मनौं, अद्भुत चन्द्र प्रकास ।
प्रणत चकोरिनु सुख भरन, भये भान रनिवास ॥३३२॥
श्रीराधा सर्वेश्वरी, निंदति दुतिधर गोत ।
ता आगें पाछें सखी, रसमय कला उदोत ॥३३३॥
भादौं सुदि हीं कौ जनम, वरन्यौं ग्रंथनि माहिं ।
तिहि विधि व्यौरो करि कहौं, अपनी बुद्धि बल नाहिं ॥३३४॥
नौ भाननि की नंदिनी, बरसि गांठि सब ग्रेह ।
सब घर मंगल साजियत, सब उर अधिक सनेह ॥३३५॥

* चौपाई *

सुदि त्रितिया तिथि भली । वरष गांठि तुंगविद्या लली ॥
नह भई रुचि भान जु धाम । मंगल रच्यौ परम अभिराम ॥३३६
जननी प्रमुदित महा । सुता लाड विधि बरनौं कहा

केशरि उबटि न्हवावति भई । सुविधि सिंगार कियौ विधि नई॥३३७
टीकौं भेंट सबै सजि लावैं । सबै सभागनि मंगल गावैं ॥
नौ भाननि की रानी जहां । मंगल विधि कीजति सब तहां ॥३३८
लली जिमाई आरतौ कियौ । दान मान सबहीं कौ दियौ ॥
भवन भीर अतिसय कौतूह । वरषत हैं आनन्द समूह ॥३३९
दोहा—अष्टसखी राधा लली, मिलि बैठीं इक ठौर ॥
येई मंगल मूल सब, को उपमा देउँ और ॥३४०॥
वरष गांठि ललिता लली, वरनि सुनाऊँ बैन ।
भादौं सुदि छठि छबि भरी, सब उर आनन्द दैन ॥३४१॥

* चौपाई *

पिता विसोक सारदी माइ । मंगल रच्यौ सु कह्यौ न जाइ ॥
महा भान पुनि दूजौ नाम । त्यौं चम्पा जु माइ गुन ग्राम ॥३४२
ललिता मणि चौकी बैठारी । केशरि तन उबटी सुकुँवारी ॥
माइ न्हवाइ अँगोछे अंग । भूषन बसन सजे नव रंग ॥३४३
पंच नाद होंइँ जाके अँगना । नाचैं गावैं सब भये मगना ॥
धुजा पताका वन्दन बार । कदली रोपै अजिर मझार ॥३४४
नीर गुलाब जु सींची मही । दीप वरै जगमग ह्वै रही ॥
सब पुर बधु तिलक लै आवैं । गावैं ललिता नाम मल्हावैं ॥३४५
सुविधि जिमाइ तिलक पुनि कियौ । सबनि तंबोल जु मेवा दियौ॥
साजि आरतौ कियौ विधि भली । गलिनु गलिनु बाढी रंगरली ॥३४६
दोहा—सजि समाज बैठी जहां, घरनी नौ हूँ भान ।
वरष गांठि ललिता लली, कीनीं विधि जु विधान ॥३४७॥
श्रीराधा चौकी मणिनु, लै पहिराई ग्रीव ।
दिषियति श्रीवृषभान पुर, नित उत्सव सुख सींव ३४८

वरषगांठि राधा कुँवरि, तिथि अति परम पुनीत ।
भादौं सुकला अष्टमी, माइ गवावति गीत ॥३४९॥

* चौपाई *

हरे हरे गोबर अँगन लिपायौ । बोलि सुहागिनि चौक पुरायौ ॥
जानि सुभ घरी पटा धरायौ । लली भली विधि लै बैठायौ ॥३५०
घसि केशरि उबटनौ करायौ । उष्ण नीर सौं सुविधि न्हवायौ ॥
जननी सुविधि अँगोछे अंग । पट पहिरायें पियरे रंग ॥३५१
डारि फुलेल सँवारे केश । तिलक रच्यौ मृगमद जु सुदेश ॥
माइ सभागिनि उर जु उमंग । भूषन विविध सचे अंग-अंग ॥३५२
धर्‌यौ घट मंगल नीर संजूत । श्रीफल सीस सुपल्लव नूत ॥
कनक चौमुखे दीप बराये । कदली ललित सु अजिर रुपाये॥३५३
धुजा धरी रोपे जु वितान । जनम वधाये चहुँ दिशि गान ॥
नीर सुगंधिनु सींची गली । बनिता आवति तिन मधि चलीं ३५४
टीकौ भेंट सबै सजि लावैं । कनक थार हाथनि छवि पावैं ॥
रोरी अच्छित माथे धरैं । मंगल दर्बि भेंट सब करैं ॥३५५
गावत गुनी समाजनि साजैं । राज दुवारैं नौबत बाजैं ॥
काकी ताई मूठि उठावैं । भाग्य भरी राधैइ दुलरावैं ॥३५६
रानी वांछित सब कौं देई । गोदी ओट असीसैं लेई ॥
मेवा विविध भरति हैं ओली । पुनि बांटति पाँननि की ढोली ॥३५७
इक आवति गावति विधि भली । एक विदा ह्वै घर कौं चली ॥
एक लली मुख लै आनन्दैं । इक रानी के चरनन वन्दैं ॥३५८
इक ठाढी मन मन जु सिहाहीं । एक वारने लै लै जाहीं ॥
मैया अपने हाथ जिमावैं । ग्रास देति मन अति सचु पावैं ॥३५९
नेह निहोरि देत मुख कौर कहै पुचकारि लेहु कछु और

त्रिपित भई जब ग्रीव ढुरावै जननी तब जलपान करावैं ।।३६०
ललिता कुसुम चन्द्रिका लाई । पहिराई प्यारी मुसकाई ।।
फूल माल पहिराइ बिशाखा । सफल करी मन की अभिलाषा ।।३६१
चम्पकलता जु बटुवा दीयौ । अति हित मानि कुँवरि सो लीयौ।।
चित्रा दियौ आनि मृगछौना । तुँगविद्या दियौ गेंद खिलौना ।।३६२
इन्दुलेखा इक सारौ लाई । राधा कहि कहि लेति बलाई ।।
रंगदेवी लाई इक पोपट । राधा नाम पढत है चटपट ।।३६३
लाल मुनैया पिंजरा भरी । सखी सुदेवी भेंट जु करी ।।
श्रीराधा की सखी अनन्त । लाई भेंटि बनति नहिं गन्त ।।३६४
कोऊ कुसुम हार पहिरावैं । कोऊ रचि-रचि पान खवावैं ।।
बीर दियौ गुडियनि कौ जोरा । माइ दियौ कंचन को तोरा ।।३६५
भूआ आनि आरतौ कीयौ । झगरि नेग भाभी सौं लीयो ।।
सबहिं परस्पर मिलैं जु हरषैं । पट भूषण ढाढिन पर बरषैं ।।३६६
रावलि धनि गुनिनु देहिं दान । सबकौ सुविधि करैं सनमान ।।
गोप सभा बैठे हैं जहाँ । सब देहिं आइ आसिका तहाँ ।।३६७

दोहा—प्रेम बली करवावही, सबै अलौकिक रीति ।
समझैं प्रेमी ही रसिक, ब्रज जन गरुवी प्रीति ।।३६८।।
रावलिपति आये भवन, राधा दृगनि विलोकि ।
लै बैठारी गोद में, हियो प्रेम लियौ रोकि ।।३६९।।
पट अमोल भूषन रतन, नौतन दिये मँगाइ ।
श्रीराधा अतिलाड भरि, सौंपे अपनी माइ ।।३७०।।
पौंनि छतीसौ नगर जे, देत बधाई आइ ।
अति उदार सनमान दैहिं, सब कौं रावलि राइ ।।३७१।।

सखी विसाखा कौ कहौं, वरष गांठि उत्साह।
दुलरावन जननी जनक, उर बाढी अति चाह ॥३७२॥

* चौपाई *

वरप गांठि सु विसाखा लखी। मंगल में मंगल यह सखी॥
भादौं सुदि आटैं तिथि महा। दुगुनौ मंगल कहिये कहा ॥३७३
केशरि उबटि लली जु न्हवाई। मैया सुहथ सिंगार बनाई॥
पीत बसन भूषन जु ललित नग। दर्पन से जु अंग होइँ जगमग ॥३७४
सत्य भान जिहि तात उदार। सुविधि कियौ मंगल विस्तार॥
नवजोबनी धन्य तिहिं माइ। धन खरचति मन अधिक सिहाइ ॥३७५
चौक पूर चौकी जु बिछाई। तापै लली आइ बैठाइ॥
दीपावली पुनि कदली रुपाये। चारु चन्दोवा अजिर तनाये॥३७६
धुजा पताका बन्दन वार। बनिता गावति मंगलचार॥
करि अनिलाड जिमावत मैया। वारि आरतौ लेत वलैया ॥३७७
राधा सहित सखी सब आईं। भेंट देत पुनि पुनि जु बधाई॥
रोरी अच्छत तिलक बनावैं। सब मिलि मन आनंद बढावै ॥३७८

दोहा—पुर मंगल मंगल भवन, लली सुमंगल रूप।
सत्य भान नवजोबनी, दरसत भाग्य अनूप ॥३७९॥
अब वरनौं चंपक लता, वरस गांठि सुख दान।
समिता माइ सुलच्छनी, पिता नाम गुन भान ॥३८०॥

* चौपाई *

सुदि भादौं अष्टमी पुनीत। सदन गाइयत मंगल गीत॥
अजिर लिपाइ सुचौक पुराइ। केशर उबटति अंग बनाइ ॥३८१
नाइन डोलति नगर बुलावति। बनिता आवति मंगल गावति॥
उष्ण नीर सों सुविधि न्हवावैं। तनहिं अंगोछि बसन पहिरावैं ३८२

भूषन सजे अमोलिक सबै। सौरभ चरचि जिमावति तबै ॥
रोरी अच्छत तिलक जु कीयौ। न्यौंछावरि करि बहु धन दीयौ ॥३८३
श्रीराधा कियौ तिलक सुभाल। पहिराइ मोतिन की माल ॥
देति बधाई पुर महँतौंनि। लावत भेंट छतीसौ पौंन ॥३८४

दोहा—नौ नन्दन मही भान के, देत गुनिनु बकसीस।
द्विज दच्छना लै लै भलैं, सब हीं देत असीस ॥३८५॥
धर्म भान सुभगा घरनी, बेटी लेखाचित्र।
वरष गांठि दसमी सुदी, भादौं मास पवित्र ॥३८६॥

* चौपाई *

केशरि उवटि न्हवावैं गावैं। तिलक करैं पुनि भेंट जु लावैं ॥
मन्दिर रचना ठौरैं ठौर। जित देखौ तित औरैं और ॥३८७
काकी ताई सब हीं मिली। कुँवरि लाड के सुख में झिलीं ॥
सब हीं भरि भरि अंकनि लेहिं। करि धरि सीस असीसन देहिं ॥३८८
लली सुकुन्दन की सी पुतरी। मनु मूरति धरि नभ तें उतरी ॥
सब दुलरावैं मूठि उठावैं। कोउ पट कोउ आभरन जु लावैं ॥३८९
अष्ट सखी मिल राधा साथ। मैया सबनि जिमावत हाथ ॥
करति आरतौ अति मुद भरी। कुसुम वृष्टि चहुँ दिशि तें करी ॥३९०

दोहा—आज महा मंगल भयौं, धर्म भाँन के ग्रेह।
लली चित्रलेखा भली, वरष गांठि दिन एह ॥३९१॥
भादौं सुदी एकादशी, बाढयौ अतिशय रंग।
इन्दु लेखा कौ जनम दिन, सब मन गांन उमँग ॥३९२॥
इन्दु लेखा इन्दु जु वदन, बेटी श्री वर भान।
रामा नाम जु माइ तिन, मंगल रच्यौ विधान ३९३।

* चौपाई *

गौ गोवर सौं लीप्यौ अँगना । चौक पुरावति अति मन मगना ॥
केशरि उबटति अपने कर वर । बनितनि महा भीर जाकैं घर ॥३६४
अंग अंगौछि शिंगारी लली । सब तन उझली सोभा भली ॥
रोरी तिलक भाल पै करें । भेंटै लाइ जु आगैं धरें ॥३६५
ढाढिनि निर्त्त करति छवि पावे । लै न्यौछावरि सवनि रिझावे ॥
आये पुरजन सब परिवार । मंगल बाजे बाजत द्वार ॥३६६
जेंवति सब साथिनि संजुता । सोभित मध्य भानु की सुता ॥
अस मंगल जु भवन वरभान । इहि पुर देख्यौ नहिं कहूं आन ॥३६७
दोहा—कौतिक विथकित घोष जन, विसरत नित कृत नेम ।
सुन्यौ न देख्यौ श्रृष्टि इहि, यह जु अलौकिक प्रेम ॥३६८॥
मंगल दरस्यो विधि भली, श्री सुभानुके धाम ।
रँगदेवी के तात कौं, गावत जस अभिराम ॥३६९॥

* चौपाई *

नाम मालिका लली सु माइ । वरष गांठि दिन जानि सिहाइ ॥
केशरि सौं उबटति है अंग । चुनि पहिरावति वसन सुरंग ॥४००
जूथनि गोपी मिलि संग आवैं । वरषगांठि दिन मंगल गावैं ॥
चित्रित सदन किये सब ठौर । सोभा दरसति जहाँ तहाँ और ॥४०१
चौकी पर बैठारी लली । तिलक करति जुवति विधि भली ॥
नौ भाँनन की सुता बिराजैं । सब तन वसन आभरन साजैं ॥४०२
जेंवति हैं मिलि सब ही संग । ग्रास लेति मन भरी उमंग ।
पंच नाद पुहपाँजुलि वारैं । जै धुनि करि आरती उतारैं ॥४०३
दोहा—अंग अंग अति सुथरता, बढति रूप की जोति ।
हँसैं लसैं सब के बदन, लखि चख चौंधी होति ४०४

भादौं पून्यौ तिथि ललित, जनम द्योस इक संग
रंग देवी अरु सुदेवी, बरष गाँठि भरी रंग ॥४०५॥

* चौपाई *

बुध्यमती के मंगल आज। भवन भीर जुबतीन समाज॥
लली सुदेवी उबटन कियौ। केशरि नीरनि न्हवाइ जु लियौ ॥४०६
करि शिंगार मुदित भई जनिता। छवि लखि त्रिन तोरति सब वनिता॥
भवन अलंकृत मंगल साज। करति फिरति सब मंगल काज ॥४०७
बुध्यमती भरि अति मन मोद। लै बैठी जु सुता कों गोद॥
जहाँ बैठी नौ भाँननि घरनी। मंगल हू कों मंगल करनी ॥४०८
अप अपनी गोदनि लियें सुता। सबहि जिमावनि है छवि जुता॥
देव नाग नर पुर जु कुँवारि। इनकी छवि पर डारौं वारि ॥४०९
तिलक सुदेवी के जब कियौ। वारि वारि धन सब हिनु दियौ॥
नौ हूं रानीनु इतनौ दियौ। ढाढनि कौ दरिद्र टरि गयौ ॥४१०
लै लै नाम सबनि कौं बोली। सादर मेवा भरि दई झोली॥
देत असीस बधू सब निकसीं। अति बड़भागिनि तन मन बिकसीं४११
भये अति मुदित तात रति भान। सबकों दियौ दान सनमान॥
यह गोपिन कुल मंगलाचार। विधि हूं कैं आवैं न विचार ॥४१२

दोहा—मही भान नृप सुतनि की, बेली फली अनूप।
या विधना की श्रिष्टि ते, न्यारौ दरस्यौ रूप ॥४१३॥
वरष गाँठि उत्सव महा, वरन्यौं मति परमान।
वृन्दावन हित रूप कौ, सागर कुल मही भान ॥४१४॥
गोप दुलारिनु को जु अब, आयौ प्रिय त्योहार।
सांझी सब चीतन लगीं, तात भवन दरबार ॥४१५॥
तिन में राधा मुकुट मणि, सब भई ताकें लार

साँझी कौ दिन जांनि कैं, आईं साजि सिंगार ॥४१६॥
सनय मनय एकत भईं, कीरति अजिर मझार।
राधा सौं सब यौं कहति, साँझी खेलन बार ॥४१७॥
एक सुभाव जु चाव इक, एक वैस समतूल।
कुँवरि माइ अग्या जु लै, निकसीं तोरन फूल ॥४१८॥
कीरति मेंवन कोंथगी, भरि दई सब के हाथ।
भूख लगै तब जेंइयौ, सबहिं बैठि इक साथ ॥४१९॥

* चौपाई *

सब हिनु करीं दुकूलनि झोर। कुसुमनि खोजत हैं चहुँ ओर ॥
जहाँ तहाँ देखें फूली डार। तहाँ तहाँ करै सबै किलकार ॥४२०
आवौ री तुम दौरी सबै। बहुत फूल हम पाये अबै ॥
तिनहिं तोरि कैं आगें चलैं। करैं खेल कौतूहल भलैं ॥४२१
कहूं बेलि फूलि नवि रहीं। तिनकी डरियां जाइ जु गहीं ॥
कोउ ऊँची ते हाथ न आवैं। इक लै एकनि कंध चढावैं ॥४२२
तिन तें लिये तोरि विधि भलीं। पुनि ताहू पें आगें चलीं ॥
पहुँची प्रेम सरोवर तीर। कुसुम बहुत पै भवँरनि भीर ॥४२३
वे ऐसी विधि गुंज जु करैं। मनु रखवारे तोरत लरैं ॥
अरी भट्ट अब कीजै कहा। इनको देखि डरैं हम महा ॥४२४
प्यास लगी गई अचवन नीर। बैठी करी मंडली जु तीर ॥
कोऊ इक राधा कें ढिग गई। ऐसे वचन कहति सो भई ॥४२५
प्यारी जो अब अज्ञा दीजै। भूख लगी तौ भोजन कीजै ॥
पात पलासिन तोरि जु लावौं। दौंनाँ अपने करनि बनावौं ॥४२६
खोलि कोथरी दोंना भरौ। ऐसी विधि सब भोजन करौ ॥
खोजि मिष्ट फल बन तें लावैं ते राधा के हाथ गहावैं ४२७

जेंवति कुँवरि भरी अहलाद । कहैं भट्ट यह अधिक सवाद ॥
ऐसे फल चुनि लावौ और । कौंन वृक्ष उपजैं किहि ठौर ॥४२८
लावैं पावैं अचवैं नीर । आगें चली सखिनु लै भीर ॥
फूलनि लोभ गई संकेत । लखि बन कमनी बढ्यौ हिय हेत॥४२९
जहां कुशमनि के झुकि रहे झबा। मानौ खुले छबिनु के डबा ॥
प्यारी बैठी बट की छांही । अति आनन्दित भई मनमाँही ॥४३०
फूलनि सौं ओली भरि लई । गहने सुहथ रचित सब भई ॥
पहिरैं कुँवरि सबनि पहिरावैं । बन कौं कौतिक अति मन भावैं ॥४३१
मधुरे बाजे बाजत आवैं । वधू वृन्द मिलि मंगल गावैं ॥
आई एक सहेली भगी । ऐसे कहन कुँवर सौं लगी ॥४३२
को आवति यह जाति जु कहां । हम चलि कौतुक देखैं तहाँ ॥
उनि में ते आई इक बाल । कहन लगी सो वचन रसाल ॥४३३
री तुम निपट ऊजरे गात ।दांमिनि अरु ससि निकर लज्यात॥
काकी बेटी का पुर रहौ । मोसौं साँची बात जु कहौ ॥४३४
यह वृषभान नृपति की लली । याके संग ये जु सब अली ॥
आईं फूल लैंन के हेत । अति कमनी इहि बन संकेत ॥४३५

दोहा–निरखि निरखि भामिनि कहत, धन्य तात पुनि माइ ।
जाके गरुवे रूप ने, दियौ बन तिमिर नसाइ ॥४३६॥
हौं नित कानन सुनत ही, आजु लखी भरि नैंन ।
या अतिलडि के रूप पै, वारौं रति युत मैंन ॥४३७॥
पुनि बूझन ललिता लगी, तुम जु बसत किहि ग्राम ॥
अगनित बनिता वृन्द संग, जाति कौंन से काम ॥४३८॥
यह रानी ब्रजराज की, आई हैं इहि हेत ।
पूजन कौं अपने सुहथ, देवी वट संकेत ४३९

यौ कहि कैं पाछे हटी, मिलि संग मे जाइ।
कही बात सब महिर सौं, कानि लागि समुझाइ ॥४४०॥
विनु पूजें ही फल मिल्यौ, आगें परत न पाइ।
धनि संकेत निवासिनि, वांछित दियौ दरसाइ ॥४४१॥
जसुमति के हिय जिय बढ्यौ, सुनि आनन्द अकूत।
उरझौ उरभयौ पहिल ही, जाइ कुँवरि सौं सूत ॥४४२॥
देवी पूजन कौं दई, विप्र वधू जु पठाइ।
राधा ओर चलीं खँकि, मुरली धर की माइ ॥४४३॥
बैठी सखियनि वृन्द में, रूप की आनन्द पुंज।
महरि देखि दहली सुअंग, किहि विधि मिलिये कुंज ॥४४४॥

* चौपाई *

चली महरि मन साहस धरि कैं। पहुँची निकट सु आइ कुँवरि कैं॥
मन की बात सु कासौं कहैं। वार बार विधना तन चहैं ॥४४५
मेरी ओर लखिजियौ दई। फल प्रापति की बिरियां भई॥
हे देवी तू साँची महा। तेरी महिमा बरनौं कहा ॥४४६
हौं नहिं सकी चरन लगी आइ। मन अभिलाषा दई पुजाइ॥
नख सिख रूप विलोकनि लगी। नैंननि भूख सतगुनी जगी ॥४४७
कुँवरि लई गोदी बैठारि। बढ्यौ रूप नहिं सकति निहारि॥
कहति अतिलडी मो घर चलौ। दिहु सब हीं कौं आनन्द भलौ ॥४४८
मैं देखी तू जनमी जवै। तव तें दई मिलाइ अवै॥
बूझौ सुनौं सन्देशो कांन। उहां बनै नहिं आवन जाँन ॥४४९
कबहूं हेरि वदन तन रहैं। कबहूं गाढे अंकनि गहैं॥
कबहूं रीझि वारने लेंहि। शिर कर राखि असीसें देंहि ॥४५०
पुनि आठौं भाननि की बेटी। बोलि बोलि सब ही उर भेंटी

सब कौं लाड बिना मत कर्यौ । सब के माथे कर वर धर्यौ ॥४५१
ललिता मधुर कही तब बानी । हम कौं अज्ञा दीजै रानी ॥
साँझी पूजन कौ दिन आज । आई फूल तोरने काज ॥४५२
तोरति फूल अधिक बढ़ि आईं । बहुरि कृपा करि तुम बिरमाईं ॥
हमकौं बेगि बिदा अब दीजै । आप नंदपुर गवन जु कीजै ॥४५३
कीरति छिनु न बिसारति जाहि। कैऊ घरी बीति गईं ताहि ॥
अपने मन करि उनि मन बूझ्यौ । जसुमति कौ सति भाव जु सूझ्यौ ॥४५४
दोहा—रानी लैं रही अंक मैं, सबल ह्वै रह्यौ प्रेम ।
　　कह्यौ जु सूझैं, कौन कौं, साँझी पूजन नेम ॥४५५॥
　　नाम हिता तो माइ कौ, सुनि अतिलडि वृषभान ।
　　कहियो पा लागन जु मम, दै कै बहु सनमान ॥४५६॥

※ चौपाई ※

ललिता मो बिनती सुनि लीजौ । रानी सौं ऐसें कहि दीजौ ॥
प्रथम वचन की बिरियाँ भई । लाइक तुम सु नाइ हम दई ॥४५७
कुँवरि चलन कौं अति अरबरैं । तब हीं रानीं हिय गहबरैं ॥
जिहि तिहि विधि सुरझाइ जु लई। मन धीरज धरि अज्ञा दई ॥४५८
धरै नन्द पुर सन्मुख पाइ । मुरि मुरि इतकौं देखति जाइ ॥
यह लै फूल चलीं घर तात । महरि लाड की करति जु बात ॥४५९
जहाँ जहाँ देखैं कमनीं ठौर । कुँवरि खेल तहां २ रचै और ॥
तोरैं फूल कुमुद कुमुदनी । सरवर धसी कोऊ इक जनी ॥४६०
वे लै लै जु पारि पै धरैं । कोऊ इक ताकी चोरी करैं ॥
कोऊ इक कहैं ताहि समुझाइ । और लाउ री फिर धसि जाइ ॥४६१
वे धसि लाइ लाइ कैं देंहिं । बांटि बांटि यह सब हीं लेंहिं ॥
बिरियाँ बड़ी भई जब सखी । कीरति एक पठाइ [illegible] ॥[illegible]

उनि सब कह्यौ मन्देमो आइ मारग हेरति तुमरी माइ
सुनि सब आतुर गति सौं चलीं। गौरी गावत सबहीं अली ॥४६३
एकत भईं बड़ी अरु छोट। मनु सोभा को दरसतु कोट ॥
सब मुद भरी मल्हावैं बीर। वरनी परै न छबि की भीर ॥४६४
पौरी भान पाउ जब दियौ। मैया हरखि आरतौ कियौ ॥
लाड सहित आँकौं भरि लई। अंचल वदन अँगोछित भई ॥४६५
केशर चन्दन लीपी भीति। गो गोबर धरि साँझी चीति ॥
चहुँ दिसि गोबर कोटि जु सच्यौ। मधि सिसुमार चक्र पुनि रच्यौ४६६
रवि ससि मंडल इहि विधि धरयौ। लखि विधि मन संदेह जु परयौ ॥
कहुँ दिसि चीते अगनित तारे। बड़डे ग्रह कर आपु सँवारे ॥४६७
चित्र २ फूल बीच नग पांति। कुँवरि धरे रचि नीकी भांति ॥
सब में दरसति ऐसी ओप। उपमा मानौं करियति लोप ॥४६८
श्री राधा के साथिनि माथ। सब चीतति अप अपने हाथ ॥
अगर धूप सौरभ करि चरची। खेल मांहि अतिलडि मन परची॥४६६
जल गुलाब चहुँ दिशि छिरकाइ। दीपक पंकति धरी बनाइ ॥
सबै कहैं लघु वैस जु अहा। कर चतुराइ कहिये कहा ॥४७०
सब कोउ अस परसंश जु करै। सुनि कीरति उर आनन्द भरै ॥
आरज गोपिनु लै कै संग। आइ देखन मन जु उमंग ॥४७१
लली हाथ लगी चूम्बन माइ। रीझी पुनि पुनि लेत बलाइ ॥
सकुचि कुँवरि लइ दृष्टि दुराइ। हिय फूलनि वरनीं नहिं जाइ ॥४७२
कह्यौ कुँवरि तब मृदु मुस्काइ। मैया दीजै भोग मँगाइ ॥
मेवा बहु पकवान मँगायौ। लली भली विधि भोग धरायौ ॥४७३
साथिनि सुघरनि ऐसौ गायौ। मनु साँझी कौ टेर बुलायौ ॥
कर जोरें विनवति सब ऐसे साँझी होहि प्रसन्न सु जैसे ४७४

ठाडी सबहि ध्यान सो करैं। मुख तें मनहुं मंत्र उच्चरैं ॥
अखिल कलनि की स्वामिनी जोहैं। लीला वाल मगन भई मोहैं ॥४७
भोग उसार्‍यौ जल अँचवाइ। बीरी अर्पी पुनि चित चाइ ॥
बाढी आरति करन हुलास। सब सिमिटीं जु कुँवरि के पास ॥४७

दोहा–किधौं कि शीतल दामिनि, किधौं निकर ससि जोति।
सजि आरति ठाडी भईं, तन दुति जगमग होति ॥४७७॥
आरति वारति कुँवरि जु, पुहपांजुलि सखी कोइ।
मन करि आरधांते सबै, पंच नाद धुनि होइ ॥४७८॥

* चौपाई *

मिलति परस्पर नवँनी करि २। ग्रीवा बाहुँ लाड सौं धरि धरि ॥
यौं रजनीमुख पूजन कियौ। खेल विनोद सन्यौ सुख हियौ ॥४७९
कीरति सबनि भवँन लै आई। कनक सूत ओढनी उढाई ॥
ओलिनु भरि भरि मेवा दई। सब राधा ढिग बैठति भई ॥४८०
कीरति कहति गई किहिं दिशि बन। बेटी तू कछु श्रमित भई तन ॥
मैया देखीं कुंजैं कमनी। प्यारी लागी बन की अँवनी ॥४८१
बढि गईं बट संकेत जु कूल। ओलिनु भरि भरि तोरे फूल ॥
तहाँ इक कौतिक पर्‍यौ जु सूझ। सो तू अब ललिता सौं बूझि ॥४८२

दोहा–सखी कहति हम बन गइ, फूलनि तोरन हेत।
महरि जु आईं पूजिबे, देवी बट संकेत ॥४८३॥
आरज गोपी संग बहु, करति उच्च स्वर गान।
हम उनिके कौतिक लगी, भूलीं आंवन जाँन ॥४८४॥
आई चतुरा नारि इक, हम सौं गईं बतराइ।
भेद भाव उन महरिकौं, सब ही दियो जताइ ॥४८५॥

* चौपाई *

जब राधा की खबर जु पाई । तब रानी पाछें फिर आई ॥
कुँवरिहि लखि विह्वल भई महा । मरस्यौ प्रेम सु बरनौं कहा ॥४८६
आँकौं भरि कै भेंटी प्यारी । करन लगी परशंसा भारी ॥
सब कौ लाड बहुत विधि कीनौं । करजनि चटक वारनौं लीनौं ॥४८७
अपु घर ले चलिवैं मन कीयौ । हम जु समझि तब उतरू दीयौ ॥
साँझी पूजन की यह बार । रानी समझि लेहु निरधार ॥४८८
मारग देखति होइगी माइ । हम तैं क्यौं अब बिरम्यौ जाइ ॥
महरि लगाइ रही यौं छाती । जैसे रंक न बिसरै थाती ॥४८९
जब हम चलिबे कौ अकुलानी । तब अज्ञां दीनी ब्रज रानी ॥
तुम कौं बहु पा लागन कह्यौ । पुनि सन्देश कहि द्रगजल बह्यौ॥४९०
राधा जननी लाइक जैसी । मोहि न सूझै जग में ऐसी ॥
मेरौ अपनौ पन दृढ करि हौ । इत उत मन अभिलाष सु भरि हौ॥४९१
दोहा—वचन किये जे परस्पर, हम तुम खिले सु चित्त ।
रानी ते सुधि कीजियौ, हौं सुधि करत जु नित्त ॥४९२॥

* चौपाई *

कीरति सुनि कैं हियें सिहानी । महरि हियें की लाग सुजानी ॥
राधा बरनी आपु मुख बानी । कैसी लाइक ब्रजपति रानी ॥४९३
कुँवरि सकुचि कैं चुप ह्वै रही । ललिता ने जु कथा सब कही ॥
कोमल हदैं गिरा सुख सनी । उर उदारता दरसी घनी ॥४९४
हम सौं प्रीति करी यह भाँति । इक मुख सौं बरनी नहिं जात ॥
समाचार कहि जसुमति जिते । ललिता बरन सुनाये तिते ॥४९५
सांझी की जु जात सी लागी । देखन आवैं सब अनुरागी ॥
कीरति पूरब सुक्रित करयौ । राधा प्रगटी सो लखि परयौ ४९६

अस रचना प्यारी कर देखी। विधि हूं ते चातुरी विशेषी ॥
ब्यारू सुहथ कराई माइ। जल आचमन करि पोढी जाइ ॥४६७
सोरह तिथि भरि खेलीं इहि विधि। दिन २ बढयो प्रेम आनन्द निधि।
दिन दिन के जु खेल बहु न्यारे। सब विधि लगें सबनि कों प्यारे ॥४६८
परिवा परब मनावति भई। मान सरोवर तीर जु गई ॥
बाजे बाजैं मंगल गावें। श्री राधा सांझी जु सिरावैं ॥४६६
भुज भरि २ जु परस्पर मिलीं। मेवा बांटति अति सुख झिलीं ॥
वन्दन करि करि घर कों आई। कीरति सबहिं सखी पहिराइ ॥५००

दोहा—राधा पद सेवित रहे, मंगल मूरति वंत ;
वृन्दावन हित रूप निधि, आनन्द निकर न अन्त ॥५०१॥
तात मात के लाड युत, कीनी खेल प्रशंस।
बाल विनोद प्रचुर करे, स्वामिनि श्री हरिवंश ॥५०२॥
झाँझी माँझी होहिगो, घर घर अति कौतूह।
राधा खेलन निकसि हैं, लें संग सखिनु समूह ॥५०३॥

* चौपाई *

माँझी खेल जु झाँझी रचै। खेल कुँवरि पें कोऊ न बचै ॥
भाजन में बहु छिद्र जु करैं। मध्य चौमुखो दीपक धरैं ॥५०४
गोपसुता सिमटीं सब साँझ। राधा सोभित तिन के माँझ ॥
सुवटा गावैं वीर मल्हावें। कीरति सब कों भवन बुलावैं ॥५०५
चलौ चलौ यों कहति जु राधा। झाँझी खेल बढी मन साधा ॥
सबहिं चलीं रावर में मलकीं। सुख विधि तन दामिनि ज्यों दमकीं॥५०६
एक सखी सिर झाँझी धरी। तापै बहु विधि रचना करी ॥
दीपक कांति विविध नग पांति। गोप सुता देखति जु सिहांति ॥५०७
मन हु बाल रवि किरनि जु कढी। यह अचरज रजनीमुख बढी ॥

निशि बासर न संभवै मेल । सहज कुँवरि राधा कौ खेल ॥५०८
कीरति बैठी भरी हुलास । आरज गोपी राजैं पास ॥
चौकी ते उठि ऐसे लगी । मानौं रोम रोम तन हँसी ॥५०९
लली आइ भई आगें ठाढी । मनु सोभा सांचे में काढी ॥
गावत तात मात लै नाम । झाँइ पूरि रही मणि धाम ॥५१०
रावलपति सुत सोदर मेरौ । मुहि लागै प्यारौ जु घनेरौ ॥
गुन निधि रम्भा भाभी मेरी । ताहि मल्हावौ सब मिलि एरी ॥५११
मो झाँझी की पूजा करौ । मैया आइ भेंट तुम धरौ ॥
मीठी लगी लाड़ की बानी । अतिलडि कह्यौ करयौ त्यौं रानी ॥५१२
रजित रुकम नग एकत करिकैं । दियौ सखी की ओली भरिकैं ॥
वीर जिवौ चिर देति अशीस । अचल राज रहो रावलि ईश ॥५१३
कीरति छिनहूं न बिसरयौ चहै । राधा लाड भरी उर रहै ॥
जानि खेल रुचि बरजै नांहि । सुखी रहै राधा सुख माहि ॥५१४
आज्ञा दीनी खेलौ लली । बेगि आइयौ घर कौं चली ॥
झाँझी लै कैं सब हीं निकसीं । खेल उमाहैं हिय जिय विकसीं ॥५१५
प्रथम हीं महा भान घर गईं । हित मूरति दुलरावति भईं ॥
लखि हरषी ललिता की मैया । चम्पा रानी लेति बलैया ॥५१६
प्यारी प्रान भावती लली । झाँझी चीती तें विधि भली ॥
अँजुरी भरि कै रतन जु लाई । ओली भरि अति हिये सिहाई ॥५१७
पुनि गई सत्य भान के ग्रेह । कीयौ नव जोवनी सनेह ॥
बेटी नीके सुबटा गावौ । तात मात पुनि वीर मल्हावौ ॥५१८
दीपक गो घृत सौं लै भरचौ । झाँझी कौं सिर नवन जु करयौ ॥
लली विशाखा जु की मैया । गोद भरी पुनि लई बलैया ॥५१९
पुनि गुनभान भवन में आई । समिता सब ही अंक लगाई

चंपकलता लली की माइ। लखि भयो आनन्द उर न समाइ५२
सब बैठारी अपने अँगना। गीत गवावति भई अति मगना ॥
फूलनि झाँझी पूजति भई। बेटिनु कों जु आमिका दई ॥५२
मंगल दर्वि दुहूं कर लै कै। ओली भरयौ जु आदर दै कै ॥
धर्मभान मन्दिर जब धसीं। शीतल दांमिनी शिशु मनु लसीं ॥५२२
आगैं आईं सुभगा रानी। धनि यह घरी कहति भई वानी ॥
राधा लली लई भरि बाथ। सबनि लडावनि जे इन हाथ ॥५२३
झाँझी में पुँगी फल धरि कैं। मुदित होत मन बिनती करि कैं ॥
सखी बोलि ग्रह भीतर लई। ओली भरि कैं दर्वि जु दई ॥५२४
कियौ लाड राधा की काकी। जननी सखी इन्दुलेखा की ॥
आई सब रुचिभान जु धाम। जूथ अनेक अली अभिराम ॥५२५
गान अलौकिक रीति जु करैं। भामा रानी को मन हरैं ॥
राधा तुंगविद्या गर बहियां। अति छवि वढ़ी अजिर के महियाँ ५२६
बेटी कछू बैठि कैं गावौ। मेरे मन कौ अधिक जु भावौ ॥
री गौरंगी हम कुल भूषन। मुख मयंक श्रवि वचन पियूषन ॥५२७
कोकिल कंठी गावति भई। काकी कौं रिझाइ अति लई ॥
रजित रुक्म नग भरि दइ ओली। पुनि दीनी पाँननि की ढोली ॥५२८
पुनि आई मन्दिर वरभाँन। रामा सुखित भई सुनि गान ॥
लाइक इन्दुलेखा की जनिता। ऐसी और कौन जग बनिता ॥५२६
राधा निरखि भरी अनुराग। फूल्यौ अजिर रूप मनु बाग ॥
लई अंक भरि कीरति जाई। रतननि सौं सखि गोद भराई ॥५३०
यौं झाँझी की भेंटनि लेहिं। सोदर तात असीस जु देहिं ॥
सोभा भीर गलिनु के माहीं। इह घर ते पुनि उहि घर जाहीं ॥५३१
मिलि सुभान के आई गावति। कनक लता सी सब छवि पावति ॥

हरखी देखि मालिका रानी रँगदेवी की माय सयानी ॥५३२
गोभा भरि भरि मेवा दीनी । प्रीति करी हिय अति सुख भीनी ॥
दीयो दर्वि दुहूं कर भरि कैं । लाडति कुँवरि चिबुक कर धरिकैं ॥५३३
पुनि गवनी रतिभान भवन में। आगें लगति कुँवरि सखि गन में ॥
बुध्यमती काकी हिय फूली । लाडति कुँवरि प्रान सम तूली ॥५३४
सखा सुदेवी जू की माइ । लीनीं सबहीं अजिर बैठाइ ॥
मोद भरी व्यारू करवावैं । श्री राधा कों आपु लडावैं ॥५३५
झाँकी की जु भेंट अस दीनी । गीत पुनीत सुनत सुख भीनी ॥
झाँझी खेलति कीरति लली । पुर बीथीनु बढी रंग रली ॥५३६
जो काहू ग्रह कुँवरि न जाइ । ते सादर लै जाहिं बुलाइ ॥
श्री राधा सब विधि सुख बरषैं। सब काहू कौ हिय लखि हरषैं ॥५३७
प्रथम जाम रजनी जब गईं । कुँवरि तात घर आवति भईं ॥
कीरति लीनी अरघ बढ़ाई । बदन अँगोछ्यो अंचल लाइ ॥५३८
गोपिन सुता अजिर बैठारी । व्यारू करन परोसी थारी ॥
कीरति कौ हित गरुवौ महा । भोजन स्वाद बरनिये कहा ॥५३९

दोहा—दूध जो मदनी गाय कौ, तामें सिता मिलाइ ।
राधा अति लडि यौं कहे, मैया मोकौं प्याइ ॥५४०॥
सिता मिलाइ सिराइ कैं, पय भाजन कर लाइ ।
जननी दियौ पिवाइ कै, पुनि आचमन कराइ ॥५४१॥
सबहीं सखी घर कौं गईं, प्यारी कियौ सुख सैन ।
प्रात उठत राधा कहै, मैया सौं अस बैन ॥५४२॥
आज दसहरा पूजि हैं, तात भयानें ईश ।
सौदर माथे तिलक करि, हौं धरि हौं जब सीश ॥५४३॥
रानी सुनि प्रमुदित भई, रही बदन तन हेरि

राधा बेटी वचन अस, मोसौं कहिये फेरि ॥५४४॥

* चौपाई *

रावलि राइ भवन जब आये। कीरति ऐसे बचन सुनाये ॥
सुनियौ हो अतिलड के तात। कुँवरि कही इक मोसौं बात ॥५४५
बीर सीश पर हौं जव धरि हौं। माथे सुन्दर तिलक जु करिहौं।
आजु कलेऊ की सुधि भूली। फिरत भवन में फूली फूली ॥५४६
श्री वृषभान बोलि तव लई। हँसति कुँवरि बाबा ढिग गई ॥
बेटी क्यों न कलेऊ करी। कौन बात अरबी मन धरी ॥५४७
भैया के सिर जब जव धरिहौं। तब ही तात कलेऊ करि हौं ॥
यह सुनि हँसे भयाने राइ। राधा लीनी अंक लगाइ ॥५४८
श्री दामा तिहिं बार बुलायौ। करि शिंगार अतिलडौ आयौ ॥
नौ भाननि के जुरे कुँवार। अष्ट सखी राधा के लार ॥५४९
रोरी अच्छत तिलक जु करैं। श्रीफल लाडू गोदनि भरैं ॥
जव धरि सीश मुदित अति लडी। लखि भई फूल माइ मन बडी ॥५५०
कहत तात आनन्दित महा। बेटी दच्छना लै है कहा ॥
भैया अधिक मल्हाऊँ तोकौं। गुडिया बहुत लाइ दै मौकौं ॥५५१
अरु दुहि दै मेरी मदनी गाइ। वहुरि न मोकौं जाह चिराइ ॥
सुनि राधा की भोरी वतियाँ। तात मात शीतल भई छतिया ॥५५२
दसमी विजय जु उत्सव महा। संपति राज बरनिये कहा ॥
राज सिंघासन बैठे भान। गहरे घुरत पौरि नीसाँन ॥५५३
गाँव गाँव ते भेंट जु आवै। सब सनमान राज घर पावै ॥
रजनी मुख झाँझी लै चलीं। सोभित कुँवरि सखिनु मध भली ॥५५४
निर्तत अलि झाँझी सिर धरैं। बगर बगर अति कौतिक करैं ॥
श्री राधा सुख करि सरसानौं। सोभित गोप राइ बरसानौं ॥५५५

पुर कौतूह करैं श्री राधा। गोपिनु देखन की मन साधा॥
दिन दिन आनंद बढै सवायौ। इक रसना करि जातु न गायौ॥५५६
पून्यौ क्वार जु पूरन भई। उतकंठा बाढै नित नई॥
इहि सुख खेल मात दिन भये। प्रेम बीज सबहिनु उर बये॥५५७

दोहा—कहति अतिलडि माइ सौं, पूरन को दिनु आजु।
जाऊँ सिरांवन भान सर, कर दे पूजा साज॥५५८॥
रूप जोति गोपिनु सुता, सिमिटीं कीरति भौंन।
झांझी चलीं सिरांवने, उपमा वरनौं कौंन॥५५९॥

* चौपाई *

अतिलडि कह्यौ माइ सो कीयौ। पूजा साज सबै सजि दीयौ।
गावति चलीं जु गोप कुँवारी। मनु छवि की फूली फुलवारी॥५६०
तिन मध्य राधा चंपक बरनी। आनंद के उर आनंद भरनी॥
सखिनु सहित भानोखरि गई। झांझी सुविधि सिरावति भई॥५६१
मिलीं परस्पर बाढ्यौ मोद। लाडू बांटे भरि भरि गोद॥
मंगल गावति घर कौं आंईं। सबहिं परस्पर देति बधाई॥५६२
करि आरतौ लई घर माइ। भूरि भाग्य अपनौ जु मनाइ॥
गोपिन ग्रह नित मंगल रहै। लली खेल सुख सरिता बहै॥५६३
खेल नित नये परहि न गनैं। को समरथ जो सब ही भनैं॥
नभ उडुगन ज्यौं अंत जु नांहिं। औपै कोउ २ गनें जु जाहिं॥५६४
राधा खेल जानि लिहु ऐसे। हौं लघु मति कहि सकौं जु कैसे॥
ब्रज लीला सब हीं रस मई। भावुक उरिनु प्रकास जु भई॥५६५
सागर पैलौ पार न लहैं। कितनौऊँ पैरो उत ही रहैं॥
ऐसैं राधा चरित दुराधि। जो वरनैं सु कृपा ही साधि॥५६६

दोहा झांझी खेली राधिका, घुर पूर्यौ अनुराग।

वृन्दावन हित रूप बलि, ब्रज जन उघर्‌यौ भाग ॥५६७।
बाल केलि श्री राधिका, मन कौं अति अभिराम।
नित आनन्द बरषत रहैं, कीरति जु के धाम ॥५६८।

* चौपाई *

इक दिन दही बिलोवत मात। राधा जागीं बडे ही प्रात ॥
अतिलडि कहै अंक मुहि लेहु। रानी कहै बिलोवन देहु ॥५६६
कैसें ग्वाल दुहत हैं गाइ। तहां मोहि ले चल जु दिखाइ ॥
बेटी तू अरबीली महा। प्रात हीं झगरौ ठान्यौ कहा ॥५७०
यह सुनि कैं जु गुस्सा मन भरी। माइ चिरावन की जिय धरी ॥
अछन अछन चली भीतर जाइ। दुरि बैठी जु कपाट भिराइ ॥५७१
सब दिसि लगी बिलोकन माइ। राधा कित हूं न परी लखाइ ॥
मन में अधिक चटपटी लगी। किधौं रूठि गई बाहिर भगी ॥५७२
आइ गयौ श्री दांमा भैया। ताकौं बूझन लागी मैया ॥
बेटा बहिन दृष्टि कहूं पड़ी। किहिं घर गई गुसा मन भरी ॥५७३
दधि परोंधि मैं डारी रई। वाहि गोद की अरबी भई ॥
मैं माखन काढन मन दियौ। जानि न पड़ी गवन कित कियौ ॥५७४
सखी मंडली आँगन जुरी। इन हूं तें न्यारी कहूं दुरी ॥
ललिता बेटी आगें आउ। तू कहूं ढूँढ़ि कुँवरि कौं लाउ ॥५७५
हँसति सबै चहुँ दिस कौं चलीं। खोज्यौ नगर बगर सब गली ॥
फिरि आंईं ऐसे सब बोलीं। मैया नगर बगर हम डोलीं ॥५७६
किन हूं न देखी बाहर जात। कहो बूझिये कासौं बात ॥
श्रीदांमा जब भीतर गयौ। वही कपाट जु खोलत भयौ ॥५७७
बीरहिं देखि कुँवरि हँसि परी। रानी रँचकि अंक तब भरी ॥
पुनि रानी बोली मृदु बानी। बेटी तू तौ निपट सयानी ॥५७८

इकली दुरि बैठी जु भवन में । क्यौं धीरज रह्यौ तेरे मन में ॥
राधा कह्यौ मानि मो लीजै । ऐसी गुमा न कबहूं कीजै ॥५७६
तब बोली अरबीली लली । हौं तौ ही बाहिर कौं चली ॥
आगे देख्यौ ठाढौ भैया । तब हौं फिरि घर आई मैया ॥५८०
तू दधि मथन लोभ मन करै । मेरी बात कान नहिं धरै ॥
अब हौं ताई के घर जैहौं । तेरे हाथ दही नहिं खैहौं ॥५८१
गहि गहि चिबुक मनावै माइ । पुनि रूठैं पुनि हँसि २ जाइ ॥
सुंदर गुडिया अब जु मगाऊँ । पुनि सुंदर जु वसन पहिराऊँ ॥५८२
मानि लेहु तू मेरौ कहनौं । पुनि सुंदर जु गढ़ाऊँ गहनौं ॥
सुन्दर चौकी नई गढ़ाऊँ । ता पै तो गुडिया बैठाऊँ ॥५८३
धरिबे कौं सुंदर जु पिटारी । पुनि गढाइ दैऊं तारौ तारी ॥
यह सुनि मुदित भई श्रीराधा । समुझि माइ की प्रीति अगाधा ॥५८४
लली कहति ललिता सौं ऐसें । बरनै निपट सयानी जैसे ॥
बाबा देस भयाने धनीं । मैया लाड करै विधि घनीं ॥५८५
श्रीदाँमा सौं को जग बीर । लायक सुन्दर गुन गंभीर ॥
बरसानें सम पुर नहिं अवनीं । खेलन कौं जु ठौर जहाँ कमनी ॥५८६
मेरी सी साथिनि हैं कहाँ । मन लिये संग फिरैं जहाँ तहाँ ॥
प्रमुदित महा माइ ढिग गई । कछु सन्देह जु बूझति भई ॥५८७
घर घर में उत्साह जु महा । यह त्यौहार कहावै कहा ॥
बेटी यह त्यौहार दिवारी । वैस वंश कौं अति ही प्यारी ॥५८८
मैया कै दिन रहे बताइ । याकी रीति भांति सब गाइ ॥
कीरति हँसी बचन अस कहे । बेटी अब दिन थोडे रहे ॥५८६
काकी ताई चित्रित भौंन । आउ देखि तू करि तहां गौंन ॥
कीरति पाक विविध विधि करैं लै लैं भीतर भवन जु भरैं ५६०

अगनित वधू टहल में लगीं। अति उत्साह फिरत रँग मगीं॥
चित्रकार रचि चित्र बनावैं। अप अपनी सुघरत्ता दिखावैं॥५६
मन्दिर राज अलंकृत ऐसो। सुर नर नाग लोक नहिं जैसो॥
चित्रित घर घर अटा अटारी। जगमग होति किवारीं बारी॥५६:
लीपे पोते सब घर अँगना। गोपी सबै फिरत मन मगना॥
नाना धातु करनि सब घसैं। चित्रित किये सदन अति लसैं॥५६३
ग्वाल अनन्त जु जाकें लार। श्रीदाँमा मधि राज कुँवार॥
बैठे जहाँ भयानें राइ। सुत ने सीस नवायौ जाइ॥५६४
दै असीस दियौ अंक लगाइ। अज्ञा दई शिंगारौ गाइ॥
गाँव गाँव बहु खरिक जु छये। जहाँ तहाँ दूत दौरि कैं गये॥५६५
रावलि पति के कहत फिरत भृत। भैया कीजौ गाइ अलंकृत॥
सुनि सुनि सब मन भरी उमंग। घसियन लागे नाना रंग॥५६६
ग्वाल शिंगारन गाइनु लगे। झूमरि गंदा गर जगमगे॥
बछियाँ चीतीं सुन्दर गात। पुर मंगल समूह दरसात॥५६७
मणि पट्टी सु बछरुवनि गरें। चन्दा मोर सीस पर धरैं॥
भवन भवन महकत पकवान। ग्वाल करैं सब हीरौ गान॥५६८
पुर वृषभाँन अलंकृत भारी। कुशल घोष आइ जु दिवारी॥
अजिर आइ कैं हटरी धरी। श्री राधा लखि आनंद भरी॥५६६
कहन लगी यौं कीरति मैया। हटरी पूजैगो तो भैया॥
बासर गयो भयो रजनी मुख। सब हिनु कें उर बढ्यौ परम सुख॥६००
नगर बगर बहु दीपक बरे। सजि सजि पंकति जहां तहां धरे॥
सात खननि लग रचना रची। कनक चौमुखे पंकति सची॥६०१
जास्नु वास्नु वीथिनु माहीं। दीपक रचना की मित नाहीं॥
द्युति धरें दिवारी जानौ कुँवरि दरस हित आई मानौ ६०२

गिरि कन्दरा सरोवरि कें तट दरसत दीपक सोभा संघट
पुर की उपमा नहिं सम तूल। मान्यौ फूल्यौ सोरन फूल ॥६०३
अस रचना जु घोष सब पुर २। देखि देखि फूलत सब उर उर ॥
दीपक रचना सब पुर भली। मुहि दिखाइ दै कहति जु लली ॥६०४
मचलि परी मन अरबी बढी। तब लै माइ सतखनें चढी ॥
गिरि की सिखर जु महल उतंग। कनक जटित मणि नाना रंग ॥६०५
कहै गाँवनि कें नाम जु लै कैं। बेटी देखि दृष्टि उत दै कैं ॥
वे गिरि ऊपर दीपक वरैं। जाइ गगन के तिमरहिं हरैं ॥६०६
वह कहिये जु नंद रजधानी। जिनकें धाम यशोमति रानी ॥
वे री! टौरें ऊचें ग्राम। ये संकेत परम अभिराम ॥६०७
वे दीपक जु पिसायें दरसैं। आज नोख अति सोभा सरसैं ॥
लगति खिदिर बन जोति सवाई। वे दीपक सोभित उमराई ॥६०८
ये कमई करहला मँझार। वे दीपक दरसैं जु सहार ॥
मरने अरु सिंवारि जग मगैं। नीम ग्रांम पुनि नीके लगैं ॥६०९
गिरि गोवर्धन दीपक लसैं। मानौं भाव अवनि के हँसैं ॥
वे दीपक सो तात सु धाम। मुखराई जु नगर कौ नाम ॥६१०
सीही पर सौं पाडर दमकैं। ये दीपक कुँजेरा चमकैं ॥
ये दीपक जु हाथिये ग्राम। वे जानू मैंरौली नाम ॥६११
रांकोली नारहैं जु सचे। वे दीपक इँदरौली रचे ॥
ये चिकसौली वे जु डभारें। वे दीपक जु बरे कनवारें ॥६१२
वे दीपक जु कामबन जहाँ। सुमुख गोप रजधानी तहाँ ॥
ये जु सुनहरा वे बजहेरें। ये जु मान गढ़ दरसतु नेरें ॥६१३
ये दीपक जु अकाते माहिं। वे ढिलावठी में दरसाहिं ॥
ये दीपक ऊँधां के बास वे महरानें लखि जु प्रकास ६१४

मंगल महा घोष के माँझ कनक फूल फूलीं मनो म.झ ॥
अब तू देखि तात कौ ग्राम। दीपक रचना सब ही धाँम ॥६११
गो घृत पूरति निर्मल जोति। रँगीं किंवरियाँ जगमग होति ॥
सब गाँवनि के नामनि सुनि२। श्री राधा आनन्दित पुनि२ ॥६११
मैया की ठोडी गहि लई। करज चटकि जननी बलि गई ॥
ऐसें कुँवरि प्रसन्न जु करिकें। लै आईं पुनि बाँह पकरि कें ॥६१७
गोपी मंगल गावति आईं। आदर दै जु भवन बैठाईं ॥
गोप संग लिये रावलि राइ। राज सिंहासन बैठे आइ ॥६१८
जुरि मिलि विप्र जु आये लार। भई पुजावन हटरीं बार ॥
आये बनिक जुहारी करें। कन्द खिलौंना भेंट जु धरें ॥६१६
पौंनि छत्तीस सबै मिलि आवैं। जो जो उचित सु भेंट चढावैं ॥
सब कौं पुनि दीजत हैं पान। यथा योग्य सबकौं सनमान ॥६२०
श्रीदामा राधा लै गोद। हटरी पूजत भरि मन मोद ॥
बैठे विप्र वेद धुनि करैं। आसिष वचन सबै उच्चरैं ॥६२१
दछिना बाँटत वल्लव राज। सनमानैं सब विप्र समाज ॥
खील बतासें हटरीं भरैं। मिश्री कन्द खिलौना धरैं ॥६२२
कीरति बांटति है पकवान। वधुनि असीस सुनति है कान ॥
खील बतासिनु ढेर कराइ। बैठी कुँवरि अजिर में आइ ॥६२३
सखियनि की ओली लै भरैं। नाम सम्भार सबनि की करैं ॥
एक एक कौं बोलि जु लेंहिं। गुझिया कन्द खिलौना देहिं ॥६२४
आजु दिवारी मंगल राति। सोदर तात मल्हावति जाति ॥
दैंहि लैंहि बाइनौं जु घर घर। करैं शिंगार फिरैं नारी नर ॥६२५
भान भवन उत्साह जु महा। सोभा भीर वरनिये कहा ॥
गो घृत पूरित दीपक करैं जैसें सब रजनीं भरि बरैं ६२६

गोप कुँवर मिलि हीरों गावैं। श्रीदामा को सुविधि रिझावैं ॥
अपने अपने टोलिन राजैं। वेंनु विषान बाँसुरि बाजैं ॥६२७
श्री वृषभान बोलि सब लये। ओलिनु भरि पकवान जु दये ॥
सिमिट्यौ मही भान परिवार। भोजन करत सबै मिलि लार ॥६२८
नाना विधि पकवान जु परसे। भोजन करत स्वाद सुख सरसे ॥
बाबा ढिग राधा श्रीदाम। बूझत पकवाननि कौ नाम ॥६२९
नाम लेत मुख देत जु कौर। आनन्दित गोपिन सिरमौर ॥
पूरन भये आचमन लेत। रावलि राइ पान पुनि देत ॥६३०
नौ हूं वन्धु जु पुरजन संग। अतर फुलेल सु चरचतु अंग ॥
वडडे गुनीं करत हैं गान। रावलि धनी सुनत दैं कान ॥६३१

दोहा—सब ग्वालिन कौ संग लै, खरिक गये श्री दाम ॥
थापे पीठि जु माड हीं, लेत गऊनि के नाम ॥६३२॥
कान जगावैं गउनि के, चौंकित हैं बल मान।
राज भवन आये बहुरि, करत जु हीरो गान ॥६३३॥

* चौपाई *

श्री राधा कौं जब सुधि आई। अपनी मदनी गाइ मँगाइ ॥
नाना धातु चित्र तन किये। थापे माडि पीठि कर दिये ॥६३४
सुन्दर घंटा गर पहिरायौ। जो अमोल मणि नगिन जड़ायौ ॥
सींग सुनहरी जटे जु लाल। मणि पट्टी दमकति हैं भाल ॥६३५
झबियां कनक भरी मखतूल। मनहुँ स्याम कमलनि के फूल ॥
मदनी गरें जु लै पहिराइ। धौर बरन तन अति छवि पाइ ॥६३६
झूल परी सकलाती पीठ। पूंछ चरन रँगे रँग मजीठ ॥
रूपै मढीं खुरी अति चमकति। पन्ननि की हमेल उर दमकति ॥६३७
थार भरयौ पकवान जिमायौ मुख पुचिकारि पीठ कर लायौ

जल भरी कुडी जु आगे धरी मदनी की परिक्रमा करी ॥६३९
कीरति मैया आगे आउ। मदनी कौं तू हू सिरनाउ ॥
लली कह्यौ त्यौं कीरति कियौ। मदनी देखि सिरायौ हियौ ॥६३९
कीरति बैठी बधुनि समाज। मंगल राति जगावन काज ॥
राधा कौं पय पान कराइ। पुनि दीनीं सज्या पौढाइ ॥६४०
इष्ट मिष्ट जस बधुनि गँवावैं। लली लला की कुशल मनावैं ॥
बीती निसा भोर ह्वै गयौ। सुख जु दिवारी इहि विधि लयौ ॥६४१
परिवा कुल कृत सब विधि कियौ। गोधन पूजि दियौ सुख लियौ ॥
भैया द्यौज होहिगी प्रात। यह सुनि राधा फूली गात ॥६४२

दोहा—भैया द्यौज जु प्रात है, सुनि लै कीरति माइ।
वीर जिमांऊँ प्रीति सौं, नाना पाक बनाइ ॥६४३॥
नौं हू भाननि के कुँवर, सब श्री दाम समान।
तिनकौं सुविधि जिमाइ हौं, प्रातहि रचि पकवान ॥६४४॥
मंगल निधि त्यौहार बड, कहति दिवारी एह।
राधा हरि दरसन करन, व्रज जु आइ सदेह ॥६४५॥
श्री हरिवंश प्रसाद यह, कियौ संक्षेप बखान।
ऐसैं ही व्रजराज घर, उत्सव दीपक दान ॥६४६॥
वृन्दावन हित रूप बलि, दुहुँ घर अस कौतूह।
गौर स्याम सुख लाड हित, दीपक रचै समूह ॥६४७॥
ज्यौं उत्सव रविजा कियौ, दुतिया बीर जिमाइ।
त्यौं जु करत वृषभानुजा, मङ्गल महा मनाइ ॥६४८॥
जनक मुदित जननी मुदित, मुदित सकल परिवार।
उत्सव भैया द्यौज, श्री राधा कियो बिस्तार ॥६०॰।

*** चौपाई ***

रजनी बीती भोर जु भयौ। अतिलडि सबकौं न्यौतो दयौ ॥
राज सुता यह उत्सव मान्यौं। घर घर सब हीं पुर में जान्यौं ॥६५०
कुँवरि पास ललितादिक आई। न्यौंतो दै दै सब हि बुलाई ॥
श्रीराधा की साथिनि प्यारी। फूली फिरैं जु गोप दुलारी ॥६५१
जूथ २ मिलि निकसीं पुर ते। अति अनुराग द्रवै जिन उर ते ॥
सोभित करत भान पुर अवनी। एक तें एक कुँवरि अति कवनी ॥६५२
किधौं एक ही सांचे ढारीं। किधौं एक ही कलम सँवारीं ॥
किधौं विधाता इनकौं न्यारौ। यह विधि तरसैं दरस विचारौ ॥६५३
तिन मधि श्रीराधा शिरमौर। जाकी सम इह श्रृष्टि न और ॥
कौतिक मुदिता सुख संजुता। गावति निकसीं जस रवि सुता ॥६५४
इहि बिधि पुहुप बाटिका गईं। पुनि भानोखरि आवति भईं ॥
कुसुम चढ़ाये जल शिर नाइ। भईं प्रसन्न भान सर न्हाइ ॥६५५
नौतन पाटम्बर तन सचे। कुसुमनि के आभूषन रचे ॥
कनक वेलि सी फूलीं सबै। तात भवन कौं गवनी तबै ॥६५६
कहति कुँवरि सुनि कीरति माइ। नाना विधि के पाक बनाइ ॥
पाक रचन लागे बहु जनैं। बेटी तो पै परहिं न गनैं ॥६५७
अधिक उमाहैं भरी जु डोलै। काहें मो सौं मुख हूं न बोलै ॥
प्रात कलेऊ तू कर लेती। मोहि काम तब करन जु देती ॥६५८
आजु न कियौ कलेऊ लली। रूठी कै मानी रंग रली ॥
हँसि हँसि जाइ कहैं नहिं बात। तब लगि मन्दिर आए तात ॥६५९
गहमह होति भवन में महा। कहि राधा आजु उत्सव कहा ॥
रचियत है नाना बिधि पाक। आज कहाँ कौ जै है छाक ॥६६०
हँसि पुचकारि गोद भरि लई राधा ने ऐसें कहि दई

मै न्यौत्यौ श्रीदामा भैया पाक रचित है मेरी मैया ॥६६१
पहिल जिमाइ बीर को दैं हौं। ता पाछें जु ग्रास हौं लैं हौं॥
धर्मराज रविजा जु कहानी। सो मैं सुनी माइ मुख बानी ॥६६२
भैया द्यौज कहत हैं यासौं। मो मन प्रीति बढ़ी है तासौं॥
बीर भेंट तेरी कहा करि है। कहा पाइ तू आनन्द भरि है॥६६३
यह मांगि हौं हौं सुख पाइ। मेरी गुडिया देइ न बगाइ॥
सुनि राधा की भोरी बात। मैया हँसी हँसै पुनि तात ॥६६४
श्रीदामा सौं कह्यौ बुलाइ। बेटा बेगै आवौ न्हाइ॥
यह बालक जु अधिक हठ परी। नाहिंन आजु कलेऊ करी ॥६६५
उत्सव मान्यौ भैया दूज। अब कछु गहरु करै जनि तूज॥
तोहि जिमाइ करैगी भोजन। कुँवरि आजु लीयौ है यह पन ॥६६६
अरी बहिनि हौं जेऊँ पाछें। तू करि लेहु कलेऊ आछे॥
भैया आजु मानि हौं हौं न। तू भोजन करि है जो लौं न ॥६६७
एकत भये कुँवर नौ भान। गवने भान सरोवर न्हान॥
राधा रविजा सुनी कहानी। बीर जिमावन अरबी ठानी॥६६८
बेगि न्हाइ कै चलौ जु भैया। करुना भींजति बाबा मैया॥
आये न्हाइ सबै नर नारी। परबी परी भान सर भारी ॥६६६
वह जु भानु जा या सर भान। सब हिनु कीनौं प्रात स्नान॥
द्विजन दान दै पुनि घर आये। रचि रचि तिलक शिंगार बनाए॥६७०
भोजन कौं सब कुँवर बुलाये। आदर करि जु भवन बैठाये॥
श्रीदामा कहै सुन री माइ। राधा हाथ मोहि परसाइ ॥६७१
लघु भाजन भरि लै लै आवैं। आनन्दित ह्वै बीर जिमावैं॥
रँवकि चलै भाजन गिरि परै। तब हीं अतिलाडि कौतिक करै॥६७२
आउ आउ री बेगी माइ। मुहि यह भाजन देहु उठाइ

हँसि २ कहै श्रीदामा बीर। बहिनि पियौ मदनी को खीर॥६७३
बात भेद की बूझौ मोहि। तो में बल जु कहाँ ते होहि॥
मैया बहुत निहोरौ कियौ। बड़ी गाइ कौ दूध न पियौ॥६७४
मैया अब खिराइ जिनि मोहिं। मैं जु आजु न्योत्यौ है तोहि॥
अब हौं बड़ी गाय इक लैहौं। ताही कौ दधि माखन खैहौं॥६७५
मदनी सों जु प्रीति अति मेरी। ताहि राखि हौं आपनें नेरी॥
मैया बहिनि लाड की बात। सुनि सुनि जननी जनक सिहात॥६७६
कीरति कहति सुनौ अतिलडी। मो उर करुना उपजी बड़ी॥
जेंवत बीर जेंइ तू लली। हौं परसौं सब कौं विधि भली॥६७७
तिलक बीर कें माथे धरौं। मैया तब हौं भोजन करौं॥
मुहि बहकावति भोरी जानि। तेरी बात लेहुं क्यौं मानि॥६७८
सब जेंवैं सब हँसि हँसि परैं। सुनि सुनि बात मोद मन भरैं॥
परसति कीरति कर बर थार। राधा कुँवरि फिरत है लार॥६७९
भोजन करि सब पूरन भये। जल आचमन पुनि सब लये॥
कुँवरि देत बीरीं रचि पान। मैयनि कौं कर कर सनमान॥६८०
बैठे कुँवर पालथी मारि। मनु फूली सोभा फुलवारि॥
रोरी अच्छित थारनु धरैं। तिलक सबनि के माथे करैं॥६८१
मृदु पद चलत पैंजनीं बाजैं। रोरी रंजित कर जु विराजैं॥
अरी राधा तू भूलि जु गई। बांटत मोहि न बीरी दई॥६८२
दौरि दौरि कें पुनि लै आवें। श्रीदामा के हाथ गहावैं॥
मैया हौं भूली नहिं तोहि। बार बार दौरावे मोहि॥६८३
तात बोलि कें अंक जु लई। अधिक प्रसन्न अतिलडी भई॥
रविजा धर्म कहाई कथा। वेद व्यास बरनी है जथा॥६८४
उत्सव लोक प्रचुर यह कीयौ। मैया बहिनि सिरायौ हियौ

ऐसे गावन लागी भाम । रविजा को जस अति अभिराम ॥६८५
भेंटे धरत हँसति लखि लली । प्रफुलित मुख वारिज मनु कली ॥
लेति वारनें देति असीश । भैया सब हीं नवावत सीश ॥६८६
छोटे करनि हलावति जाति । देखि देखि कैं माइ सिहाति ॥
अरी बहिन अब तू कहि मोहि । प्यारी अधिक वस्तु कहा तोहि ॥६८७
मोकौं प्यारी मदनीं गाइ । ता सिर कौं झूमरि जु बनाइ ॥
अति सुन्दर मखतूल मँगाइ । मोतिनु के झूमकि जु लगाइ ॥६८८
मदनीं के सिर सोभा पावैं । यह खिलौना मोकौं भावैं ॥
सोदर कह्यौ बनाइ जु दैन । अस सुख बरष्यौ कहत बनें न ॥६८९
भोजन करति कुँवरि गौरंग । ललितादिक बैठी सब संग ॥
ढिंग लै बैठे रावलि धनीं । बूझत कहि मेरी कंचन तनी ॥६९०
तैं मन बडौ जु धीरज धर्यौ । अब लगि नाहिंन भोजन कर्यौ ॥
तात बन्धु मोहि अति हीं प्यारौ। वहिनि बीर यह उत्सव न्यारौ ॥६९१
हौं जु लाड सोदर ते चहौं । नित गावति जु मल्हावति रहौं ॥
औरनि के सोदर जु अनेक । मेरे सोदर लायक एक ॥६९२
दोहा—समझि बडी पुनि बैस लघु, नृप मन रहे विचार ।
　　जैसे काहू न लखि परै, सागर पैली पार ६९३॥
　　भोरी यह भोरी सखी, जिन संग सदा जु मेल ।
　　ऐसी समुझ कहाँ लही, खेलति भारे खेल ॥६९४॥
　　कोउ लौकिक कोउ अलौकिक, कहति वचन तुतराइ ।
　　होयौ बिलोयौ प्रेम ने, दहलैं रावलि राइ ॥६९५॥
　　सैनय सनय आचमन लियौ, कहि न सकत यह बात ।
　　लै बीरी घूँमत चले, बचन विचारत जात ॥६९६॥
　　जेंयौ पुर परिवार सब, अचमन बीरा लेत

भान वंश की नन्दनिनु भेटैं वांछित देत ॥६६७॥
कीरति जु भोजन करति, परसति कुँवरि अनूप।
अचरजि में छकि रहति हैं, लखि गौरंग स्वरूप ॥६६८॥
अतिलडि खेलन यह जु नित, भान भवँन यौं होत।
वृन्दावन हित रूप कौ, नित नव विपुल उदोत ॥६६९॥
उत्सव भैया दौज यह, कियौ संछेप प्रशंश।
दरसि पर्यौ अनियास उर, कृपा जु श्रीहरिवंश ॥७००॥
सब लोकन को मुकट मणि, बरसानौं कमनीय।
राधा पद अंकित भई, जहाँ ललित अवनीय ॥७०१॥
बाल चरित औरो मधुर, बरनौं हित परसाद।
अनुरागिनु के उर बढै, सुनत अधिक अहलाद ॥७०२॥
कुल ढाँढिन ने भोर ही, दीनी आइ असीश।
सुख संपति दिन दिन बढौ, कीरति रावलि ईश ॥७०३॥
चिरजीवौ राधा लली, अरु सोदर श्रीदाम।
मंगल देखौं नित नयौ, हौं जु तुम्हारैं धाम ॥७०४॥
दछिना भैया दूज की, लै गई गोद भराइ।
श्री राधा बूझन लगी, ठोडी गहि कैं माइ ॥७०५॥
बैठी जननी गोद में, कुँवरि कहति लडकाइ।
मैया रावलि पुर कहां, याकौं मोहि बताइ ॥७०६॥
रावलि पति रानी कहैं, मैया तुहि सब कोइ।
रावलि कैसौ धाम है, मुहि दिखाइ दै सोइ ॥७०७॥
बेटी अरबीली परयौ, याही तैं तौ नाम।
बात अनोखी बूझिही, करन देहि नहिं काम ॥७०८॥
मांगि खिलौना और कछु, पट भुषन जु अनूप

रावलि देहि दिखाइ तौ, जनक जु रावलि भूप ॥७०६॥

* चौपाई *

जाइ पिता को कर गहि लियौ। मन में रोष अधिक बढ़ि गयौ ॥
दधि कौ भाजन दियौ लुढाइ। नैंननि मींडैं पटकैं पाइ ॥७१०
मोकौं माइ रुठायौ तात। मानीं नाहिं जु मेरी बात ॥
मैं रावलि देखनि की कही। उनि न सुनी मैं ढोरी दही ॥७११
यह सुनि बहुत हँसे वृषभान। लई मनाइ कह्यौ लै जान ॥
लली दही तैं ढोरी हाथ। हौं न चलौंगी तेरे साथ ॥७१२
यह सुनि कै बाहिर कौं भगीं। रानी तब उठी पाछें लगी ॥
बजनि पैंजनि रुनझुन पाइ। सुनि सुनि मैया अधिक सिहाइ ॥७१३
पौरी जाइ अंक भरि लई। बदन चूंबि पुनि लाडति भई ॥
मैया हौं मानौंगी तब हीं। रावलि चलन कहै तू जब ही ॥७१४
तब हँसि बोले श्री वृषभान। राधा एक बात सुनि कान ॥
दूजौ माठ ढोरि पुनि दह्यौ। बेटी मानि मो जु यह कह्यौ ॥७१५
दौरि आइ लगि मेरे अंक। बातें करि तू निपट निशंक ॥
कुँवरि सुनि बाबा की बानी। ताकत चली जु दही मथानी ॥७१६
दोहा—दधि मथनी पुनि ढोरि कै, दौरी चरन उठाइ।
बाल चरित लखि कुँवरि कौ, प्रमुदित रावलि राइ ॥७१७॥
तारी दै अतिलडि हँसी, अजिर भई दधि पंक।
मैया कौं जु चिरावही, बैठी बाबा अंक ॥७१८॥

* चौपाई *

मैया कहति सुनौ री लली। ये बातें तू सीखी भली।
काम बिगारि चली जु पलाइ। मोहि चिगवति है बलु पाइ ॥७१९
ह्यां ते गुडिया लेहु उठाइ। अब तू राखि तात ढिंग जाइ

मेरो बेटा है श्री दाम । सो कबहूं न बिगारै काम ॥७२०
अधिक लाडली तात जु करी । मोते रंचक नाहिंन डरी ॥
कबहूं बातें करै सयानी । कबहूं होय तू निपट अयानी ॥७२१
दिन दिन गहति हठीली बानि । मेरी तनक न राखति कानि ॥
मैया तू रूखी जु निराट । रावलि की न दिखावै बाट ॥७२२
तोहि चैन तब लगि नहिं दैहों । जब लगि हों रावलि नहिं जैहों ॥
सुनि २ कै अतिलडि की बानी । दै मुख अंचल मुसकी रानी ॥७२३
सिखै सिखै वृषभान चिरावैं । मीठी बातें सुनि सचु पावैं ॥
मैया तो बातनि न पत्यै हों । तेरे संग ननसार न जै हों ॥७२४
अब तू क्यों मोसौं अनख्याइ । रावलि देहिं बाबा जु दिखाइ ॥
बचन अमीं से पीवति जाइ । रूखी सी मैया बतराइ ॥७२५
लली ढीठ तू भई जु दीखी । घर के काम बिगारन सीखी ॥
जाहिं अथाईं रावलि राइ । तब तू बैठे को ढिग आइ ॥७२६
दूध कटोरा को भरि प्यावै । नई पहेगी कौन सुनावै ॥
बेटी सिख मानै नहिं मेरी । परि गई रूठनि बान जु तेरी ॥७२७

दोहा–तात गोद बैठी लली, मोतें नाहिं डराइ ।
रूखी बातें करति हैं, सिखवत रावलि राइ ॥७२८॥
मो सों बैठी रूठि कै, रावलि दरश उमाह ।
लाडी कौन गवाइ हैं, नियरो आयौ ब्याह ॥७२९॥

* चौपाई *

जब मैया अस बात जु कही । बाबा कौ मुख देखि जु रही ।
बाबा कही बात तब हरैं । बेटी अब जु जाइ लग गरैं ॥७३०
जौ रूदया तौ करै न माइ । गुडिया लै है बीर चुराई ॥
सुनि यह सीख तात की भली । मैया सन्मुख दौरी चली ७३१

नाहिं नाँह कीरत जू करै ललो चिपट गई गाढी गरै ॥
रानी लीनीं प्रेम दबाइ । लाड करत नहिं मन जु अघाइ ॥७३२
दोहा—तात मात मन क्रम वचन, कीनौं चलन विचार ।
साजन लागे रथ सकट, अनुचर ताही बार ॥७३३॥

* चौपाई *

आनन्दे सब ही मन माहि । रावलि देखैं रविजा न्हांहि ॥
पुर के उमहे सब नर नारि । चलैं वढौ यह लोभ विचारि ॥७३४
कुटुम्ब सहित मिलि नौं हूं भान । रावलि सन्मुख कियौ पयान ॥
बड़े बड़े गाडा जुति चले । नर बाहनि बहिली रथ भले ॥७३५
श्री राधा कीरति कें पास । बैठी मन अति भरी हुलास ॥
रावलि पति जब रथ पर चढे । विप्रन वचन आसिका पढे ॥७३६
सबहिं कुँवरि चढि चले तुरंगनि। सुविधि नचावत भरि रस रंगनि ॥
पुरिते निकस गोइरैं आइ । सबहि सम्हारि २ बुलाये ॥७३७
करहा सकट चले लदि भार । चार्यौ वरन लिये नृप लार ॥
मंगल वचन द्विजन उच्चरे । भान चरन रावलि दिशि धरे ॥७३८
माला मृगनि दाहिनीं आई । किलकि कुँवरि मैया हि बताई ॥
जननी इन कौ नाम जु लेहु । नीके मुहि समुझाइ सु देहु ॥७३६
बेटी इन कौ नाम जु हरना । राति दिना बन मांहि विचरना ॥
जहाँ तहाँ दरसैं सुन्दर अवनी । ब्रज मण्डल नव कुंजें कमनी ॥७४०
कुँवरि संग आठौं जु सहेली । तात मल्हावैं गावैं भेली ॥
फूले तरु वल्ली बहु भांति । तिन्हैं लडैती देखति जाति ॥७४१
वारिज फूले सर गँभीर । तरुवर तुंग जु तिन कें तीर ॥
गुंजे अलि खग चहचर करैं । सब काहू के मन कौं हरैं ॥७४२
कानन सोभा औरै और । विरमि रहैं सब हीं सब ठौर ।

रविजा दरस दूरि तें भयौ। सब मन बाढयौ आनन्द नयौ ॥७४३
तीर आइ कैं वन्दन कियौ। न्हाइ अमी सम जल पुनि पियौ ॥
फूल चढ़ावैं दछिना देहिं। विप्रनि की जु आसिका लेंहिं ॥७४४
श्रीकीरति जू कुँवरि न्हवाई। पुनि बन्दन करि आपुनु न्हाई ॥
भेंट समर्पी नाना रीति। रविजा जस गावति करि प्रीति ॥७४५
जै जमुना जग पावन करनी। मंगल रूपी मुनि जन वरनी ॥
महा तेज धर रवि नंदनी। अनुजा धर्म जगत वन्दनी ॥७४६
अभय दान प्रानेतनि कौं दैन। वारि दरस होइ हिय दृग चैन ॥
तो जल कन परसै जिहि गात। तातैं डरैं दूत तो भ्रात ॥७४७
श्रीवृषभान बन्धु जुत न्हाइ। दई सवच्छ विप्रनि कौं गाइ ॥
कुल की मानि रवि सुता जानि। यातें पूजी अति हित मानि ॥७४८
पकवाननि की गाठ जु खोलि। देहिं लेहिं सब कौ सब बोलि ॥
भोजन करि आनंदित भये। पुलिन मनोहर देखन गये ॥७४९
हंस हंसनी रविजा कूल। देखि कुँवरि मन बाढी फूल ॥
कहि मैया तू इन कौ नाम। ये उज्जल जु परम अभिराम ॥७५०
इनकी मुनि जन करत प्रसंश। बेटी ये जु कहावत हंस ॥
मैया इक मगाइ इन छौंना। मोकौं प्यारौ लगै खिलौंना ॥७५१
जेवैं कहा कहा इन रीति। इन पंछिनु में कैसी प्रीति ॥
बेटी यह मोती ही चरैं। नहीं मिलैं तौ लंघन करैं ॥७५२
सदा एक ही संग जु रहैं। पलक बिछोहो नाहिंन सहैं ॥
आये उलटि जु वाही बाट। जहां पार उतरन कौं घाट ॥७५३
नौका बैठि पार सब भये। महा मुदित मन रावलि गये ॥
अपनो राज भवन है जहाँ। रावलि पति प्रवेश कियौ तहाँ ॥७५४
भेटैं लै पुरवासी धाये। मिलै सबै सादर बैठाये

* चौपाई *

पुर बनिता सब गावति आईं । कीरति जू मिलि ते बैठाईं ॥७५५
राधा देखत आनन्द भरीं । भेंट धरीं न्यौछावर करीं ॥
करीं जनम दिन की सी रीति । वैसायैं सब मन बाढी प्रीति ॥७५६
रावलि मंगल साज्यौ घर घर । भरे सनेह फिरैं नारी नर ॥
वैसोई करैं दान सम्मान । वैसौईं पुर वीथिनु में गान ॥७५७
वही नछत्र विसाखा आयौ । अतिलडि तन उबट्यौ रु न्हवायौ ॥
बरस गांठि कोसौ शिंगार । मैया करति भई इहि बार ॥७५८
सखिनु सहित अतिलडिहिं जिमावैं। धरि २ भेंट सबहि दुलरावैं ॥
सुख में बीत्यौ दिन पुनि राति । छिन हूं सम जानी नहिं जाति ॥७५६

दोहा—राधा सबकें जाइ घर, सब हीं मानैं मोद ।
मन बच क्रम जु असीम देहिं, विधि तन करि२ गोद ॥७६०॥
सर्वेश्वरि जनमीं जहां, पुरी अलौकि एह ।
न्याइ बढै यौं जानियै, या रावलि सौं नेह ॥७६१॥
यह रावलि रँग बरषनीं, जहाँ गड्यौ राधा नार ।
वृन्दावन हित रूप बलि, तहाँ अस मंगल चार ॥७६२॥
संपति श्री हरिवंश की, राधा चरित जितेक ।
वृन्दावन हित रूपनिधि, हौं बरनौं जु कितेक ॥७६३॥
रजधानी वृषभान की, रावलि रविजा तीर ।
खेलति हरि अहलादनी, तहाँ सखियनि लिये भीर ॥७६४॥
देखन गोकुल महावन, हठ कीयौ गौरंग ।
भोर चले वृषभान जू, सब परिकर लै संग ॥७६५॥

* चौपाई *

आनन्दित सब ही मन भये । पुनि गोकुल जु महावन गये ।

नन्दभवन देख्यौ अभिराम जहाँ जनम लियौ सुन्दरश्याम ॥७६६
कान्ह कुँवर दुरि माटी खाई । रानी कौं सो ठौर बताई ॥
सकटासुर भंज्यौ इहिं धाम । दई बचाइ लियौ घनस्याम ॥७६७
बकी पापिनी इहि ठाँ मरी । काहू देव जु रच्छा करी ॥
त्रिनावर्त्त व्योम ते परयौ । बालक उबरयौ पापी मरयौ ॥७६८
बहुरि राव तिहिं ठौर पधारे । जहाँ उखारि दोउ तरु डारे ॥
ह्याँ नारायण करी सहाइ । दाँम बंध्यौ लियौ बीच बचाइ ॥७६९
माट फोरि दियौ दधि ढरकाइ । बान्ध्यौ दाँम यसोमति माइ ॥
बाल केलि करी मोहन जहाँ । रेती रमन निहारी तहाँ ॥७७०
सब ही ठौर चिन्हार कराइ । चले आपु घर रावलि राइ ॥
भई प्रसन्न राधा अतिलडी । जहाँ तहाँ देखी रचना बडी ॥७७१
आगें ह्वै सब पुरजन लाये । भूपति भवन आपनें आये ॥
दिन दिन के जु चरित्र अनेक । कहाँ लगि वरनौं रसना एक ॥७७२
पुरजन गोप सबै मिलि आवैं । रावलि पति कौं माथौ नावैं ॥
बैठे सब मिलि सभा बनाइ । मधुरी प्रभुता कही न जाइ ॥७७३
सुर अभिमान आपनें जरें । कैसें इनकी सरवर करें ॥
राधा रविजा नीर कलोलें । सखियनि बाहाँ जोरी डोलें ॥७७४
अँजुरि भरि-भरि जल सब सींचैं। कर बर चलैं आँख पुनि मींचैं ॥
कीरति रानी टेरि बुलावैं । खेल रच्यौ मन सुनि बहरावैं ॥७७५
अंग अँगोछति जल तें निकसीं। पुनि पट भूषन सचि मन विकसीं॥
कर दृग ढांपे पाछैं रहि कै । सब कहैं भट्ट नाम दै कहि कै ॥७७६
धाइ जाइ कैं कर गहि लाई । माइ लाड जुत सुहथ जिमाइ ॥
सुखित किये सब रावलि वासी । गिरा वदन विधु श्रवत सुधा सी ॥७७७
राधा कहति सुनौ री सखी । अपनी जनम भूमि अब लखी

धनि धनि तात मात सुखदैंन। मुहि यह भूमि दिखाई नैंन ॥७७८
मेरो नार गड्यौ इहि धाम। न्याइ लगे यह प्यारौ ग्राम ॥
कीरति सुनि ओट तें बात। प्रेम पुलकि भइ सब हीं गात ॥७७९
अरी बैस लघु मेरी बेटी। बात फुरैं याहि प्रेम लपेटी ॥
कीरति कथा नृपति सौं कही। उनि हूं के दृग वारि जु बही ॥७८०
अवधि भुराई अतिलडि माहिं। चतुराई की ह्व मिति नाहिं ॥
नारद मुनि यौं करी प्रसंश। अहलादिनि प्रगटी तुम वंश ॥७८१
ऐसेंई लच्छन जानैं परैं। जनमत निधि सिधि भवन जु भरैं ॥
यौं कहि कैं पुनि चुप ह्वै गये। मन करि दई मनावत्त भये ॥७८२
रानी कोऊ दांत न धरौ। देखी कौं अनदेखी करौ ॥
शिव विधि कैं गिरि कौ परशाद। यामें अधिक न करौ विवाद ॥७८३
कुँवरि ललितपुर वीथिनु डोलै। सखिनु मंडली मध्य कलोलै ॥
लाड तोतली बातें कहै। सबकौ उर सुख भींज्यौ रहै ॥७८४
बासर सब खेलत ही जाइ। रजनी खेलैं मन्दिर आइ ॥
लोक अलौकिक खेल अनंत। सबहि रस मई परैं न गंत ॥७८५
महाभाग कीरति सुख लह्यौ। सहस वदन हूँ परहि न कह्यौ ॥
पलिका ऊपर बैठी लसैं। गावति है रविजा कैं जसैं ॥७८६
राधा कुँवरि विराजै अंक। जो निन्दति हैं निकर मयंक ॥
राका निसा बढी ससि ज्योति। मणि मन्दिर में जगमग होति ॥७८७
देखि देखि कैं राधा कहै। मैया तू किनि ऊँचे चहै ॥
या चन्दा कौं इहाँ बुलाइ। हौं देखौं जु निकट तें जाइ ॥७८८
यामें इतौ उजेरौ का है। यह बूझन हौं रहौं उमाहै ॥
नियरें तें सब परिहै सूझि। यह सन्देह बाहि लेउँ बूझि ॥७८९
बिहँसति मुखमनु बारिज कली। अति अरबीली बारी लली

सिही ओढनी मे तन दिपै समि दामिनी दुति निरखत छिपै७९०

दोहा—कीरति राधा वदन दिश, चितवति बारम्बार ।

बेटी भोरी निपट तू, कहाँ सुन्यौ यह जु विचार ॥७९१॥

* चौपाई *

मचलि रहै पुनि ठोडी गहै । मैया सों पुनि पुनि यों कहै ।

अरी भली मेरी कीरति माइ । चन्दा कौं अब हीं जु बुलाइ ॥७९२

हौं तब हीं पाऊं आनन्द । मो खेलन जु बुलावै चन्द ॥

बेटी चन्द खिलौंना नाहीं । वह दिखि बसतु गगन के माहिं ॥७९३

मैया कहा बहरावति मोहि । हौं सोवन नहिं दैहौं तोहि ॥

गहि गहि अंचल ऐंचैं लली । हगि सलोल दरसति छबि भली ॥७९४

कीरति सोचति है मन माहिं । यह मचली हठि तजि है नाहिं ॥

कुँडी फटिक मणि नीर भराई । लै जु अजिर कैं मध्य धराई ॥७९५

बेटी मैं दिखि चन्द्र बुलायौ । दरशन दैन अवनि पर आयौ ॥

राधा किलकति तारी दै दै । टेरति नाम सखिनु के लै लै ॥७९६

सब हीं आवौ बेगी धाइ । चन्द बुलायौ मेरी माइ ॥

कुँवरि टेरि सुनि आईं भगी । सबहिं चन्द कौं देखन लगी ॥७९७

बेटी याकौं ढापि जु धरौ । अब तुम रंचक विलम्बु न करौ ॥

पुनि रानी बोली मुस्काइ । खुल्यौ रहै तौ यह भगि जाइ ॥७९८

ढक्यौ कुँवरि लै कंचन थार । माइ राखि दै कोउ रखवार ॥

मेरी मैया बड़ी दयाल । चन्द बुलाइ दियौ इहि काल ॥७९९

बेटी अब तुम सोवौ जाइ । प्रात खेलियौ मो ढिग आइ ॥

करि व्यारू पौढी अतिलडी । प्रात उठी खेलन रुचि बडी ८००

मैया तैं नहिं पहिरौ दयौ । कुँडी खोलि चन्दा भजि गयौ ॥

मैं देखी जु खुली यह परी । रही जहां की तहांइ धरी ८०१

कहति अतिलडि सखियनि मांझ चन्दा फिर आवैगो सांझ ॥
आजु राखि हैं जतननि करिकै। देइ कपाट घर भीतर धरि कै ॥८०२
सुनि २ यह अतिलडि की बानी। बदन मोरि मुस्कानी रानी ॥
हँसि २ सबहिं कलेऊ करैं। मैया के उर आनन्द भरैं ॥८०३
कीरति राजें बधुनि समाज। आग्ज बनितनि की सिरताज ॥
दान मान सब बिधि सुखदायक। रावलिपति रानी अस लायक ॥८०४
पूरन करनी ऐसी करी। राधा सी बेटी उर धरी ॥
लालन पालन इहिं विधि करैं। रजनी द्यौस न जान्यौ परैं ॥८०५
श्रीराधा अग्रज श्री दाम। तात मात प्यारौ छवि धाम ॥
कीरति भान लाड के भाजन। सुख दैहिं गोपी गोप समाजन ॥८०६
भान कुँवरि सब ही सुख दायक। पुर जन मोद बढावन लायक ॥
वल्लव कुल के जस कौं धरैं। तात मात अज्ञा अनुसरैं ॥८०७
जिनमें गुन देखियै गरिष्ट। फली भान कुल बेली मिष्ट ॥
प्रभु दीनी मथुरी रजधानी। मान अमानिनु कौं बड दानी ॥८०८
दोहा–रावलि कौ रानौ विदित, लोक लोक सब ठौर ॥
अहिलादिनि जा घर सुता, अस सुकृति की और ॥८०९॥
धनि रावलि रविजा निकट, सुर बांछित जहाँ वास।
निगम दुराधि जु राधिका, तिहिं ठाँ कियो प्रकाश ॥८१०॥

* चौपाई *

श्री वपु कियौ प्रकाश जु तहाँ। भान वंश रजधानी जहाँ ॥
महिमा महत जाति नहीं कही। राधा पद अंकित जिहि मही ॥८११
लोकनि को जस लागै हरुवौ। रावलि जस सब तें भयो गरुवौ ॥
रविजा तट राजति जु रवानी। सारद छबि कहि सकति न बानी॥८१२
महा रमा विचरैं जु सदेह। अचल संपदा गोपिन ग्रेह

जाकी महिमा निगमनि गूढ । कीरति गोद रहति आरूढ ॥८१३
पद रज वांछित शिव मनमाहीं । बिना अनुग्रह प्रापति नाहीं ॥
विहरति गोप सुतानि मंझार । अतर्कि रचना बनै न विचार ॥८१४
मुनि जन सदा अराधैं जाहि । गोपी बैठी खिलावै ताहि ॥
राधा सब आनन्दनि मूल । मंगल सबै रहै अनुकूल ॥८१५
पुरी अलंकृत हैं सब ऐसी । उपमा नहिं लोक कहौं कैसी ॥
महल उत्तंग नये पुनि बनैं । बाग लगाये सरवर खनैं ॥८१६
गोपुर चारि उतंग जु महा । सोभा निकर बरनिये कहा ॥
कोट कँगूरा अति ही कमनी । अति मोहनी जहाँ की अवनी ॥८१७
चौखूँटे जहाँ चौक बजार । मणिनु चौतरा सब अगिवार ॥
जगमगाति वीथीं सब द्वार । नग मणि कुंदन जटित किंवार ॥८१८
नौ भांतनि के सदन जु न्यारे । मणि नग खचित अथाई द्वारे ॥
पारिजात बहु वृक्ष जु जहाँ । अलि सौरभ लैं गुंजत तहां ॥८१९
देवनि भवन पुरी चहुँ ओर । अगर धूप लखि निर्तत मोर ॥
सुखित जु दान मान भुव देव । रवि कुल तिलक करैं तिन सेव ॥८२०
ठौर ठौर राजैं चटसार । नाना विद्या पढ़त कुँवार ॥
चार्यौ वरन बसैं जा पुर में । परम धर्म रति सब के उर में ॥८२१
रविजा तट बहु मणि मय घाट । सौरभ पूरि रही पुर बाट ॥
नाना विधि के पंछी लसैं । चहुँ दिशि उपवन तिनमें बसैं ॥८२२
विधि रचना की उपमा कौन । अस राधा जु तात कौ भौंन ॥
सब हिय जिय दायक अहिलाद। बरन्यौ श्री हरिवंश प्रसाद ॥८२३

दोहा—वृन्दारण्य सुधामिनि, ब्रह्मादिकनि अलक्ष्य ।
सो या रावलि नगर में, खेलति है परतक्ष्य ॥८२४।
जो आनन्द को निकर है, ताहू आनन्द दैन

भान वंश की महा मणि, अमृत वरषनि चैन ।।८२५।
कौतिक मुदिता सोभनी, अति सौभाग्य उदोत ।
बाल चरित बरनन करत, हिय अतुलित सुख होत ।।८२६।।
दिन दिन की लीला ललित,फुरित होइ मम चित्त ।
रसना सुविधि लडाइयै, वृन्दावन हित नित्त ।।८२७।।
खानि भरी मानिकनि सौं, चहियै तितने लेहु ।
कृपन बिसाहि सकै नहीं, खानिहिं दोष न देहु ।।८२८।।
बाल कुमार पौगंड पुनि, लीला ललित किशोर ।
रसिक जौहरिनु उर मचे, चरित रतन नहिं ओर ।।८२९।।
भाव गम्य लीला जु यह, फुरि है गुरु गम रीति ।
कहा लौकिक कहा अलौकिक, परचै नहिं बिनु प्रीति ।।८३०।।
बन्दो रावलि पति सुता, जाके चरित गरिष्ट ।
तिन हीं कौं दरसैं भजैं, जिनकैं इन पद इष्ट ।।८३१।।
श्री हरिवंश सुदृष्टि करि, प्रेम संचरै हीय ।
राधा चरित जु लागि हैं, ताही कौ अति प्रीय ।।८३२।।
हित रूपी ब्रज की कथा, बरनी भांति अनेक ।
वृन्दावन हित मुहि रुची, हित नाते विधि एक ।।८३३।।
कबहूं बरसाने बसैं, कबहूं रावलि माहिं ।
तात मात रुचि लिये रहैं, कुँवर लाड मित नाहिं ।।८३४।।
रावलि तैं चाहत चल्यौ, बरसाने वृषभान ।
सजे सकट रथ पालकी, अस्विन किये पलान ।।८३५।।

* चौपाई *

रावलि बास बहुत दिन कियौ । पुर जन सुख दीयौ पुनि लियौ ।।
सुधर्म रति नर पुर में रहैं । राज प्रताप उदो नित चहैं ८३६

तिन को कीयौ पुर रखवारे । आपु भान पुर कौं पगधारे ॥
राधा कहति इहाँ रहौ तात । अति सुख उपजत रविजा न्हात॥८३७
हँसि पुचकारि चढ़ाइ रथ में । सखनि संग लै गवने पथ में ॥
रसिक भक्त जन की बल भुजा । नदी नदिन की जो सिर धुजा ॥८३८
वंदत सुर मुनि नर जु समाज । जग पावनि अनुजा धर्म राज ॥
दरसि परसि पुनि पार जु भये । न्हाइ दान विप्रनि कौं दये ॥८३९
गिरि गोवर्धन सन्मुख आवें । श्याम कुंड लखि अति सुख पावें ॥
कीरति जू को पीहर जहाँ । वल्लब राज बसे निशि तहाँ ॥८४०
कीरति जू हरषी मन गात । भेंटति भई मात पितु भ्रात ॥
राधा प्रान सुधन सौ पाई । आंको भरि नानी जु सिहाई ॥८४१
इंदुसैन रावलि पति मिले । मानौ सुख के सागर भिले ॥
श्री दामा राधा लै गोद । नाना भर्यौ परम मन मोद ॥८४२
असन बमन करि आदरु दियौ । भेंटि परस्पर हरष्यौ हियौ ॥
माइ ग्रेह कीरति आनन्दित । आइ आइ भाभी पद वन्दित ॥८४३
पुर बनिता पद वंदन करैं । श्री राधा कौं आंकौं भरें ॥
धन्य भाग सब मानति भई । कुँवरिहिं देखि मगन ह्वै गई ॥८४४
गिरि पूजन श्रीकीरति चली । संग लई श्री राधा लली ॥
हाँडी डलनि पाक भरवाइ । लिये जननि कैं सीस धराइ ॥८४५
पंच नाद मंगल धुनि भई । गिरि कैं निकट सबै मिलि गई ॥
कुँवरि हाथ गिरिवर पुजवायौ । मेवा पाक सु भोग धरायौ ॥८४६
मंगल गावैं भरी सनेह । करैं बीनती गिरि सौं एह ॥
सुन्यौ दयाल तू जु गिरिराज । कुशल राखियौ गोप समाज ॥८४७
गिरि जु महा हरषित सो भयौ । मनु सदेह ह्वै दरसनु दियौ ॥
कमनी कुँज लसति चहुँ ओर । सैल शिखर पर निर्त्तत मोर ८४८

ठौर ठौर अस झरननि नाद । करति कन्दरा मनहुँ विवाद ॥
फूलै फलैं बहुत तरु जाति । उग्र भाग संपति दग्माति ॥८४६
नाना रंगनि पंछी लसैं । अनुरागी जु सैल इहिं बसैं ॥
नाना धातु अंग जिहिं दरसैं । मनु भूषण पहिरैं छवि सरसैं ॥८५०
गुपत प्रगट गिरि रूप दिखायौ। श्रीराधा इहिं भांति जिमायौ ॥
अचवन दै आरतौ करायौ । सादर बधुनि सीस तब नायौ ॥८५१
गिरि प्रसन्नता जानी परी । सबहिनु मिलि परिकरमा करी ॥
गिरि चहुँ ओर कुंड अति कमनी । मंगल रूप जहां की अवनी ॥८५२
कुँवरि संग गावति हैं अली । मुखरा लै अपने घर चली ।
कीरति रही बहुत दिन पीहर । पुनि मन कियौ चलन अपने घर ॥८५३
नित नव आदर मुखरा कियौ । भाँति २ सुख दीयौ लीयौ ॥
बिदा करन कौं मुखरा कहैं । ऐ पै मन करि नाहिंन चहै ॥८५४
ये कहैं चलन राखि लेइ मैया । पुनि बरजै भाभी अरु भैया ॥
राधा कौं परचाइ जु लीयौ । नानी ने अति ही हित कीयौ ॥८५५
बहु बिधि खेल खिलावैं माई । कुँवरि कहैं मां रहौ इहांई ॥
जो तेरे मन वडो हुलास । बेटी रहि तौ नानी पास ॥८५६
बड़े भोर बरसाने जै हों । राधा तोहि संग नहिं लै हौं ॥
सुनति दौरि बाबा पै गई । गोद बैठि यों कहति जु भई ॥८५७
मैया मो सौं भई उदास । राखि जान कहै नानी पास ॥
यों कही महा रोस मन भरी । घर चालिबे की अरबी धरी ॥८५८
लई पुचिकारि गोद में तात । मीठी मीठी कहति जु बात ॥
कहि अपनी जु माइ सौं जाइ । तू जिनि रंचक मन जु डराइ ॥८५९
हों जैं हौं बरसानें प्रात । तू रहि नानी के घर मात ॥
दौरि गइ ऐसें हीं कही । मैया देखि वदन दिसि रही ॥८६०

सुनि मान्यौ सबहिनु मन मोद। नानी लई कुँवरि भरि गोद ॥
राधा सुधन पाइ सब हरषैं । निशि बासर जु लाड सुख वरषैं॥८६१

दोहा–यौं भांननि परिवार सब, पट भूषन पहिराइ ।
कीरति कौं कीनी विदा, लायक मुखरा माइ ॥८६२॥
राधा कौं निरषत बदन, तृपत होत दृग नाहिं ।
रहे कछुक दिन और हूं, यह सब के मन माहिं ॥८६३॥
नित राखैं नित होंहि विदा, ऐसौ बढ्यौ सनेह ।
कीरति हू मन रुचतु अति, तात मात कौ ग्रेह ॥८६४॥
रावलि पति करि बिनती, विदा भये बरजोर ।
अपनौ संग समाज लै, चले बरसाने ओर ॥८६५॥

* चौपाई *

जब यह खबर नगर में गई । सब के तन मन फूलनि भई ॥
मंगल दर्बि धरै सब द्वार । छये जरी पट हाट बजार ॥८६६
पुर के लोग लेन कौं आवैं । जुवती जन मिलि मंगल गावैं ॥
मंगल कलश वधुनि कैं सीश । द्विजवर आये देत असीश ॥८६७
पंच नाद धुनि होत जु जहां । नगर सींव सब आये तहां ॥
पद नवनी करि भेंटैं देंहिं । दै सन्मान भेंटि पुनि लेंहि ॥८६८
जहां तहां जै जै धुनि होइ । पुहपांजलि वारैं सब कोइ ॥
काहू कौं लै अंक लगावैं । काहू ओरी कर जु उचावैं ॥८६९
काहू कौं दृग करि सन्मानैं । प्रान समान सबनि कौं जानैं ॥
श्रीवृषभान पौरि पुर आये । तब गहरे नीसान बजाये ॥८७०

दोहा–सबहिं सुविधि सनमान दै, राधा तात कृपाल ।
पुर प्रवेस कियौ सुभ घरी, जै धुनि भई तिहिकाल ८७१

* चौपाई *

घर घर में गहमह ह्वै रही। पुर की शोभा परत न कही ॥
वल्लव कुल के मुकुट जु मनी। विदित जु देस भयाने धनी ॥८७२
आये भवन सुखित सब किये। पुर बासिनु भये शीतल हिये ॥
करि करि असन मनायौ चैन। रजनी कियौ सबनि सुख सैन ॥८७३
बड़े प्रात हीं राधा जगी। मैया कौं जु जगावन लगी ॥
रानी उठौ कलेऊ देहु। मेरौ वचन मानि तुम लेहु ॥८७४
बेटी अब हीं रजनी घनी। उर लगाइ लई कंचन तनी ॥
कुक्कुट बोल्यौ सुन री माइ। उनि हीं दीनो भोर जनाई ॥८७५
तू कत बहरावति है मोहि। अब न देउँगी सोवन तोहि ॥
पसर चलीं खरिकनि तें गाइ। तें रांभति सुनि कान लगाइ ॥८७६
गहि २ अँचल को झकझोरैं। चिबुक प्रलोवैं लखी निहोरैं ॥
मोकौं भूख लगी है भारी। कहति अतिलडी भान दुलारी ॥८७७
सुनत सुता की ऐसी बानी। हिय अकुलाय उठि तब रानी ॥
कुँवरि वदन विधु किरनि जु सरसैं। भोर भयो तहां कैसे दरसे ॥८७८
दांतिनि चौकी बैठि कराई। मैया माखन मिश्री लाई ॥
जेंवति लली बहुरि यौं कही। माइ लाइ दै गाढौ दही ॥८७९
जो जो माँग्यौ सो सो दियौ। अति रुचि मानि कलेऊ कियौ ॥
ललितादिक आई सब पास। खेलन कौ मन बढ्यौ हुलास ॥८८०
तोता मैंननि कौं पुचकारैं। कुँवरि चुगौ अपने कर डारैं ॥
लाड करत मन नहीं अघाइ। बहुत दिननि में देखे आइ ॥८८१
पीरी पोखर खेलन आई। गोझा भरि भरि मेवा लाई ॥
कूरम पुनि मछरीनु चुगावैं। वे जल ते कढि बाहिर आवैं ॥८८२
तहां इक आयौ बीना धारी। रचन लग्यौ वह कोतुक भारी ॥

नाचै गावै बीन बजावै। हियौ प्रेम सौं भरि भरि आवै ॥८८३
सबहिं मुदित भईं बीना सुनि कैं। एकत ह्वै ढिंग गईं जु पुनि कैं॥
देखि रहीं तिहिं ओर जु सबै। मन करि कै अवधूत जु नवैं ॥८८४
बार बार परिकरमा करैं। बार बार उर आनन्द भरैं॥
भिच्छा मांगै हाथ पसारि। करि मेवा जु धरैं सुकुँवारि ॥८८५
सरस्यौ प्रेम बिबस ह्वै गयौ। निरखि कुँवरि मन अचरज भयौ॥
अवनी लोटैं बात न कहैं। नैंननि सौं पानी सो बहै ॥८८६
श्रीराधा कौं आगे करिकैं। भजीं गाँव दिसि सब हीं डरिकैं॥
श्रमित भई सब कोमल गात। कछु २ निसरति मुख ते बात ॥८८७
पीछें देखैं पुनि पुनि मुरि २। कीरति पास गईं सब जुरि २॥
चकित थकितसीं सबहीं बाला। मनु औदरी मृगिनु की माला ॥८८८
कीरति सबहिं निहारि निहारि। पुचकारति पौंछति मुख वारि॥
बेटी तुम कातें हो डरी। मो कौं ऐसी जानी परी ॥८८९
मैया इक अवधूत जु आयौ। उनि नीकें सुर बींन बजायौ॥
हम आगें उनि निर्त्त जु करयौ। दृगनि कछु पानी सौं भरयौ ॥८९०
बोल्यौ नहिं दियौ हाथ पसारि। मैं दियौ मेवा गोझा झारि॥
बडे स्वास लियौ हमैं निहारि। अवनीं लोट्यौ बींना डारि ॥८९१
ऐसौ कौतिक वाने करयौ। देखि सबनि ही कौ मन डरयौ॥
काहू कौं धीरज नहिं रह्यौ। आई भाजि सु तो सौं कह्यौ ॥८९२
बेटी जो बींना हो अंक। तो क्यौं तुम मानी उन्हि संक॥
बे जु कृपा सब ही पै करैं। उनि ते कोऊ भोरे डरैं ॥८९३
तेरो जनम भयौ हो जबै। गंडा वे रचि लाये तबै॥
गर पहिराइ जु रच्छा करी। तब तें मेरी कुँवरि न डरी ॥८९४
कर वर धरि गये तेरे सीस। बेटी वे जु कृपालु मुनीस।

[illegible] ॥८९५

लाडू धरि दिये सब के हाथ खेलति अजिर सबै मिलि साथ
काउँ काउँ करि कागा धायौ, कुँवरि हाथ करि ताहि चुगायौ ॥८९६
बदन फारि पुनि सन्मुख आयौ। करतें लाडू कुँवरि बगायौ ॥
सबहिं सखिनु मन संका भई । लली भाजि मन्दिर दुरि गई ॥८९७
हँसति हँसति कीरति जू आई । बेटी तोहि काग डरपाई ॥
कारे काग कुरूप महाई । तैं मेरी लाडिली डराई ॥८९८
राई लौंन उतारति रानी । बहुरि वारि पियौ आपुनु पानी ॥
कीरति की प्राननि संपदा । लली लाड भींजी रहै सदा ॥८९९
भेष बदल मुनि देव जु आवैं । भान पौंरि रज तन लपटावैं ॥
कुँवरि सकल सुन्दरता सार । खेलति गोप सुतानि मंझार ॥९००
गढ विलास इक कौतिक रच्यौ। कुशमि दलनि सिंहासन सच्यौ ॥
भान सुता कौं राजा करचौ । कुशम छत्र रचि माथें धरचौ ॥९०१
ललिता कौं मंत्री जु बनायौ । चँवर विसाखा कर जु ढुरायौ ॥
एकनि गहि लावैं बर जोर । महाराज पकरचौ यह चोर ॥९०२
एकनि पै जु अनुग्रह करैं । इक डरपैं इक पाइनु परैं ॥
इक फल लावैं भेंटैं धरैं । इक मुख विनय वचन उच्चरैं ॥९०३
एक दूत ह्वै कैं बनि चलैं । एक सन्देसो कहति जु भलैं ॥
इक ह्वै गाइन सुविधि रिझावैं । इक मन वांछित रीझ सु पावैं ॥९०४
इक बातें करि करि जु हँसावैं । एक आसिका दै दै आवैं ॥
एक चलैं इक तिन कौं टोकैं। एक छरी लियें एकनि रोकैं ॥९०५
एक राज की फेरैं आन । एक जु करै मतौ लगि कान ॥
चलैं कहूं को सैंना साजि । इक भय मानि देखि चलैं भाजि ॥९०६
दोहा—खेल जु बाल विनोद के, अति प्रिय अति अभिराम ।

भोजन बिरियां जानि कैं, सबि उठि चलीं जु धाम ॥६०७॥

* चौपाई *

मैया कहाँ रही प्यारी । मेरे प्रान सुधन सुकुँवारि ॥
खेलत तू कबहूं न अघाई । डोलत गयो वदन मुरझाइ ॥६०८
जो रोकौं तौ रूठि जु रहै । रूखी रूखी बातें कहै ॥
ऐसें कहि भोजन करवायौ । नैंन प्रान अति ही सुख पायौ ॥६०९
वासर बीत्यौ रजनी भई । माइ सुवाइ आपु ढिग लई ॥
कहि मैया सुन्दर जु कहानी । आगे जे भये राजा रानी ॥६१०
राजा ब्रज परजन्य जु भयौ । तिन सुन्दर तप कौ ब्रत लयौ ॥
तेरह बरष महा तपु कियौ । गवरीपति तिन कौं वर दियौ ॥६११
पाँच पुत्र ह्वै हैं कुल दीप । तिनमें नन्द जु घोष महीप ॥
घरनीं नाम बरेयसी रानी । पांच पुत्र जाये सुख दानी ॥६१२
सानंदा जु नन्दनी नाम । ये द्वै सुता परम अभिराम ॥
जनें चार सुत दूजी घरनी । श्री प्रजन्य की निर्मल करनी ॥६१३
श्री उपनन्द धरा ध्रुव नन्द । पुनि अभिनन्द नन्द जगवन्द ॥
सुठि सुनन्द पुनि निर्मल नंद । करमा धरमा भरे आनन्द ॥६१४
सुनि अतिलडि सुंदर जु कहानी। राजा नन्द यशोदा रानी ॥
तिनके पुत्र परम अभिराम । प्रगट भयौ श्रीकृष्ण सु नाम ॥६१५
कीरति कही कथा सुख सनी । निद्रा वश भई कंचन तनी ॥
रजनी अधिक भई सुख मई । जानि न परी बीति कब गई ६१६

दोहा—सुख ननसार जु सुनि कथा, राज खेल विस्तार ।
बरन्यौ राधा कुँवरि कौ, बाल चरित्र उदार ॥६७१॥
मन दै सुनी जु नृप कथा, बेटी रावलि राइ ।
वृन्दावन हित रूप बलि, बरनी कीरति माइ ६१८

रस आलय लीला ललित, कहाँ लगि करौं प्रशंस।
प्रचुर करन जग अवतरीं, स्वामिनी श्री हरिवंश ॥६१६
ढूँक मींचनी कौ जु अब, बरनौं खेल अनूप।
दै हैं सुमति चिताइ मम, गुरुवर श्री हित रूप ॥६२०
जै आनंद कदंबिनी, भान वंश उत्पन्य।
कहत सुनत रस मय चरित, ते जन जग में धन्य ॥६२१
कौतिक बपु कौतिक कथा, कौतिक जा कौ धाम।
कौतिक खेल जु नित रचित, हौं बलि राधा नाम ॥६२२
परम धन्य ब्रज लोक यह, धनि बरसानौं ग्राम।
परम धन्य भयौ गोपकुल, नित मंगल जिन धाम ॥६२३।

* चौपाई *

ढूँक मीचनी खेलन जाइ। सब सखियनि कौं संग लगाइ॥
ललिता बैठारी इक ठौर। जाई दुरन कौ सब हीं ओर ॥६२४
इन्दु लेखा के मूँदे नैंन। ललिता कहति जु ऐसें बैन॥
मुहि छवि जीतैगी सोई। यह गहि लावै हारै जोइ ॥६२५
यौं कहि दियौ सबै जहां जुरी। न्यारे न्यारे भवननि दुरीं॥
नैंन खोलि बोली मुस्काइ। तू अस काहू कौं गहि जाइ ॥६२६
इंदु लेखा यह सुनि के चली। धर्म भान घर की गहि गली॥
गह्यौ चित्रलेखा कौ हाथ। हँसति हँसति लै आई साथ ॥६२७
सब भेंटी ललिता सौं आइ। फूलति अपनी जीति मनाइ॥
अब मीचीं चित्रा की अँखियां। दुरन गईं पुनि सब हीं सखियां ॥६२८
जहां तहां सब हीं दुरि गईं। आंखि खोलि ललिता ने दईं॥
चित्रा चकृत करति विचार। एक गोप कैं गई जु द्वार ॥६२९
इक गोपी नें सैंननि कह्यौ। जाइ विशाखा कौ कर गह्यौ

चित्रा हँसति कहति पुनि ठाडी। याकी आँखिया मीच अब गाढी॥६३०
सब पटकावनि लागीं तारी। अब की बेर विशाखा हारी॥
श्री राधा मुस्काइ जु कही। किहिं विधि तैं जु विशाखा गही॥६३१
यह जु सबनि में स्यानी महा। पहिले गहि लइ कहिये कहा॥
आँखि मूंदि कैं ललिता रही। जाइ दुरौ यौं सब सौं कही॥६३२
सावधान हूजौ तुम सबै। हौं खोलति इहि आँखि जु अबै॥
सब दुरि रहीं स्वास नहिं भरैं। गहि लैवै तें मन में डरैं॥६३३
आँखनि संपुट खोलि जु दियौ। गहि लावन कौं उद्दिम कियौ॥
कोंने छिपी पकरि लई जाइ। मन जु बिसाखा अधिक सिहाइ॥६३४
रँगदेवी जू चतुर खिलारि। अब क्यों तैं जु मनाइ हारि॥
सब नाचैं सब कूक्यौ करैं। हँसि २ चिबुक आंगुरी धरैं॥६३५
अरी भट्ट कोउ कछु जिनि कहौ। ललिता आंखि मूंदि इहि रहौ॥
यह सब गई और ही ओर। यह लै फिरी जु घर २ टोर॥६३६
चरन खोज लखि तित कौं धाई। जात हीं दुरी सुदेवी पाई॥
और देखि जहां तहां ते भगीं। ललिता कौं जु छुवन सब लगीं॥६३७
सखी सुदेवी भोरी भारी। उभकन लागी इन जु निहारी॥
रंगदेवी लाइ तिहि घेरी। सब हीं हँसति वदन तन हेरी॥६३८
राधा कहति दुरि तू कहाँ। इनि गहि लई पहिल हीं तहाँ॥
आंखि मिचाइं ललिता हाथ। ये भई न्यारी तजि २ साथ॥६३९
ललिता ने तब खोले लोचन। लगी सुदेवी मन में सोचन।
कौंन पाइसें किहि दिशि जैये। बडी चतुरता ही गहि लैये॥६४०
यह जु उपाय सुदेवी करैं। चम्पक लता हाथ ज्यौं परैं॥
नापि लिये हें ताके पाँइ। खोज तकित वाही घर जाँइ॥६४१
वह बैठी भीतर ओबरैं। दै क्विार मुख मौंन जु धरैं

इक लरिका खेलै तिहीं पौंरि। कही सुदेवी मों तिन दौरि ॥६४:
एक दुरी है या घर माहिं। जाइ सुदेवी गहि लइ बाहिं ॥
और जु ललिता सन्मुख धाईं। कहैं हम जीती किलकति आईं॥६४:
कहति चातुरी इन जु अति करी। बड़े जतन करि मैं यह पकरी॥
यह जु खेल में कबहूं न डरती। सखी कूट सबहिनु की करती ॥६४४
ऐसी हू कों हौं गहि लाई। मीचौं आंखि छूटि न जाई ॥
चम्पक लता चतुर सब महियाँ। क्यौं पकराई या पै बहियाँ ॥६४५
बुद्धि ऊथली हम अब तोली। श्री राधा तब ऐसें बोली ॥
हाँ री हाँ परि है अब जानी। सब बोलति अप अपनी बानी॥६४६
आंखि मींचि ललिता मुस्काइ। दुरन चलीं सब हीं जु मिहाइ ॥
लैंन चलीं यह पूरब टोर। ये सब दुरी जु पच्छिम ओर ॥६४७
उतकैं जात एक नें लखी। ये सब दौरि धाइ गई सखी ॥
चम्पक लता फिरी पछमनी। ललिता ढिग देखी सब जनीं ॥६४८
कूट करन कोउ आगें भगी। हारी हारी कहन जु लगी ॥
उपरैंनी जु गोमटी करि कैं। सब हीं लीनी आगें धरि कैं ॥६४६
ललिता कहति भटू क्यौं चिरैं। देहु पोत पाछैं किनि फिरैं ॥
कीरति की लाडली सिखावै। सब पै मेरी कूट करावै ॥६५०
दूरि भई मुसकति है ठाडी। मन में फूल अधिक है बाढी ॥
अब तू मोपै आंखि मिचाइ। कौन कौंन मों लरि है जाइ ॥६५१
ललिता कहति पच्छ लै बानी। राधा की जु मिलनियां जानी॥
अब कै पोति परायौ देहु। बहुरि जाइ काहू गहि लेहु ॥६५२
सजनी आंखि मिचावति भई। सब दुरि जाउ सु आज्ञा दई ॥
खोलि २ री लोचन ढँपनीं। हौं अब जीति मनाऊँ अपनीं ॥६५३
अरबरात है पर बस घुँटे। खँजन मनु पिंजरनि ते छुटे ॥

चली चौंप अति मन में धरिकैं। लाऊँ काहू बेगि पकरि कैं ॥६५४
घर घर फिरैं उपाइ जु करैं। कोऊ याकी दृष्टि न परैं ॥
एक वधू इक घर तें निकसीं। चम्पकलता देखि कै बिकसी ॥६५५
तासौं अति आधीन जु भई। वात भेद की उनि कहि दई ॥
बछिया बछरा हैं जिहिं भौंन। तुँगविद्या जु तहाँ कियौ गौंन ॥६५६
मन भायौ जु वचन उन कह्यौ। चाहति ही याही कौ गह्यौ ॥
सुधि पाई तहाँ दूरी गई। बरजोरी जु अंक भरि लई ॥६५७
सबै भईं इक ठौरी जहाँ। लै आई ललिता ही तहाँ ॥
लली कछु न औसर बनि आयौ। तुंगविद्या क्यौं नाम धरायौ ॥६५८
प्यारी जू अब ललितहिं खिलावौ। इहाँ विशाखा कौ बैठावौ ॥
बोली कुँवरि कही तैं भली। तब ललिता दुरिवै कौं चली ॥६५९
बडडे नैंन ढांपि लिये दुहुँकर। कह्यौ सखी दुरि जाउ सु घर२ ॥
वह देखन जु अधिक अरबरैं। गाढैं कर जु विशाखा करैं ॥६६०
सबै दूरि दुरि गईं जब जाँनी। तब दृग खोलि दिये जु सयानी ॥
तुंगविद्या सोचति मन ऐसें। ललिता हाथ लगैं मो कैसें ॥६६१
इन्दुलेखा जु अटारी दुरि कैं। देखति ही खिरकी लगी मुरि कैं॥
दृष्टि परी कह्यौ गह्यौ न तोहि। ललिता कहाँ बताइ जु मोहि ॥६६२
उनि जिहिं ओर आँगुरी करी। इनि धप वाही ओर जु धरी ॥
अछन अछन गई धरति जु पाइ। करि गहि ललिता लई उठाइ ॥६६३
गावौ गावौ री सब गीत। मैं पाई सर्वोपरि जीत ॥
सब के दृग मीचे इन पुनि २। याकै गाढैं मींचौ अब सुनि ॥६६४
ललिता के ढाँपौ दृग लाल। बढि २ बहुत कहति है बाल ॥
तुंगविद्या कियौ सबकौ चीत्यौ। ललिता कौं जु खेल में जीत्यौ ॥६६५
मीचे नैंन गाढ करि अँजुरी। दूरी दूरी सब जाइ जु दुरी ॥

खोले नैंन जाह अब जहाँ दुरि २ बैठी है सब तहाँ ।।६६६
जाके गहैं जीत हौं पाऊँ । ललिता कहै ताहि गहि लाऊँ ।।
गोरंगी सब की शिर मौर । या बिनु हौं न गहौं अब और ।।६६७
बुधि बल यह जु बिचारत भई । ना जान्यौं कित कौ है गई ।।
काहू पै जु भेद लै लीजे । तब गहिबे कों उद्दिम कीजे ।।६६८
बगर बगर खोज्यौ सब ग्राम । राधा लखी न काहू धाम ।।
अपनी ही बैठक में गई । मैंये हू न दिखाई दई ।।६६६
दीपक हूं शीतल करि दीनौं । बोलन हूं जु मौन गहि लीनौं ।।
आवत जात न काहू लखी । फिरत निहारति ललिता सखी।।६७०
महा चतुर गोपनि की बेटी । सब हीं आइ विशाखहिं भेंटी ।।
ललिता हूं व्हांई फिरि आई । कहति मैं न कहूं राधा पाई ।।६७१
ललिता तुम न काहू छियौ । पोत दूसरौ चहियै दियौ ।।
जब लगि श्रीराधा नहिं आवैं । तब लग पोत न कोऊ पावै ।।६७२
हारि तुम्हारे हीं यह बाटैं । ललिता तुम्हैं बनै नहिं नाटैं ।।
राधा कुँवरि और घर नाहिं । चलौ बड़े घर हीं अब जाहिं ।।६७३
अंक बहुत उहि चरननि तलैं । तिन कौं हौं पहिचानति भलैं ।।
दीपक जोरि लेहु धरि हाथ । सब खोजति चलौ मेरे साथ ।।६७४
खोज चलैं गवनैं तिहिं ओर । मिलि है हमें हमारौ चोर ।।
दीपक जोरि लये द्वै चारि । चली खोज लगि सबहि निहारि।।६७५
एक कहैं जु यहै वह खोज । एक रचैं कछु औरैं चोज ।।
अरी चौंकि हैं कीरति माइ । जौ यह बात कहै कोऊ जाइ ।।६७६
बाबा की जु पौंरि लौं गई । तहाँ जाइ सब ठाढी भई ।।
जौ राधा है रावर माहिं । तौ काहू बिधि छिपि हैं नाहिं ।।६७७
लरिकनि कौ जु सोर अति सुनिकैं। खिरकी रंचक उभकीपुनिकैं

चन्द उदौ किधौं दामिनि लसीं। ललिता निरखि मन्द मुख हँसी ॥६७८
अरी भट्ट पाछें पग धरौ। दीपक जोति जु शीतल करौ ॥
सनय सनय इकली चली गई। औचक आइ अंक भरि लई ॥६७९
जौ तुम तनिक मोर ह्याँ कर्यौ। तौ सब खेल रहैगो धर्यौ ॥
तब मिलि गई बिशाखा पास। कुँवरि देखि मन बढ्यौ हुलास ॥६८०
प्रमुदित सबै कुलाहल करैं। अप अपनीं बानी उच्चरैं ॥
कोऊ कहै जु ललिता हारी। लाई खोजि सबै सुकुँवारी ॥६८१
कोऊ कहैं नाहिं री नाहिं। यही जु गहि लाई हैं बाहिं ॥
श्री राधा मानी रँग रली। कौतिक देखति हैं बिधि भली ॥६८२
ललिता कहै न्याव अब करौ। झूँठि साखि न कोऊ भरौ ॥
राधा सौं सब हीं की प्रीति। ऐ पै करौ खेल की रीति ॥६८३
जौ अब राज कुँवरि हम गनिहैं। लेहु विचारि खेल नहिं बनि हैं ॥
चम्पकलता यौं जु उठि बोली। हौं हूं संग सबनि लिये डोली ॥६८४
कैसो पोत जु माँगति अबै। लाई ढूँढि भट्ट हम सबै ॥
ललिता कहैं सुनो मो बैन। तुम आई जु देखि सब नैंन ॥६८५
दुरी हुती भुज भरि हौं लाई। तुम यह कैसी धूम मचाई ॥
रौंटिस करैं ते खेल न बनैं। बात तुम्हारी को सखी गनैं ॥६८६
ललिता ढूँढि जु हम पै आई। तैं जु कही मैं कुँवरि न पाई ॥
तब हम सब लागी तो लार। खोज लेत गई राज द्वार ॥६८७
हम उपाइ कियौ तब तू लाई। अब माँगन लगि जीति बधाई ॥
ललिता कहति पच्छ तू करै। झूँठ बोल तें नाहिंन डरै ॥६८८
बिनु छिये आवति पलाइ। मिलती जौ रु बिशाखैं आइ ॥
दूजौ पोत सखी हौं देती। बचन मानि सब हीं कौ लेती ॥६८९
बिगरत खेल कुँवरि जो जाँन्यौ। पोत दैंन अपने मुख मान्यौं

मीचौ आंखि विशाखा आइ । सब कौ दुरिबै देहु पठाइ ॥९९०
यह सुनि कै ललिता मुसिकानी। मेरी बात कुँवरि नें मानी ॥
बिलम्ब न करि अब तू जु विशाखा। करि सब की पूरन अभिलाषा॥९९१
लई विशाखा कर उपरैंनी । तब मुसिकानी सारंग नैंनी ॥
सूहे बसन ढांपि दृग लये । कौतिक दरशन लागे नये ॥९९२
सुन्दर चपल मीन बिवि खरे । ते अनुराग जाल मनु पड़े ॥
किधौं खेलत हैं खंजन छैया । बसन उठाइ खाइ गई मैया ॥९९३
सोभा राशि मनौं सची धरी । सोभा नें मनु आँकौं भरी ॥
साथिनि सबै परम अनुरागी । बदन कुँवरि को देखन लागी ॥९९४
मन हुँ जलद अनुराग मयंक । ढांपि लियौ तद्दपि निरसंक ॥
खंजन जोट अंक तिहिं खेलैं । सबल जलद कौं चहत बगेलैं ॥९९५
श्रीराधा की अस छबि दरसैं । आंखि मीचनीं यह सुख बरसै ॥
सखी सोर सब करन जु लगी । चहूं ओर दुरिबें कौं भगी ॥९९६
झीनें बसन माहिं लखि लई । जिहिं घर दुरन जु ललिता गई॥
दूरि गई वे तू सुनि लेहु । मेरे नैंन खोलि अब देहु ॥९९७
खुलै नैंन इत उत जु निहारैं । वाही घर ओरी पग धारैं ॥
कुँवरि जबहिं उहिं पौरी धसी । घर रखवारि देखि कै हँसी ॥९९८
श्री राधा लखन पहिचांनि । या घर दुरी लई जिय जांनि ॥
जाइ अजिर में ठाडी भई । मन करि उक्ति उपाई नई ॥९९९
अरी भटू इक मेरो चोर । आयौ है तेरे घर ओर ॥
लखी कहा उनि चोरी करी ! ऐसे कहि कै पुनि हँसि परी ॥१०००
नाहिं नाहिं मुख सौं बतराति । सैंननि माहिं बतावति जात ॥
छूवै छूवै सबै विशाखा अंग । आइ मिली प्यारी के संग ॥१००१
सखियनि सौं जु अजिर भरि गयौ महा कुलाहल ता घर भयौ

तकति फिरैं लिये सखियन भीर। ललिता बैठी मारि जंजीर ॥१००२
राधा बैठी वह घर घेरि। सब हीं सखी बुलाईं टेरि ॥
दूजौ द्वार नाहिं यह भौन। भीतर तैं तारो देइ कौंन ॥१००३
प्यारी कहै बात मैं पाई। यह ललिता की ही चतुराई।
या घर की अधिकारिनु आउ। भीतर कौ तारौ खुलवाउ ॥१००४
कहाँ लगि ललिता धरि है धीर। हम पकरैंगी तोरि जंजीर ॥
निकसौ चतुर यहै जस लेहु। प्यारी जू कौ दरशन देहु ॥१००५
खोलि जंजीर जु बाहिर भगी। पौंरि की कपाट तहाँ लगी ॥
तब लगि जाइ कुँवरि कर गह्यौ। हारी ललिता सबहिंनु कह्यौ ॥१००६
रजनी अधिक गई लखि परी। घर कौं चलन सबनि मन धरी ॥
ललिता जिन दीजौ बिसराई। कालि पोत हम लै हैं आई ॥१००७
चन्द्र प्रकास सरद रितु रजनी। खेलति कुँवरि संग सब सजनी ॥
वह नभ इक यह अगनित अवनी। भान नगर अद्भुत नभ कमनी॥१००८
षोडश कला जु वा शशि माहिं। राधा वदन कला मित नाहिं ॥
वह शशि अमी श्रवै मिलि राति। यह इक रस जु श्रवै दिन राति॥१००९
दोहा–जुरि मिलि कैं सब हीं चलीं, राधा जननी पास।
खेल बधाई दैंन कौं, सब मन भरी हुलास ॥१११०॥
आवति सखियनि बृन्द में, दरस्यौ वदन मयंक।
कीरति उर सींच्यौ सुधा, लई रँवकि भरि अंक ॥१०११॥
बेटी साथिनि आपनी, पंकति करि बैठारि।
सबनि संग व्यारू करौ, मेरी प्रान अधारि ॥१०१२॥
बैठीं गोप सुता सबै, मंडल रचि कमनीय।
मनु शीतल दामिनिनु की, माल रची अवनीय ॥१०१३॥
रानी परसति प्रीति सौं, नाना बिधि पकवान

कनक तनी भोजन करैं, रूप खांनि ग्रह भान ॥१०१४॥
एक वैस सब सोहनी, मधि राधा सुकुँवारि ।
रूप कल्प तरु की मनो, कीनी सोभा वारि ॥१०१५॥
सब राधा के प्रांन सम, राधा सब के प्रान ।
परिकर नित्य अनादि जो, कन्या भइ कुल भान ॥१०१६॥
खेल रचित सब लोक वत, झलक अलौकिक माहिं ।
दरसत अनुरागी जननि, सब काहू कौ नाहिं ॥१०१७॥
भोजन करि पय पान करि, लगी आचमन लैंन ।
सब अप अपनैं घर गईं, राधा कीनी सैंन ॥१०१८॥
भोर हीं उठि अहलादनीं, रचैं नित खेल अनन्त ।
हौं बरनौं कहा अलप मति, सारद लहै न अन्त ॥१०१९॥
पैरति सागर लाड के, सुख सागर गौरंग ।
सेवा सुख मूरति सबै, सखी रहति नित संग ॥१०२०॥
ढूंक मींचनी खेल मैं, राधा अधिक सनेह ।
गोपी आनन्द मान हीं, आइ दुरैं जिनि ग्रेह ॥१०२१॥
समरथ मुहि दाइक सुमति, तिन बल कियौ अलाप ।
वृन्दावन हित रूप यह, श्रीहरिवंश प्रताप ॥१०२२॥

॥ इति श्रीराधा बाल विनोद लीला संपूर्णम् ॥

* अथ श्रीकृष्ण सगाई लीला *

-प्रथमहि मंगल नाम जो, बंदौं श्रीहरिवंश ।
कृष्ण सगाई बरनिहौं, तिनकी कृपा प्रसंश ॥१॥
हरयौ प्रबल कलि कौ तिमिर, रवि उदोत सब काल ।
व्यासनंद करुणा कुशल, तुम पद रज मो भाल ॥२॥
रसिक विवेकी महा मति, बानी किरन प्रकास ।
सुकृत राशि संचित करी, तिन प्रसाद अनियास ॥३॥
चौंधे दृष्टि उलूक की, छिपै तिमिर ही जाइ ।
देखै वस्तु न चाँदनैं, तासौं कहा बसाइ ॥४॥
नमामि श्री हित रूप गुरु, दीन्यौं भेद लखाइ ।
कृष्ण सगाई बरनिहौं, कृपा रावरी पाइ ॥५॥
कष्ट करत तप ज्ञान करि, खोजत तत्व अछेह ।
तदपि न पावत रंचकौ, ब्रज रस कनका नेह ॥६॥
कीरति सुता ब्रजेश सुत, चरन बढ़ै जिन चाह ।
सूझि परें तब निकट ही, ब्रज रस सिंधु अथाह ॥७॥
साखा शाशि जु बतावहीं, आगम वेद पुराण ।
रस मय वपु सबतें परें, प्रगटी ग्रह वृषभान ॥८॥
तिन हित आलय नन्द के, जो हरि रसिका नंद ।
प्रगट भये अवनी उभै, रस सागर वित छन्द ॥९॥
अस दुराधि शिव विधि, मुनिनु वेद पुराननि गूढ़ ।
कीरति जसुमति कैं निरखि, गोद रहत आरूढ़ ॥१०॥
अष्टसिद्धि नवनिधि जहाँ, ठाढीं घर घर पौरि

भेष बदलि कै देव गन, आवत देखनि दौरि ..११
महा रमा जहाँ अवतरी, अखिल अंड कौ ईश।
ता वैभव के लेश कौं, वरनत थके मुनीश ॥१२॥
सो वैभव लइ ढाँपि कैं, ब्रजवासिनु के प्रेम।
बिनमित प्रीति नई बढ़ति, जैसे निबटयौ हेम ॥१३॥
जब आवत ऐश्वर्य कछु, संका मानति देखि।
परम अलौकिक लोकवत, रस माधुर्य विशेष ॥१४॥
इतहिं गौर उत साँवरौ, विरवा रूप उदोत।
ब्रज जन पोष बढत सदा, नित नव कौतिक होत ॥१५॥
गोप गोपिका देखि कैं, बिथकित जिनके रूप।
दिन दिन के अगनित चरित, कहाँ लगि कहौं अनूप ॥१६॥
कीरति जसुमति के बचन, भये सगाई जोग।
सुनि सुनि विधिहिं मनावहीं, त्यौं हीं ब्रज के लोग ॥१७॥
इहिं ब्रजवास सुकृति दई, जो हम कीनौं कोइ।
तौ ब्रजपति के सुवन कौ, राधा दुलहिनि होइ ॥१८॥

* अरिल्ल *

लै लै अंचल छोरि मनावैं हैं दई।
चखी शुभ घरी बात फैलि सब ठाँ गई।
सुनत सकल नर नारि हियें अति सुख सनै।
हरि हाँ जो विधिना अनुकूल तौ जोरी यह बनै ॥१९॥
गिरि गोवर्धन जाइ जसोमति प्रीति सौं।
काचे दूध न्हवावति पूजति रीति सौं ॥
तू साँचौ गिरिराज मोहिं इहि देहि वर।
हरि हाँ हमरे सुत कौ ब्याह होइ वृषभान घर ॥२०॥

दादी मोहनलाल वरेयसी मुद भरी ।
अपने कर गिरि भोग विविध मेवा धरी ॥
पाक अनेक सँभारि धरति त्रित चाइ सौं ।
हरि हाँ पुनि पुनि विनती करति जिमावति भाइ सौं ॥२१।
नमो नमो गिरि देव करति जै भारती ।
शीतल जल अचवाइ उतारति आरती ॥
मम सुत नन्द ब्रजेश सुवन अँग साँवरे ।
हरि हाँ रावलपति की सुता संग परैं भाँवरे ॥२२।
यह मन अति अभिलाष नैंन भरि देखिहौं ।
तुव प्रसाद गिरिदेव जनम शुभ लेखिहौं ॥
सीस नवाइ पुनि वन्दति जननी नन्द की ।
हरि हाँ ओटति सादर गोद भरी आनन्द की ॥२३।
तब यह बानी भई सुगिरि अभिराम की ।
बड़े सजन घर होइ सगाई श्याम की ॥
भूरि भाग ब्रजरानी बचन प्रतीति करि ।
हरि हाँ सत्य सत्य वृषभानु नन्दिनी वरहिं हरि ॥२४।
सुनत वरेयसी जसुमति पुलकित प्रेम तन ।
सफल मनोरथ मानि आपने मनहिं मन ॥
गिरि परिकरमा दै आनन्द बढ़ावतीं ।
हरि हाँ चलीं आपने भवननि मंगल गावतीं ॥२५।
बनितन सौं जसुमति कहति, निपट प्रेम बस बैंन ।
दई धन्य दिन कौंन वह, राधा देखौं नैंन ॥२६।
गिरि की कृपा बिचारिकैं, कछुक धरति मन धीर ।
श्री राधा के रूप गुन, सुनि दृग ढारति नीर २७

भप वद्नि के हेम गन, ख्यालन देखनि दौरि ॥११॥
महा रमा जहाँ आपनी, अखिल अंड की ईश।
ता वैभव के लेश कौं, वरनन थके मुनीश ॥१२॥
सो वैभव लहि दौरि हैं, ब्रजवासिनु के प्रेम।
बिनमित प्रीति नहिं बढ़ति, जैसें निबटयौ हेम ॥१३॥
जब आवत ऐश्वर्य कछु, शंका मानति दोस।
परम अलौकिक लोकवन, रस माधुर्य विशेष ॥१४॥
इतहिं गौर उत साँवरी, किरना रूप उदोत।
ब्रज जन पोष बढ़त सदा, नित नव कौतिक होत ॥१५॥
गोप गोपिका देखि कै, निरखत जिनके रूप।
दिन दिन के अगनित चरित, कहौं लगि कहौं अनूप ॥१६॥
कीरति जसुमति के वचन, सब सगाई जोग।
सुनि सुनि विधिहिं मनावहीं, त्यों ही ब्रज के लोग ॥१७॥
ईहिं ब्रजवास सुकृत दई, जो हम कीनौं कोइ।
तो ब्रजपति के सुवन कौं, राधा दुलहिनि होइ ॥१८॥

* अरिल्ल *

लै लै अंचल छोरि मनावैं हैं दई।
चली शुभ घरी बात फैलि सब ठाँ गई।
सुनत सकल नर नारि हियें आनि सुख मनैं।
हरि हाँ जो विधिना अनुकूल तो जोरी यह बनै ॥१९॥
गिरि गोवर्धन जाइ जसोमति प्रीति सौं।
काचे दूध न्हवावति पूजति रीति सौं॥
तू साँचौ गिरिराज मोहिं इहि देहि वर।
हरि हाँ हमरे सुत कौ ब्याह होइ वृषभानु घर ॥२०॥

दादी मोहनलाल बरेयसी मुद भरी।
अपने कर गिरि भोग विविध मेवा धरी॥
पाक अनेक सँभारि धरति चित चाइ सौं।
हरि हाँ पुनि पुनि बिनती करति जिमावति भाइसौं॥२१॥
नमो नमो गिरि देव करति जै भारती।
शीतल जल अचवाइ उतारति आरती॥
मम सुत नन्द ब्रजेश सुवन अँग साँवरे।
हरि हाँ रावलपति की सुता संग परैं भाँवरे॥२२॥
यह मन अति अभिलाष नैंन भरि देखिहौं।
तुव प्रसाद गिरिदेव जनम शुभ लेखिहौं॥
सीस नवाइ पुनि वन्दति जननी नन्द की।
हरि हाँ ओटति सादर गोद भरी आनन्द की॥२३॥
तब यह बानी भई सुगिरि अभिराम की।
बड़े सजन घर होइ सगाई श्याम की॥
भूरि भाग ब्रजरानी बचन प्रतीति करि।
हरि हाँ सत्य सत्य वृषभानु नन्दिनी वरहिं हरि॥२४॥
सुनत बरेयसी जसुमति पुलकित प्रेम तन।
सफल मनोरथ मानि आपने मनहिं मन॥
गिरि परिकरमा दै आनन्द बढ़ावतीं।
हरि हाँ चलीं आपने भवननि मंगल गावतीं॥२५॥
बनितन सौं जसुमति कहति, निपट प्रेम बस बैंन।
दई धन्य दिन कौंन वह, राधा देखौं नैंन॥२६॥
गिरि की कृपा बिचारिकैं, कछुक धरति मन धीर।
श्री राधा के रूप गुन, सुनि दृग ढारति नीर २७

रानी श्री उपनन्द की, समुझावति चित लाइ ।
अहो महरि सुनि देव गिरि, बानी साँची आइ ॥२८॥
श्री कीरति की अतिलड़ी, ब्याहै सुन्दर श्याम ।
अब चलि नीकैं पूजिहैं, नारायण हम धाम ॥२९॥
मोहन जननी ये वचन, सुनि वन्दति तिहिं पाइ ।
तन मन फूली कहति पुनि, वे मम सदा सहाँइ ॥३०॥
बरसानौं दै दाहिनौं, गई दोहनी कुण्ड ।
गहवर खेलति लाड़िली, लियें सखिन के झुण्ड ॥३१॥
अति रोचक झिरना झिरत, सघन द्रुमनि की छाँह ।
तहाँ करन विश्राम कछु, सब चाहतिं मन माँह ॥३२॥
बन कुसुमित मारुत त्रिविध, झिरना नाद गँभीर ।
शुक सारौ मैंना मुनी, वरहिनु की अति भीर ॥३३॥
हरि जननी बैठी तहाँ, आरज गोपिन संग ।
परसंसति बन द्रुम लतनि, जे उलहीं नव रंग ॥३४॥
बरसाने तें आवति, देखी कोऊ बाम ।
निकट सबै बैठारिकैं, बूझतिं ताकौ नाम ॥३५॥
नगर नृपति वृषभानु कैं, बसत सदा बड़ भाग ।
गोप वंश की कुशल तुम, कहौ सहित अनुराग ॥३६॥
सदा बसत आनन्द में, जिहिं पुर गोपी गोप ।
अचल राज वृषभानु कौ, मही भानु कुल ओप ॥३७॥
राग कला मम नाम सुनि, ढाँढ़िनि सूरज वंश ।
निर्मल यश कुल गोप कौ, दिन दिन करति प्रसंश ॥३८॥
निर्त्त गान बाजे त्रिविध, हौं उघटति संगीत ।
महारानी कीरति भलैं, समझति मेरी रीति ॥३९॥

हौं नित उठि रावर बड़े, जाति सवेरे साँझ।
रानी दत संपति भरी, मेरे मन्दिर माँझ ॥४०॥
तब अंचल मुख ओट दै, नन्द घरनि मुसिकाति।
बूझन लागी और पुनि, निपट भेद की बात ॥४१॥
आजु काल्हि कीरति कहौ, कहा धौं करति विचार।
कौन वस्तु अति प्रीति सौं, संचित अधिक आगार ॥४२॥
कहा नृपति वृषभानु जू, अनुगन आज्ञा देत।
दूर देश उतपति भई, कहा वस्तु पुनि लेत ॥४३॥
नौ नन्दन महिभानु के, जब मिलि बैठत साथ।
तब धौं बात कहा चलत, सत्य कहौ यह गाथ ॥४४॥
कौंन दान राजा भवन, देवे मन उत्साह।
कौंन रीति सौं देहिंगे, हमैं सुननि की चाह ॥४५॥
कहा नगर चरचा चलति, प्रगट भई यह काल।
ज्यौं की त्यौं सबही कहौ, अहो बिचच्छण बाल ॥४६॥
समाचार ढाढ़िनि कहत, मन में निपट निसंक।
जसुमति कौं ऐसैं रुचति, ज्यौं निधि प्रापति रंक ॥४७॥
गहनें रतन जराइ के, गढ़ियत राज दुवार।
नित नौतन कीरति तिन्हैं, सचि सचि धरत भँडार ॥४८॥
आवत देश बिदेश तैं, जो ब्यौपारिनु संग।
पाट बसन पुनि जरकसी, औरौ नाना रंग ॥४९॥
लोक लोक उतपति भये, जे जे रतन अमोल।
ते भुवपति के भवन में, लै लै धरत अतोल ॥५०॥
हय गय बड़े सुजाति के, रीझि भानु जु लेत।
तिनके साज सिंगार कौं, अनुगन आज्ञा देत ५१

रावलपति बन्धुन सहित, बात कहत समुझाइ ।
ब्याह कुँवरि कौ कीजिये, बड़े सजन घर जाइ ॥५२॥
राधा जनक उदार अति, संपति देइ अनेक ।
शोभा सींवाँ लाड़िली, अखिल लोक मणि एक ॥५३॥
ठौर ठौर चरचा यही, श्री बरसाने गाम ।
नन्दीश्वर ब्रजराज कैं, ढोटा सुन्दर श्याम ॥५४॥
तामें कछु औगुन सुनैं, कहियत माखन चोर ।
यह लच्छण नहिं राज कौ, अति संसै मन मोर ॥५५॥
कछु संकति कछु हरषि मन, जसुमति रही निहारि ।
नृप की नेगनि जानि कैं, बहुत करति मनुहारि ॥५६॥
एकनि मणि मुँदरी दई, एकनि दुलरी चारु ।
जसुमति अपने अंक तैं, दियौ मणिनु कौ हार ॥५७॥
हँसि बूझति ढाढ़िनि अहो, रानी किहिं पुर बास ।
कहाँ गमन कहाँ तें कियौ, कीजे बचन प्रकाश ॥५८॥
और सखी उत्तर दियौ, जसुमति धरि रही मौन ।
गवनीं हीं गिरि तरहटी, जात आपने भौन ॥५९॥
बास बसत हम नन्द के, जो या ब्रज कौ भूप ।
जिन घर ढोटा साँवरौ, त्रिभुवन मोहन रूप ॥६०॥
एक नन्द की ही फिरत, सब ब्रज घर घर आन ।
तिनके कुल थंभन भयौ, कृष्ण महा बलवान ॥६१॥
धरि गिरि गरुवौ अग्र नख, सब ब्रज लियौ उबारि ।
तामें अब औगुन कहे, साँचि कहति तुम नारि ॥६२॥
देश भयानौ भानु कौ, सुनौ कान किन खोल ।
अपु समान कियौ नन्द कौं, बाँह बसायौ बोलि ॥६३॥

बिलग न मानौं भामिनी, मन में करौ न रोस ।
नृप कौ सुत चोरी करै, बड़ौ जगत में दोस ॥६४॥
गिरि न उचायौ एक ही, सबहिनु करी सहाइ ।
जन चौरासी कोस के, सब एकत भये आइ ॥६५॥
अपनी अपनी बात कौं, सब कोउ कहत बनाय ।
तुम यह यश माथे धरौ, कहा हमारौ जाइ ॥६६॥
उपमा कारे रूप कौं, तुमहीं देहु निसंक ।
तौ जग वृथा बतावहीं, शशि के माहिं कलंक ॥६७॥
गुन औगुन सब होत हैं, कहाँ लगि कहौं बनाइ ।
तदपि नृप ही नृपनि सौं, करत सगाई जाइ ॥६८॥
श्री कीरति मोसौं कह्यौ, करौ सगाई देखि ।
ताही कारज मैं फिरति, चिन्ता मोहिं विशेष ॥६९॥
ब्रजरानी सौं तुम सबै, यौंही कहियौं जाइ ।
अबहूँ मोहन लाल की, चोरी देहु छुड़ाइ ॥७०॥
मेरी पा लागन बहुत कहियौं सीस नवाइ ।
वे समझति सब बात में, कान्ह कुँवर की माइ ॥७१॥
होइ विधाता दाहिनौ, बहुरि रमा कौ नाथ ।
बेटी रावलि ईश की, श्याम गहै तब हाथ ॥७२॥
सुकृत पुन्य परजन्य कौ, नन्द भाग समुदाय ।
तौ रानी वृषभानु कैं, तुव सुत बर्‌यौ जु जाइ ॥७३॥
प्रथम बचन कीरति कहे, ते जु बज्र की लीक ।
अपने खोटे दाम कौं, तुमहू कीजौ ठीक ॥७४॥
इतनै हीं इक गोपिका, गह्वर निकसीं जाइ ।
कुँवरि सखिनु सँग खेलतीं, देखि सुनाइ आइ ७५

बिदा माँगि ढाँढ़िनि गई, उलटि आपनैं धाम।
ये सब मिलि गहवर चलीं, सुन राधा कौ नाम ॥७६॥
बन कौ तिमिर बिदारिकैं, फैली मुख शशि जोत।
किधौं कि नव वन घन उदित, दामिनि कोटिक होत ॥७७॥
चौंधति छवि के चाँदने, कानन निकर विहंग।
देखि छकीं कौतिक अवधि, सबकी मति भइ पंग ॥७८॥
प्रेम विवश जसुमति भई, पुनि पुनि करति बखान।
धन्य कूखि कीरति महरि, धन्य जनक वृषभान ॥७९॥
भूरि भाग अपनौं गनति, मन अति मानति मोद।
रवकि चली आतुर अधिक, भरी लड़ैती गोद ॥८०॥
सीस प्रीति सौं कर धर्यौ, भूरि बलैया लेत।
ब्रजपति रानी आपने, भूषण वारति देत ॥८१॥
सिमिट सखीं एकति भईं, श्री राधा के पास।
महरि कुँवरि की गोद में, मेवा भरति हुलास ॥८२॥
प्रफुलित मुख कीरति लली, उपमा राखी रोकि।
पुनि २ जननी श्याम की, ता दिशि रही विलोकि ॥८३॥
हिय आनंद उमड़ि चलत, राखत दै दै आड़।
नंद घरनि बहु भाँति सौं, करति कुँवरि को लाड़ ॥८४॥
केशन सुभग फुलेल दै, पाटी रची बनाइ।
दई कुँवरि के भाल पर, रोरी बेंदी लाइ ॥८५॥
पुमि कजरौटी खोलि कैं, अंजन दीनौं नैंन।
ललिता सौं हँसि हँसि महरि, बोली मधुरे बैंन ॥८६॥
श्री कीरति सौं बीनती, कीजौ मेरी जाइ।
करौ सगाई श्याम की, निपट उचित जो आइ ॥८७॥

तब ललिता चौंकी अधिक, तुम धौं कहियत कौन ।
नाम धाम अरु गाँम को, अब लगि जानत हौं न ॥८८॥
देखत की बूढ़ी बड़ी अरु, सब बिधि करि जोग ।
बन में ये बातैं कहौ, सुनि सुनि हँसिहैं लोग ॥८९॥
श्याम अहो कासौं कहति, भली वस्तु है कोइ ।
जाकै आगें हम कहैं, सो अति चकित होइ ॥९०॥
गोप सुता विकसीं सबै, बन में करतिं कलोल ।
तब घरनी उपनन्द की, लई विशाखा बोल ॥९१॥
नाम कृष्ण गोविंद सुनि, गिरिधर गोकुल चन्द ।
ता जननी यह जसोमति, पटरानी श्री नन्द ॥९२॥
जानी जू जानी हमनि, बिदित चोर की माइ ।
वे तौ नित नित फिरत ह्याँ, बन बन चारत गाइ ॥९३॥
झूठौ दान लगावहीं, बेटा कपटी धूत ।
अहो महरि तुमहीं जगत, जन्यौ अनोंखौ पूत ॥९४॥
हँसी सकल ब्रज गोपिका, तरुनि वृद्ध अरु बाल ।
हरि के चरित महरि सुनत, मानत भाग विशाल ॥९५॥
पुनि आई चित्रा चतुर, अधिक करति सनमान ।
रानी बरसाने चलौ, भवन भूप वृषभान ॥९६॥
बासर थोरौ दूरि घर, श्रमित होंइगे गात ।
यह वह जानौ एक घर, अपनाइत की बात ॥९७॥
लाइ लड़ैती अंक सौं, कोटिनु देति असीस ।
प्रभु मो मन भायौ करौ, सिंधुसुता के ईस ॥९८॥
करज चटक लै वारनैं, चली आपनें ग्रेह ।
राधा राधा नाम रटि, जसुमति भींजी नेह ९९

जरी किनारी ओढ़नी, सादर सखिनु उढ़ाइ।
भानु कुँवरि सौं विदा ह्वै, प्रेम सिन्धु में न्हाइ ॥१००॥
ज्यौं ज्यौं पग आगें धरति, परत पछमनें जाँइ।
देखत राधा रूप कौं, महरि गई बौराइ ॥१०१॥
बनदेवी संकेत में, आगें जोरे पानि।
जो मन भायौ होहि तो, पूजौं विविध विधान ॥१०२॥
बट लट कर जूरी दई, श्रीफल धरि कैं मूल।
दूध न्हवाऊँ ता दिना, व्याह बधायें फूल ॥१०३॥
पुनि अपने मन्दिर गई, सुत विवाह हिय लाग।
गिरि गहवर बन की कथा, कहति सहित अनुराग ॥१०४॥
व्रजपति मदन गुपाल अरु, सुनत सकल परिवार।
राधा शौभा सिन्धु कौ, महरि न पावत पार ॥१०५॥
कुँवरि नाम गुन रूप सुनि, उँमग्यौ आवतु हीय।
त्यौं त्यौं मोहन लाड़िले, सकुचत अतिहीं जीय ॥१०६॥
निपट सयानप तब कियौ, कृष्ण कमल दल नैंन।
अज्ञा लै कैं तात सौं, गवने मन्दिर सैंन ॥१०७॥
नन्द कही रानी सुनौ, भानु सुता परताप।
नाम करन कियौ श्याम कौ, गरग कही तब आप ॥१०८॥
राधा माधव राधिका, प्राण रवन सुख दान।
राधा परवश प्रीति के, राधा रसिक सुजान ॥१०९॥
नाम धरे तो सुवन के, राधा नाम मिलाइ।
सादर मैं पूछी तबहिं, बन्दि गरग के पाँइ ॥११०॥
सुनि रानी वे महा मुनि, जानत सब कछु आइ।
काढ़े मन संदेह मो, कथा पुरातन गाइ ॥१११

और बात सब विधि मिली, यह पुनि लखी न जाइ।
होइ सगाई भानु घर, सुत मम करौं उपाइ ॥११२॥
लाल निकट जसुमति गई, यह सोचति मन माहिं।
सोय गयौ सुत श्याम ने, ब्यारू कीनी नाहिं ॥११३॥
मन में तौ नित रहत ही, राधा दरस उमाह।
पुनि मैया के बचन सुनि, बढ़ि गयौ सागर चाह ॥११४॥
निद्रा ता आवेश में, झुकी दृगनि में आइ।
राधा राधा बदन तें, नाम कहत बर्राइ ॥११५॥
बहुरि सखा सौं कहत हैं, सोवत ही में टेरि।
भैया गाइनु लै चलौ, बरसाने दिसि फेरि ॥११६॥
अहो रोहिनी बलि गई, तुमहीं लेहु जगाइ।
खिजि है मोसौं नींद बस, ब्यारू देहु कराइ ॥११७॥
हौं बलि मेरे लाड़िले, उठि तन नींद निवारि।
दूध भात मिश्री सन्यौ, लै कछु मुख में डारि ॥११८॥
मोहन उठि ब्यारू करी, मन की वृत्ति न ठौर।
गिरि प्रसाद मेवा बहुरि, जसुमति लाई और ॥११९॥
कमल नैंन मुख में धरत, बाढ्यौ उर अहलाद।
मैया लाई कहाँ तें, लागत अधिक सवाद ॥१२०॥
बेटा मैं गिरिराज कौं, भोग धर्यौ हिय हेत।
ताही तें मेरे श्याम घन, स्वाद नई विधि देत ॥१२१॥
और कृष्ण बातैं घनीं, हौं सुनि आई आज।
तोहीं सब समुझाइ हौं, ज्यौं न सुनैं ब्रजराज ॥१२२॥
अब बीरी लै पौढ़ि रहि, उठौ प्रात जब काल।
तब तोसौं सब ही कथा, कहिहौं मोहन लाल १२३

जननी की ठोड़ी गहैं, श्याम कहत लड़काइ।
कौन वात ऐसी नई, अबहीं मोहिं सुनाइ ॥१२४॥
ढाँढ़िनि कीरति महल की, लखी कहूँ कौं जात।
ताकौं निकट बुलाइकैं, लही भेद की बात ॥१२५॥
हौं आई गिरि पूजिकैं, कुण्ड दोहनी तीर।
धूप देखि बिरमी तहाँ, शीतल बहत समीर ॥१२६॥
अपनौ नाम न मैं कह्यौ, उनहूं लखी न मोहि।
राजनीति की सब कही, रीति सिखावनि तोहि ॥१२७॥
तेरौ माखन चोरिवौ, पर्यौ जु कीरति कान।
घर घर घेरा नगर में, और सुन्यौ वृषभान ॥१२८॥
ये सब मेरी साथ कीं, सुनि आई तो साख।
बेटा अब कुल रीति चलि, नाम बाप कौ राख ॥१२९॥
मैया ऊतर दैउगौ, श्रवन सुनौंगौ प्रात।
साखि भरैंगे ग्वाल सब, अरु मेरे बलि भ्रात ॥१३०॥
पौढ़े सज्या जाइकैं, सुख में रैन बिहाइ।
उठि हरि बदन प्रछालि कैं, माखन मिश्री खाइ ॥१३१॥
मैया सबकौं जोरि कैं, करिलै मोकौं साहु।
झूठ मोहि ऐसें ग्रह्यौ, ज्यौं चन्दा कौं राहु ॥१३२॥
बाल वृद्ध अरु तरुनि जुरि, आईं जसुमति ग्रेह।
बैठी सादर मुदित मन, कीनौं परम सनेह ॥१३३॥
लला बात सुनि काल्हि की, हम न वनावति फेरि।
ढाँढ़िनि रावल भूप की, औगुन बरनें टेरि ॥१३४॥
ढाँढ़िनि कह्यौ कि और कोउ, हम काहू न डरात।
बकुचा काढ्यौ काँख तें, कहि कौनै लै जात १३५॥

एक दिना ढाँढ़िनि कहूँ, मिली साँकरी खोरि ।
मोतिनु की लरि ग्रीव तें, ग्वालिन लीनी तोरि ॥१३६॥
ता दिन तें उन घरवसी, मन में धरी मरोर ।
कहति फिरति सब घोष में, मैया मोसौं चोर ॥१३७॥
समध्याने की जानि कें, ग्वालनि कीनी कूट ।
झटकत गिरयौ जु काँख तें, गयौ तँबूरा फूट ॥१३८॥
तब तें वह बहुतें चिरी, देखत गारी देइ ।
लरै बावरी और सौं, मेरौ नाम जु लेइ ॥१३९॥
हौं बैठ्यौ गिरि शिखर पर, जदपि बरजे ग्वार ।
तदपि लाग्यौ चपरि कें, वृथा मोहिं जंजार ॥१४०॥
पाती में लिखि भेजिये, भलौ मनुष लै जाइ ।
बातैं श्री वृषभानु कौं, आवै सब समुझाइ ॥१४१॥
राज काज में चुकत हैं, बड़े बड़े सब न्याइ ।
हाँसी की बातैं कहूँ, मानत हैं सत भाइ ॥१४२॥
काकैं हम चोरी गये, हरे कौंन के दाम ।
राजा हू के कुँवर कौं, लेत न संकत नाम ॥१४३॥
काकैं दीनों औहड़ौ, कहा बिगारयौ काम ।
घर घर आवौ बूझिकैं, जेते ब्रज में गाम ॥१४४॥
ब्रज रानौ मेरौ पिता, रानी मेरी माइ ।
बकति घर गई झूठ सब, चोरी करै बलाइ ॥१४५॥
गोपिन के नन्दन जिते, तिनमें हौं अति साधु ।
कहा करौं जो चपरि कें, मानि लेहिं अपराधु ॥१४६॥
सुनि सुनि कें तरुनीं हँसति, दै मुख अंचल ओट ।
लला चतुर बातनि बड़े, ढाहत साईं कोट ॥१४७

जननी की ढोंड़ी गई, श्याम कहत लड़काइ।
कौन बात ऐसी नई, अबहीं मोहि सुनाइ ॥१२३॥
ढाँढ़िनि कीरति महल की, लखी कहूँ कौ जात।
ताकौं निकट बुलाइकैं, लही भेद की बात ॥१२४॥
हौं आई गिरि पूजिकैं, कुण्ड रोहनी तीर।
धूप देखि बिरमी तहाँ, सीतल बहत समीर ॥१२५॥
अपनौ नाम न मैं कह्यौ, उनहूं लख्यौ न मोहि।
राजनीति की मन्त्र कही, रीति सिखावनि तोहि ॥१२६॥
तेरौ माखन चोरिबौ, परयौ जु कीरति कान।
घर घर घेरा नगर में, और सुन्यौ वृषभान ॥१२७॥
ये सब मेरी साथ की, सुनि आईं तो साख।
बेटा अब कुल रीति चलि, नाम बाप कौ राख ॥१२८॥
मैया उतर देउगौ, श्रवन सुनौगी प्रात।
साखि भरेंगे ग्वाल सब, अरु मेरे बलि भ्रात ॥१२९॥
पौढ़े सज्या जाइकैं, सुख में रैन बिहाइ।
उठि हरि बदन प्रखालि कैं, माखन मिश्री खाइ ॥१३०॥
मैया सबकौं जोरि कैं, करिलै मोकौं साहु।
झूठ मोहि ऐसें ग्रस्यौ, ज्यौं चन्दा कौं राहु ॥१३१॥
बाल वृद्ध अरु तरुनि जुरि, आईं जसुमति गेह।
बैठौ सादर मुदित मन, कीनौं परम सनेह ॥१३२॥
लला बात सुनि कालि की, हम न बनावति फेरि।
ढाँढ़िनि रावल भूप की, औगुन बरनै टेरि ॥१३३॥
ढाँढ़िनि कह्यौ कि और कोउ, हम काहू न डरात।
बकुचा काढ़यौ काँख तें, कहि कौने लै जात ॥१३४॥

राजनीति के बहुरि सुनि, हौं समझत सब अंग।
घाट बाट कर लीजियत, या में कहा कुढंग ॥१४८
पूत सपूत महरि लख्यौ, अति मति चतुर सुजान।
भयौ भरोसौ ब्याह कौ, देत द्विजन कौं दान ॥१४६॥
गाइ चरावनि बन गये, हरि लै ग्वालनि संग।
जसुमति नारायन चरन, पूजति भरी उमंग ॥१५०॥
ब्याहौं सोनें सहेरे, श्री बरसाने खेत।
तौ इनि चरननि नित, नयौ बाढ़ै गौ मम हेत ॥१५१॥
अरु नाना बिधि पाक रचि, अर्पौं कोट बनाइ।
सेवा गिरिधर लाल कौं, सिखऊँ गाइ बजाइ ॥१५२॥
ब्याह भये पै सजन सौं, बहुरि रहे रस रंग।
कीरति सौं मेरौ सदा, रहै सनेह अभंग ॥१५३॥
निकसी श्रीपति भवन तें, जसुमति अति आनन्द।
बहुरि गई गोधन खिरक, सीस नाइ रज बन्दि ॥१५४॥
हे सुरभी के वंश गौ, तुम आलय जु पुनीत।
हौं बन्दित हौं प्रीति सौं, करियौ मो चित चीत ॥१५५॥
जो तुम सेवा प्रीति सौं, करी गोप परजन्य।
तौ मोकौं बर देहु यह, भाग्य मानिहौं धन्य ॥१५६॥
अनुजा श्रीदामा सखा, जनमी कीरति कूख।
ब्याहै ब्रजपति लाड़िलौ, जाके बचन पियूष ॥१५७॥
पिता भवन पुनि ससुर कैं, तुमहीं पूज्य अनादि।
जजियत तुम पय घृत सौं, सुर नर मुनि ब्रह्मादि ॥१५८॥
माँगति मोदी ओटिकैं, मन क्रम बच कहि टेरि।
तब गोसाला पूजिहौं, आवै भाँवरि फेरि १५६

चारि बदन कौ ज्योतिसी, आयौ नन्द निकेत।
बर्तमान अरु ह्वै गई, होनहार कहि देत ॥१६०॥
ऊँचे चढ़िकैं रोहिनी, टेरति लै लै नाम।
अहो महरि चलि वेगि दै, कौतिक आयौ धाम ॥१६१॥
नर नारी एकत भये, गुनी विप्र कौं देखि।
सबके लच्छण कहत है, जैसी माथें रेखि ॥१६२॥
मन प्रतीति सबकैं भई, देख्यौ प्रगट प्रताप।
धाई आई तुरत ही, जसुमति रानी आप ॥१६३॥
अरघ दियौ पूजन कियौ, बहुत करति सनमान।
रतन थार श्रीफल सहित, आगें राख्यौ आन ॥१६४॥
अहो मुनिनु के शिखामणि, बसत कौंन से देश।
मैं अब लगि देख्यौ नहीं, कोऊ रिषि यहि भेष ॥१६५॥
दै असीस द्विज बर कही, डोलौं लोक अनेक।
भागवन्त तोसी तुही, रानी त्रिभुवन एक ॥१६६॥
कै भूपति वृषभानु कैं, कीरति परम उदार।
उभै सुकृत के सिंधु कौ, काहु न पायौ पार ॥१६७॥
बोली जननी कृष्ण की, बचन सुधा समतूल।
उन्हैं हमैं सनबंध सुख, बिधि कृत है अनुकूल ॥१६८॥
ब्याहन गोकुल चन्द कौं, यतन करत बहुतेर।
उलटी सी कछु बनति है, दिन दिन होत अबेर ॥१६९॥
हौं चाहति वेऊ चहत, चाहत ब्रज नर नारि।
कौंन बात जो बनत नहिं, हो मुनि कहौ बिचारि ॥१७०॥
सत्य सत्य दोऊ कहति, सत्य कहैं ब्रज लोग।
बिसे बीस यह सत्य ही, रानी बनिहै जोग १७१

महा भाग्य गोविन्द सुत तैं, पोष्यौ सुख भूरि ।
कीरति पय पाली लली, निरवधि मंगल पूरि ॥१७२॥
तुम कृपाल गोपाल कौ, जनम पत्र अब बाँच ।
शुभ लक्षण जे जे परे, मोहिं सुनावौ साँच ॥१७३॥
जे बरने हैं गरग रिषि, तिनतैं अधिकै जान ।
रानी लागे दृष्टि जिन, पुनि पुनि कियें बखान ॥१७४॥
हौलें ही कहि देहु बलि, समभि बात की गंस ।
कछू गोप कुल कौ सुयश, करि है जग परसंस ॥१७५॥
ब्रज आनन्द उदधि बहै, तुव अतिलड़ परसाद ।
सुयश लोक पावन करैं, चरितामृत रस स्वाद ॥१७६॥
जसुमति दृष्टि बचाइ कैं, लई चरण तल धूरि ।
मोकौं अज्ञा दीजिये, रानी जैवों दूरि ॥१७७॥
आवन देहु ब्रजराज कौं, पुनि सुत मोहन लाल ।
भली भाँति करिहौं बिदा, सुनि रिषि देव कृपाल ॥१७८॥
महरि बेगि ही आइहौं, मो मन विपुल उमाँह ।
हौं हीं करिहौं आइकैं, निहचै तुव सुत ब्याह ॥१७९॥
बहुत दान सनमान अति, कियौ कृष्ण की मात ।
प्रेम बचन सुनि दृगनि तैं, आनन्द वारि चुचात ॥१८०॥
राधा हरि पद चिन्ह करि, ब्रज धर गहनौं सोभ ।
जहाँ तहाँ बन्दन करन, बिधि मन बाढ्यौ लोभ ॥१८१॥
सबही के देखत चले, पुनि आवत नहिं दृष्टि ।
लागी होंन अकास तैं, बहु कुसुमनि की वृष्टि ॥१८२॥
दौं दिनि गोकुल ईश की, लीनी महरि बुलाइ
तू बरसाने जाइकैं, कीरति कौं समझाइ १८३॥

कहियौ मेरी ओर तें, बातें बहुत प्रवीन ।
हाथ जोरि पद बन्दि कैं, सब सौं हूजौ दीन ॥१८४॥
रानी गहर न कीजियै, माँगत गोदी ओट ।
मुहिं दीसत विधि रचित यह, राधा मोहन जोट ॥१८५॥
हमनि तुमनि तौ परस्पर, प्रथम बदी ही होड़ ।
दई कियौ मन भाँवतौ, अब क्यौं दीजै छोड़ ॥१८६॥
पुनि सबही कौ रुख लियें, कहियौ मधुरी रीति ।
जिन बातनि जानी परै, अतिहीं भारी प्रीति ॥१८७॥

* सोरठा *

नन्दीश्वर तें नारि आई श्रीवृषभानुपुर ।
आदर दियौ विचारि कीरति अपने बोलि ढिंग ॥१८८॥
कुशल छेम सब बूझि भोजन ताहि कराइ पुनि ।
बात परी है सूझि उत्कण्ठा सुनि महरि की ॥१८९॥
रहति बड़े रनिवास किहिं विधि ह्याँ आवन भयौ ।
कोधौं बड़ौ हुलास जसुमति मन उपज्यौ नयौ ॥१९०॥
महरि महा मणि पास तुम निसिदिन बैठत उठत ।
तेरौ मोहिं विस्वास रानी के जिय की कहौ ॥१९१॥

* अरिल्ल *

अज्ञा दीनी मोहिं तिहारे धाम की ।
अरु कहि दीनी बात आपनें काम की ॥
कीरति जू सौं मेरी बिनती कीजियौ ।
हरि हाँ प्रथम वचन कौ जाइ उन्हैं सुधि दीजियौ ॥१९२॥
बहुत दीन ह्वै कही सो ओली ओटि करि ।
कीरति होउ कृपाल अधिक आतुर महरि

महा भाग्य गोविन्द सुत तैं, पोष्यौ सुख भूरि।
कीरति पय पाली लली, निरवधि मंगल पूरि ॥१७
तुम कृपाल गोपाल कौ, जनम पत्र अब बाँच।
शुभ लच्छण जे जे परे, मोहिं सुनावौ साँच ॥१७३
जे बरने हैं गरग रिषि, तिनतैं अधिकै जान।
रानी लागै दृष्टि जिन, पुनि पुनि कियें बखान ॥१७४
हौलें ही कहि देहु बलि, समझि बात की गंस।
कछू गोप कुल कौ सुयश, करिहै जग परसंस ॥१७५॥
ब्रज आनन्द उदधि बहै, तुव अतिलड़ परसाद।
सुयश लोक पावन करै, चरितामृत रस स्वाद ॥१७६॥
जसुमति दृष्टि बचाइ कैं, लई चरण तल धूरि।
मोकौं आज्ञा दीजिये, रानी जैवो दूरि ॥१७७॥
आवन देहु ब्रजराज कौं, पुनि सुत मोहन लाल।
भली भाँति करिहौं बिदा, सुनि रिषि देव कृपाल ॥१७८॥
महरि बेगि ही आइहौं, मो मन विपुल उमाँह।
हौं हीं करिहौं आइकैं, निहचै तुव सुत ब्याह ॥१७९॥
बहुत दान सनमान अति, कियौ कृष्ण की मात।
प्रेम बचन सुनि दृगनि तें, आनन्द वारि चुचात ॥१८०॥
राधा हरि पद चिन्ह करि, ब्रज धर गहनौं सोभ।
जहाँ तहाँ बन्दन करन, बिधि मन बाढ़्यौ लोभ ॥१८१॥
सबही के देखत चले, पुनि आवत नाहिं दृष्टि।
लागी होंन अकास तें, बहु कुसुमनि की वृष्टि ॥१८२॥
दौंरिनि गोकुल ईश की, लीनी महरि बुलाइ।
तू बरसाने जाइकैं, कीरति कौं समुझाइ ॥१८३॥

कहियौ मेरी ओर तें, बातैं बहुत प्रवीन।
हाथ जोरि पद बन्दि कैं, सब सौं हूजौ दीन ॥१८४॥
रानी गहर न कीजियें, माँगत गोदी ओट।
मुहिं दीसत विधि रचित यह, राधा मोहन जोट ॥१८५॥
हमनि तुमनि तौ परस्पर, प्रथम बदी ही होड़।
दई कियौ मन भाँवतौ, अब क्यौं दीजै छोड़ ॥१८६॥
पुनि सबही कौ रुख लियें, कहियौ मधुरी रीति।
जिन बातनि जानी परैं, अतिहीं भारी प्रीति ॥१८७॥

* सोरठा *

नन्दीश्वर तें नारि आई श्रीवृषभानुपुर।
आदर दियौ विचारि कीरति अपनें बोलि ढिंग ॥१८८॥
कुशल छेम सब बूझि भोजन ताहि कराइ पुनि।
बात परी है सूझि उत्कण्ठा सुनि महरि की ॥१८९॥
रहति बड़े रनिवास किहिं बिधि ह्याँ आवन भयौ।
कोधौं बड़ौ हुलास जसुमति मन उपज्यौ नयौ ॥१९०॥
महरि महा मणि पास तुम निसिदिन बैठत उठत।
तेरौ मोहिं विस्वास रानी के जिय की कहौ ॥१९१॥

* अरिल्ल *

अज्ञा दीनी मोहिं तिहारे धाम की।
अरु काहे दीनी बात आपनें काम की॥
कीरति जू सौं मेरी बिनती कीजियौ।
हरि हाँ प्रथम बचन की जाइ उन्हैं सुधि दीजियौ ॥१९२॥
बहुत दीन ह्वै कही सो आली ओटि करि।
कीरति होउ कृपाल अधिक आतुर महरि

हमे तुम्हैं सनबन्ध आदि तें बनि रह्यौ।
हरि हाँ प्रभु तुमकौं यश देहिं मानि लीजै कह्यौ ॥१६
जसुमति जो कछु कहति हमैं हूँ रुचित है।
राजभवन की कन्या उनकौं उचित है॥
जो कोउ बन में जाइ श्याम की देखि गति।
हरि हाँ सुनि२ रीति अनीति सबनि की भ्रमति मति॥१६४
सब बिधि लायक ब्रज में जसुमति कौ लला।
देखत जाकौ बदन घटत शशि की कला॥
कोऊ कहै जु आइ सु मन नहिं लाइये।
हरि हाँ ऐसौ सजन सगारथ भागनि पाइये॥१६५।
सुन्दर परम सुशील सकल गुन खान है।
बंशी ललित बजावनि कौन समान है।
गोधन पालक निपुन नहीं जग में बियौ।
हरि हाँ रानी मेरे जान एक ही विधि कियौ॥१६६॥
आई गोपी हँसति दियें पट ओट हैं।
ढाँढ़िनि मनहिं विचारि महरि में खोट है॥
गोरी कारौ जनै जगत उपहास है।
हरि हाँ समधिनु कौं नहिं लाज हमैं अति त्रास है॥१६७॥
हँसि हँसि झुकि झुकि परति गोप बाला सबै।
भट्ट भेद की बात हमनि समझी अबै॥
लखि पाई मन मोहन रीति मरोर की।
हरि हाँ ढाँढ़िनि कहा सुधारै बिगरी ओर की॥१६८॥
अरी और कहि बात नई सी आनिकैं।
ब्रजरानी के कौतिक गोप्य बखानिकैं

निपट मिलनियाँ उनकी देखी परखि कैं।
हरि हाँ तू जिन विमनी होइ बात कहि हरषि कैं ॥१९९॥
अजू कोटि बात की बात एक मोपै सुनौ।
महरि बचन लेहु मानि होहि यश सत गुनौ ॥
श्री राधा के नाम रूप बलि हौं गई।
हरि हाँ भूतल भूषण लली कूखि कीरति भई ॥२००॥
उति श्री जसुमति जायौ मोहन मदन है।
पशु पंछी हू थकित देखि तिहिं बदन है ॥
जुग जुग अविचल होहु लड़ैती श्याम घन।
हरि हाँ दिन दिन कीरति महरि लाड़ रहु मगन मन॥२०१॥
-भस्म लपेटें सिर जटा, शशि की रेखा माथ।
बाघम्बर काँधे धरें, आयौ बाबा नाथ ॥२०२॥
पूरत सींगीं नाद कौं, बोलत पुरुष अलेखि।
नर नारी सब नगर के, धाये ताकौं देखि ॥२०३॥
कुँवरि जनम आयौ पहिल, श्री कीरति पहिचानि।
बहुत भाँति आदर करयौ, बैठारयौ हित मानि ॥२०४॥
बहुत वर्ष में नाथ तुम, मो घर आये फेरि।
एक बड़ौ सन्देह मन, तुमहीं जाहु निबेरि ॥२०५॥
परिचय पायौ कछू तैं, माता मेरौ कोइ।
ता दिन तें तेरी सुता, फिर जो डरपी होइ ॥२०६॥
बोलि आपनी नन्दिनी, माथें चरन धराइ।
बड़ौ जंत्र मो सीस यह, बहुरि न कुँवरि डराइ ॥२०७॥
और जंत्र कछु कीजिये, सुनि योगिनु के राइ।
गोप सुता कैसें धरै, तुम माथे पर पाइ २०८

माता मेरे बचन कौं, जो न लेइगी मानि ।
तौ डरपैगी आज ही, सत्य सत्य यह जानि ॥२०९॥
सुनत बचन रानी डरी, हठ कीनौं योगीस ।
निकट बोलि तब लाड़िली, चरन धरायौ सीस ॥२१०॥
अजर अमर कन्या भई, अब असीस सुनि लेहु ।
पुनि रानी अपनो कह्यौ, जो मन में सन्देहु ॥२११॥
हौंनहार अरु ह्वै गई, वर्तमान हू जोइ ।
तीन काल की तुम लखत, यामें संस न कोइ ॥२१२॥
तुम हमकौं ऐसे मिले, बरनि सुनाऊँ बैंन ।
ज्यौं दृग हीनौं बिकट बन, भूल्यौ पावै नैंन ॥२१३॥
नाथ नन्दीश्वर नन्द कौ, ढोटा लौनो आइ ।
कुँवरिहिं गोदी ओटिकैं, माँगत ताकी माइ ॥२१४॥
कछु कछु लच्छण चोर के, सीखत नन्दकुमार ।
तातें तुम आगम बरनि, नाथ कहौ निरधार ॥२१५॥
प्रथम बचन मैं तो कहे, उनसौं सहज सुभाइ ।
वे मन में खटकत सदा, और न बनत उपाइ ॥२१६॥
अरु जसुमति के चाह कौ, सागर बढ़्यौ अपार ।
कुँवरि सगाई हित करत, बिबिध भाँति उपचार ॥२१७॥
जैसें खेवट बिन भ्रमै, भरी नाव जलधार ।
मो मन गति ऐसी भई, नाथ लगावौ पार ॥२१८॥
सत्य बचन मेरो रहै, जसुमति भायौ होइ ।
बहुरि नंद के सुवन में, औगुन लखै न कोइ ॥२१९॥
बर कन्या के भाग की, महिमा देहु सुनाइ ।
जैसें अति सन्देह यह, मेरे मन कौ जाइ ॥२२०॥

स्वामी कौ माधुर्य सुनि, प्रेम बिलोवत हीय।
रावल जद्दपि आपनौं, मन अति गाढ़ौं कीय ॥२२१॥
जैसें उमँगै सिन्धु जब, रुकत न वारू भीत।
भक्तराज वेपथ भये, प्रेम प्रबल लये जीत ॥२२२॥
वृन्दारन्य विहार जहाँ, कल्प गनत पल हानि।
सो गोपिन के प्रेम बस, इत उत भये अजान ॥२२३॥
सुधि करि नाथ विवस भये, भेद न काहू देत।
यौं बीती कैऊ घरी, तब पुनि भये सचेत ॥२२४॥
रानी अति अचिरज छकी, दई चरित यह कौन।
झूमत घूमत रंग में, नाथ रहे धरि मौन ॥२२५॥
समझि समझि बोले मधुर, जब चित आयौ ठौर।
बात दुराई माहिली, कहत और की और ॥२२६॥
माता मैं लघु वैस तैं, जो सेयौ सब काल।
महाबली वह देव है, मोपै बहुत कृपाल ॥२२७॥
ताकौ आराधन करौं, मन धर गाढ़ी प्रीति।
उन तेरे सन्देह की, मोहिं चिताई रीति ॥२२८॥
श्री कीरति वृषभानु कौ, नन्द जसोदा आदि।
बर कन्या परताप तें, जग जश चलै अनादि ॥२२९॥
श्रीराधा सौभाग कौं, बरनत बनत न मोहिं।
रसना होंहिं अनंत जो, कछुक सुनाऊँ तोहि ॥२३०॥
उत ब्रजपति कौ लाड़िलौ, शुभ लच्छण कौ मूल।
बना बनी में नित बढ़ै, रानी सुख समतूल ॥२३१॥
यह ब्रज अविचल होहिगौ, इन दोउनि कौ राज।
सत्य वचन कीरति सुनौ, मन दै कीजै काज २३२

करौ सगाई नन्द घर, देव बतायौ भेद।
चोरी ह्वै छुटि जाइगी, रानी छाँड़ौ खेद ॥२३३॥
राधा जननी भाँति इहि, बचन आपनौ राख।
व्रजपति रानी कौ सकल, कीजै मन अभिलाष ॥२३४॥
माता अज्ञा दीजिये, आसन अपनें जाउँ।
बसन उतीरन कुँवरि कौ, माँगत जीय डराउँ ॥२३५॥
नाथ न ऐसी बात कहि, कौन हमारे टोट।
पाट बसन अरु जरकसी, बाँधि देउंगी पोट ॥२३६॥
रानी मेरे देव की, ऐसी अज्ञा नाहिं।
जो हौं कहौं सोई करौ, समझि आप मन माहिं ॥२३७॥
सारी उपरैनी दई, लीनी सीस चढ़ाइ।
थार भरयौ पकवान बहु, दियौ लड़ैती लाइ ॥२३८॥
सींगी गहकि बजाइकैं, गावत प्रेम बढ़ाइ।
मो मन की आसा पुजी, धनि कीरतिदा माइ ॥२३९॥
निकसे राज दुआर तैं, लाड़त राधा नाम।
फिरे नगर दै दाहिनौं, पुनि पुनि करत प्रनाम ॥२४०॥
प्रेम बचन रानी कहे, निपट मधुर सुख कन्द।
सुधि करि करि मारग चलत, भींजत परमानन्द ॥२४१॥
परम रम्य रविजा तटी, बंशीबट के तीर।
बैठे शीतल छाँह जहाँ, सखनि संग बलिबीर ॥२४२॥
देखि कुंज की ओट तें, बंदे सीस नवाइ।
कीनौं सींगी नाद पुनि, सुनत औदरी गाइ ॥२४३॥
आये बालक संग मिलि, गहैं लकुट सब हाँथ।
गाइनु मिझकावत फिरत, कौ तू सींगीनाथ २४४।

जाइ न माँगै गाँव में, बन में क्यौं मँड़राइ।
मैया याके भाल कछु, चन्दा सौ चमकाइ ॥२४५॥
सुबल कहत सुन रे सखा, यह जानत बहु जंत्र।
यासौं कीजै प्रीति जो, हमै सिखावै मंत्र ॥२४६॥
यह योगी है दूर कौ, घर आंगन कौ नाहिं।
मैया मोकौं बहुत गुन, दीसत हैं या माहिं ॥२४७॥
हँसि कैं मधुमंगल कही, कहा बजावतु गाल।
ऐसे मैं देखे बहुत, सुनि मैया गोपाल ॥२४८॥
तब उठि बोल्यौ मनसुखा, एकौं मोहिं बताइ।
ऐसौ काके भाल पर, चन्दा परत लखाइ ॥२४९॥
रैंता पैंता कृष्ण के, काननि लागे आइ।
मैया याके हाथ की, सींगी मोहिं दिवाइ ॥२५०॥
निकट जाइ गोबिन्द सौं, बोल्यौ सखा सुबाहु।
रावल सौं बातैं करैं, यह मन बढ़्यौ उमाहु ॥२५१॥
अरे बकत हौ बावरे, बोल्यौ अर्जुन भोज।
बातैं करिहौ कौन सौं, जानत खूँट न खोज ॥२५२॥
मना कहत तुम क्रूर सब, वृथा करत अरुझेर।
सींगी सुनिबे की भई, मो मन श्रद्धा फेरि ॥२५३॥
श्री नगधर सुनि सखिन की, बातैं अति मुसिकात।
श्रीदामा ने तब कही, आनि मते की बात ॥२५४॥
मोहन चलिकैं बूझिये, बसत कौन से देस।
मुद्रा तौ साँची धरैं, लगत बड़ौ योगेस ॥२५५॥
नाथ निकट सबही गये, बैठे आसन मोरि।
मधुमंगल बूझत प्रथम, दोऊ हाथनि जोरि २५६

कितते आवन जात कित, कहाँ बसोगे साँझ।
किहि कारन रावल कहौ, भूलि परे बन माँझ ॥२५७॥
आये उत्रा खण्ड तें, दच्छिण कियौ पयान।
देखन कौं कानन ललित, भूलि परे यह जान ॥२५८॥
सुबल कहै बाबा कछू, पढ़यौ गुनौं जो आइ।
जन्त्र मन्त्र अरु औषधी, हम कौं देहु सिखाइ ॥२५९॥
तब हँसि कें रावलि कही, जानत विविध उपाइ।
ग्वाल साँवरो बूझिहै, तब सब देहुँ बताइ ॥२६०॥
यह मोकौं जानत नहीं, हौं पै जानत याइ।
जनम होत गन्डा गरें, बाँध्यौ जसुमति माइ ॥२६१॥
अमल छके लोचन अरुण, रहे श्याम तन देखि।
बहुरि अमल हरि रूप कौ, रावल चढ़्यौ विशेषि ॥२६२॥
सुनि ब्रजपति के लाड़िले, मुरली नेंकु बजाइ।
ऐसी बूटी देउ तब, बहुत बढ़ें घर गाइ ॥२६३॥
मगन भयौ सुन मनसुखा, सब विधि सुधरयौ काज।
भैया बिन श्रम भाग्य बल, वैद्य मिलि गयौ आज ॥२६४॥
रावल आगें नेंक चलि, हाथ राखिदै पीठ।
मेरी धूमर गाइ कौं, कबहूँ लगै न दीठ ॥२६५॥
अरे बैठि तू बात मो, पहिलें सुनिलें नाथ।
गाँम बुलाई कौं तुरत, गन्डा रचि दै माथ ॥२६६॥
रे भैया या गाम में, उलटौ ही कछु न्याउ।
पहिलें बूझयौ नाथ सौं, मैं हीं जन्त्र उपाउ ॥२६७॥
आगें हौं लै लेउँगौ, बूटी जड़ी भभूत।
ता पाछें कछु लेहिगौ, नन्द महर कौ पूत ॥२६८॥

यह तौ भैया उचित है, कहें देत हौं टेरि।
नातर बाबा नाथ कौं, घर लै चलिहौं घेरि ॥२६९॥
झगरैं कोलाहल करैं, मिले परस्पर ग्वार।
दूर भये ठाढ़े हँसत, नागर नंद कुमार ॥२७०॥
हँसि बाघंबर झारिकैं, रावल चल्यौ पलाइ।
परम ललित लीला निरखि, प्रेम न हृदय समाइ ॥२७१॥
जबहिं बजाई बाँसुरी, भये त्रिभंगी लाल।
सुनत नाथ उनमत्त ह्वै, नाचत दै करताल ॥२७२॥
कहुँ बटुवा सींगी कहूँ, कहुँ बाघंबर डारि।
बूड़े बेहद नाद सुख, तन की दशा बिसारि ॥२७३॥
बन वीथिनु लोटत फिरत, दीरघ लेत उसास।
देखि गोपनंदन सबै, गये श्याम के पास ॥२७४॥
भैया मिरगी रोग ने, योगी लयौ दबाइ।
अब याकौ उलटौ हमैं, करनौं परयौ उपाय ॥२७५॥
श्याम कहत भैया सुनौ, दूरि गईं सब गाइ।
हम चलि ल्यावैं फेरि कैं, तब देखेंगे आइ ॥२७६॥
मित्र मंडली संग लै, चले बढ़ावत सोभ।
गाइ अखैबट बन गईं, हरे तृननि के लोभ ॥२७७॥
अरे मित्र तैं तो कही, बात भली समुझाइ।
लगते रावल यतन जो, तो खोईं हीं गाइ ॥२७८॥

* अरिल्ल *

रावल कीनौं बिदा, हरषि कीरति जबै।
छोटे बड़े बुलाइ, किये एकत सबै ॥
सिद्ध परम अवधूत, पुरातन जानिये

हरि हाँ तिन जो कहे सुवचन, सत्य करि मानिये ॥२७९॥
महा बली कोउ देव, आनि तासौं कही।
ताके मुख की बात, भाग्य बल मैं लही॥
कुँवरि सगाई जाइ, नंद घर कीजिये।
हरि हाँ यह बानी मम सत्य, कही सुनि लीजिये ॥२८०॥
बर कन्या के भाग, बताये भूरि अति।
यह ब्रज अविचल राज, कह्यौ है देव पति॥
सुख संपति अरु सुयश, लोक लोकनि बढ़ै।
हरिहाँ जो वह रचौ विवाह, ओप दुहुँ कुल चढ़ै ॥२८१॥
भलैं भलैं सब कहत, बात सुनि कान जू।
बैठे अग्रज अनुज, सहित वृषभान जू॥
पुनि सुनि सुखदा जननी, रावल भूप की।
हरिहाँ बोली करहु सगाई, हरि हित रूप की ॥२८२॥
यह निश्चै करि उठे, सु लागत अति भले।
मंगल बानी पढ़त, आपने घर चले॥
सोंधे कैसी महकि, गई पुर पूरि कैं।
हरिहाँ सबके मन संदेह, सो डारे चूरि कैं ॥२८३॥
बगर बगर भई खबर, बात निश्चै परी।
कहा कहौं आनंद, जलद लागी झरी॥
ब्रज गोपीं सुख ओपीं, सरसीं रंग में।
हरिहाँ घर घर मंगल गावति, भरीं उमंग में ॥२८४॥
प्रथम बदी ही बदन, बधुनि जिन विप्र सौं।
बोलि बोलि सो देतिं, सभागिनि छिप्र सौं॥
यूथनि यूथनि जुरि, मिलि कैं रावल चलीं

हरिहाँ कौतूहल अति बढ़्यौ, सकल पुर की गलीं ॥२८५॥
श्री कीरति ढिंग जाइ, कहति धनि धनि घरी ।
कुँवरि सगाई हेतु आज, तुम हाँ करी ॥
धनि जसुमति कौ भाग, मनोरथ कर फली ।
हरिहाँ जाकें ब्याही जाइ, भवन भूषण लली ॥२८६॥
तब लगि गवनी शारदा, गोपी भेष बनाइ ।
पहुँची मंदिर महरि के, खबरि दई तिन जाइ ॥२८७॥
श्री जसुमति आदर दियौ, चौकी पर बैठाइ ।
देवि अधिक प्रफुलित बदन, बूझति चित्त लगाइ ॥२८८॥
रूपवंत वनिता नई, देखी जसुमति धाम ।
उमहि रह्यौ हो गाम सब, सुनि धाई ब्रजबाम ॥२८९॥
महा भाग्य वि हिं पुर बसति, परम निपुन तुम बाल ।
समाचार देखे सुने, हमसौं कहौ कृपाल ॥२९०॥
रानी हौं वृषभानु पुर, रात बसी ही जाइ ।
सुमति नगर हौं रहति नित, सुख जु निरंतर पाइ ॥२९१॥
श्री बरसाने ह्वै रह्यौ, घर घर मंगल चार ।
तेरे सुत के ब्याह कौ, निश्चै पर्‌यौ बिचार ॥२९२॥
भाग बली बैठी कहा, देहि बधाई मोहिं ।
जो बांछित बहु काल तें, सो दिन प्रापति तोहि ॥२९३॥
श्री राधा जननी जनक, जोरि सकल परिवार ।
बात प्रगट यह कहिदई, घर घर भई प्रचार ॥२९४॥
आज काल्हि हीं लाल को, तिलक बेगि दै होइ ।
भयौ बिरंचि जु दाहिनौं, रानी संसै खोइ ॥२९५॥
चट दै उठी जु गाह कैं, घूमि झूमि सुम्व नारि

कहा देहुँ या भाम कौ, जसुमति रही विचारि ॥२६६॥
इतहि सोच उत प्रेम ने, लीनी अधिक दबाइ।
उभै सिंधु आनंद में, पुनि पुनि गोता खाइ ॥२६७॥
तब उठि बोली रोहिनी, अहो महरि चित चेत।
मंगल साज सँभारि सब, टीकौ आवन हेत ॥२६८॥
कीनें जतन अनेक बिधि, जा मंगल के काज।
देखि कृपा गिरिराज की, सुवन बन्यौ सब आज ॥२६९॥
सावधान रानी भई, सुनत रोहिनी बोल।
पहिरावत वा भाम कौं, पट भूषण जु अमोल ॥३००॥
छला अँगूठी आरसी, चौकी दुलरी हार।
ब्रज बनितनि इतनौं दियौ, सिमिटै कैऊ भार ॥३०१॥
दै असीस मारग चली, सो सब दियौ लुटाइ।
लखि गोपिनु कौ प्रेम, रही सारद सुमति बिकाइ ॥३०२॥

* सोरठा *

निर्मल सुदिन सुधाइ, पंडितराज बुलाइ कैं।
बरसाने कौ राइ, प्रथम पठावत रोपना ॥३०३॥
बैठे सभा बनाइ, पुरजन गुरुजन बोलि कैं।
कहत सबनि समुझाइ, कहा प्रथम दैवे उचित ॥३०४॥
बसन रतन निमोल, दीने सकट भराइ कैं।
पुनि गोधन के टोल, हय गय साजि सिंगार बहु ॥३०५॥
मागद चारन भाट, नाई बंदी जन चले।
कीनें मंगल ठाट, वेद विप्र उचरत भले ॥३०६॥
जहाँ तहाँ मंगल गान, पंच शब्द बाजे बजत।
छाये गगन विमान, जय धुनि पूरित देव गन ॥३०७॥

भये शुभ सगुन अनंत जब मिलि निकसे नगर तें।
सुर सुमनन वर्षत नंदग्राम सन्मुख चलत ॥२०८॥
-उच्च अथाई गोप मिलि बैठे नंद ब्रजेश।
राज सभा में शुभ घरी नेगिनु कियौ प्रवेश ॥२०९॥
विप्रनि दीनी आसिषा कीनी नंद प्रनाम।
आये पुर वृषभान तें करन सगाई श्याम ॥२१०॥
नंद द्वार नौवत गहकि बाजी ताही बार।
धाये आये दूर तें सुनि सुनि कैं सब ग्वार ॥२११॥
नंद प्रेम की भीर में सम्हरि सकत नहिं गात।
भीजि भीजि आनंद में कहत विप्र सौं बात ॥२१२॥
द्विजवर रावल भूप ने हमैं लियौ अपनाइ।
उनके गुन गरुवे अधिक कहा सुनाऊ गाइ ॥२१३॥
देखि सुभ घरी चौक रचि जसुमति वधुनि बुलाइ।
कृष्ण कमलदल नैंन कौ कियौ सिंगार बनाइ ॥२१४॥
नगर बुलावौ फिरत है महत बड़ाई देत।
बात सुनत ही सबनि उर उम्ह्यौ आवत हेत ॥२१५॥
गाँव गाँव तें गोप गन आवतिं गोपी गैन।
घोरी मोहन लाल की गावतिं मधुरें बैन ॥२१६॥
सोभा सागर नंद गृह चहुँदिसि छबि अस आइ।
मनु सावन सरिता सुभग उमगि मिलत हैं धाइ ॥२१७॥
बाल वृद्ध अरु तरुन मिलि आये मंदिर राज।
बाजेनु धुनि अरु गान धुनि मनु नव घन की गाज ॥२१८॥
केसर अजिर लिपाइ कैं मोतिनु चौक पुराइ।
मणि चौकी पर श्याम कौं तब बैठार्यौ आइ २१९

भये शुभ सगुन अनंत जब मिलि निकसे नगर तें ।
सुर सुमनन वर्षत नंदग्राम सन्मुख चलत ॥२०८॥
उच्च अथाई गोप मिलि बैठे नंद ब्रजेश ।
राज सभा में शुभ घरी नेगिनु कियौ प्रवेश ॥२०९॥
त्रिप्रनि दीनी आसिषा कीनी नंद प्रनाम ।
आये पुर वृषभान तें करन सगाई श्याम ॥२१०॥
नंद द्वार नौवत गहकि बाजी ताही बार ।
धाये आये दूर तें सुनि सुनि कैं सब ग्वार ॥२११॥
नंद प्रेम की भीर में सम्हरि सकत नहिं गात ।
भीजि भीजि आनंद में कहत विप्र सों बात ॥२१२॥
द्विजवर रावल भूप ने हमैं लियौ अपनाइ ।
उनके गुन गरुवे अधिक कहा सुनाऊ गाइ ॥२१३॥
देखि सुभ घरी चौक रचि जसुमति वधुनि बुलाइ ।
कृष्ण कमलदल नैंन कौ कियौ सिंगार बनाइ ॥२१४॥
नगर बुलावौ फिरत है महत बड़ाई देत ।
बात सुनत ही सबनि उर उम्फिल्यौ आवत हेत ॥२१५॥
गाँव गाँव तें गोप गन आवतिं गोपी गैन ।
घोरी मोहन लाल की गावतिं मधुरें बैन ॥२१६॥
सोभा सागर नंद गृह चहुँदिसि छबि अस आइ ।
मनु सावन सरिता सुभग उमगि मिलत हैं धाइ ॥२१७॥
बाल बृद्ध अरु तरुन मिलि आये मंदिर राज ।
बाजेनु धुनि अरु गान धुनि मनु नव घन की गाज ॥२१८॥
केसर अजिर लिपाइ कैं मोतिनु चौक पुराइ ।
मणि चौकी पर श्याम कौं तब बैठारयौ आइ ॥२१९॥

नेगी श्रीवृषभानु के भीतर लिये बुलाइ।
तिननि आसिका श्याम कौं निकट सुनाई आइ ॥
टीकौ कीनौं वेद विधि नंद सुवन के सीस।
दीनौं साज गिनाइ कैं प्रोहित रावल ईस ॥

※ कवित्त ※

झूँमि झूँमि गावति हैं जारी औ किवारिनु में,
कोऊ राज भवन कोऊ ठाढ़ीं पौरि तीर में।
कोऊ छकि प्रेम दुलरावति लड़ैते लाल,
कोऊ सुर लीन कोऊ घोरी अति गँभीर में ॥
वृन्दावन हितरूप कोऊ पुर बीथिनु वर,
थार धरें भैंट कर रुकीं महाभीर में।
मानहु आनंद नंद द्वार आजु पौरिया जू,
लाल ढिग पठाईं जे रहीं हैं न सरीर में ॥३
गावति हैं गारीं ब्रजनारीं महा मोद भरीं,
आजु कौ सौ द्यौस दई आजु हीं बनायौ है।
धन्य ब्रजरानी जिन जतन अनेक किये,
ताकौ फल दृग अबहीं दरसायौ है ॥
वृन्दावन हितरूप कीरति बृषभानु जू कैं,
महा पुन्य उदौ नंद औ जसोदा पायौ है।
ऐसे कारे कान्हर कौं वैसी सत चन्दमुखी,
दीनी है दया करि तीनों लोक यश छायौ है ॥३२
हुलसीं सबै गावैं छबि पावैं उरझावैं नैंन,
मैंन कैसे बैन फूल मुख तें झरति हैं।
कोऊ महा लोनी निहारति मुख मोहन को

कोऊ चढ़ि ऊँचे कुसुम वरषा करति हैं।
वृन्दावन हितरूप श्याम कौ तिलक भयें,
बारि बारि भूषण घर याचक भरति हैं॥
देखौ वृषभानु की लड़ैती परताप आजु,
गोकुल में सुख की उलैंड़ैं अति परति हैं ॥३२४॥
देति हैं द्विजनि दान बधुनि बहु सनमान,
राजत हैं ब्रजराज ठाड़े गोप गन में।
पहिरें नौतन दुकूल वदन पै बाढ़ी फूल,
कंचन की दुति देह नेह भरे मन में॥
नैंननि में फूल्यौ रंग उत्सव की अति उमंग,
थोरी थोरी मुसकनि रमी है अधरन में।
वृन्दावन हितरूप कृष्ण के जनक की आजु,
हीये की हुलसनि समात नाहिं तन में ॥३२५॥

दोहा—नभ जै जै बानी भई, व्रज अवनी त्यौं जान।
इत उत बाजे परस्पर, गहकि गहकि नीसान ॥३२६॥
कियौ लाल कौ आरतौ, ब्रजपति अनुजा आइ।
बहुरि अरघ दै कैं लये, मंदिर जसुमति माइ ॥३२७॥
वारि बारि कैं जल पियौ, न्यौछावर किये प्रान।
नंद महामनि हुलसि कैं, दये महा निधि दान ॥३२८॥
पुनि पुरजन परिवार सब, समध्यानै के लोग।
नंद रची ज्यौनार, तब नाना विधि के भोग ॥३२९॥
गारीं दै दै नव बधू, गावतिं भरी हुलास।
महरि मनावति गिरि कृपा, जिन पुजई मन आस ॥३३०॥
जबहिं जिवाँइ बिदा, करत नंद होत आधीन

मोल लये वृषभानु हम, कीनी प्रीति नवीन ॥३३
बैठि अथाई नंद जू, बकुचा दीने खोलि।
पहिरावत कर आपने, एक एक कौं बोलि ॥३३
रतन जटित टोडर दये, पहुँची अरु मणि माल।
अंगद नगनि जराइ के, मोती कान विशाल ॥३३३
दर्वि दयौ बहु भार भरि, अरु बड़रासि तुरंग।
बिदा करे हित मानि कैं, बहुत रह्यौ रस रंग ॥३३४
फूलि फूलि कैं ग्वाल सब, मिलत कृष्ण कौं धाइ।
भैया तेरी बनि गई, हम पै कही न जाइ ॥३३५॥
भई सगाई नृपति घर, अब तू बदिहै काहि।
चोरी हू सब छिप गई, मैया डरपति जाहि ॥३३६॥
बरजति रानी नंद की, यौं न कहौ अब भूल।
बेटा ज्यौं त्यौं भयौ है, दई हमैं अनुकूल ॥३३७॥
सुनि कोउ कहिहै सजन, घर चोर नाम तजि देहु।
जो भावै सो ग्वार सब, मोपै तें लै लेहु ॥३३८॥
बोलि ग्वार सब ग्राम के, पट भूषण पहिराइ।
झगरि लेत सब महरि सौं, मेवनि गोद भराइ ॥३३९॥
बहुत भये मंगल उदै, ता दिन तें ब्रज माहिं।
जसुमति मन की फूल कौं, बाट तौल सम नाहिं ॥३४०॥
बहु मोली लै ओढिनी, जसुमति पठई मोद।
श्री वृषभानु कुमारि कौं, लाड़ भरीसु गोद ॥३४१॥
इत उत बहु मंगल भये, कहाँ लगि बरन्यौ जाइ।
वृन्दावन हितरूप बलि, दिन दिन सुख अधिकाइ ॥३४२॥
श्री राधा ब्रजपति सुवन, दुहुँ दिसि लाड अछेह

जिन पर गोपी गोप सब, बरषत हित कौ मेह ॥३४३॥
हाँडी डाली परस्पर, जाति तीज त्यौहार।
छिप्यौ अलौकिक प्रगट लखि, लोक रीति व्यौहार ॥३४४॥
करी सगाई कृष्ण की, कीरति रावल बूझि।
अभिलाषा जसुमति फली, सबै परी जग सूझि ॥३४५॥
बृन्दावनि हितरूप वलि, दुहुँ दिसि वारिधि नेह।
शिव विरंचि हू चिंतवत, अति दुर्ल्लभ सुख येह ॥२४६॥
ठारहसै बारह बरस, रस मय फागुन मास।
शुक्ल पक्ष एकादशी, बेली भई प्रकास ॥३४७॥
ब्रजरानी अभिलाष यह, कृष्ण सगाई हेत।
बृन्दाबन हितरूप बलि, कहत सुनत सुख देत ॥३४८॥
श्री बृन्दाबन धाम मधि, तीरे सेवाकुंज।
श्री हरिवंश कृपा कथ्यौ, महरि मनोरथ पुंज ॥३४९॥
निपट नवीन चरित कह्यौ, गुरुदत्त कृपा विचार।
बृन्दावन हितरूप बलि, रसिकिन कौ सुखसार ॥३५०॥

॥ इति श्रीकृष्ण सगाई ॥

अथ श्रीवृन्दावन जस प्रकास वेली

॥ राग भैरो तथा हमीर—ताल चर्चरी ॥

* पद *

चरन चिन्हनि भई, अमल अंकित मही ।
एक रसना कहा बरनि कोऊ सकै,
सेष हू सहस मुख परै न महिमा कही ॥१॥
जा मही रैनु वांछित जु त्रिपुरारि मन,
अज उमाहें जु अभिलाष अवहूं रही ।
मुनिनु के वृन्द तप कष्ट तन सहत हैं,
जग्य अरु जोग करि जुक्ति गाढ़ी गही ॥२॥
सबहि अवतार प्रभु भरे ईस्वर्ज सुख,
विपिन माधुर्य रस महा गरुवौ सही ।
बिना अलि भाव हित कृपा रासेस्वरी,
साखि सुनि ग्रन्थ कहि बापुरे किन लही ॥३॥
रूप गुन कला चातुर्ज सींवां मिथुन,
सुरत अंबुद बरषि सुरस सरिता बही ।
वृन्दावन हित रूप विलसि हैं जुगल धन,
व्यास नंदन सरन सुदृढ़ पन जिन चही ॥४॥१।
भूमि संपुट धरयौ नग अलौकिक बना ।
मोतियाबिंद हिय दृग बहिर मुषनि कें,
सूझि नहिं परतु यह निगम गोचर घना ॥१॥
गुरु कृपा दृगनि अंजन दियौ रसिक जन,
पारखू निरषि कैं गह्यौ करि दृढ़ पना ।

अमी माधुर्ज रस सिंधु दंपति जहाँ,
मीन भये तहाँ संतत जु भावक जना ॥२॥
जो सुख जोग गति ग्यान परस्यौ नहीं,
कर्म गति क्यौं लहै और साधन घना ।
रसिक संग गगन उर प्रेम विधु उदित भये,
महा दुर्लभ निरखि गौर सांवल तना ॥३॥
अरे सुनि वीर तू घाट आछैं लग्यौ,
घेरि सब ओर तें धूत अति यह मना ।
रसिकिनी रूप आसक्त नागर सुमिर,
कुञ्ज बसि पोषि तन पाइ भाजी चना ॥४॥
जोति छवि पुञ्ज जहाँ तहाँ जा अवनि पर,
फिरति हैं टहल सुख छकीं ये अलिगना ।
वृन्दावन हित रूप कृपा यह अलभि लहि,
परम कौतिक उरझि कौतिकी तू मना ॥५॥२
बिविध कौतिक भरी मही आरन्य है ।
लोल दृग रहत जहाँ हेत इहिं,
दुहुँनि के सिंधु सोभा लहरि होत उत्पन्य है ॥१॥
विरमि रहे लाल प्यारी भुजा अंश धरि जहां,
परैं दृष्टि तहां सुधि रहै न अन्य है ।
नमो वृन्दाटवी महा गरुवे चरित,
इन गुननि भयौ मुनि देव नर मन्य है ॥२॥
बिस्व रचना सबै पुरुष प्रकृति की विपुन,
अवनी अहा रूप चेतन्य है ।
छदम परसतु नहीं जहाँ माया नटी,

जुगल आनँद वर्द्धन जु संपन्य है ॥३॥
सिक परसंश श्री व्यास नंदन सुमति,
सुरस प्रापति मिथुन कृपा जो जन्य है।
वृन्दावन हित रूप वंदि अग महत जन,
पाइ कानन रहसि भये धनि धन्य है ॥४॥

भजन रस खेत वन सुमति सूरा जुरे।
चाउ दम्पति मिलन बढ़तु छिन छिन हिये,
धन्य सुभ जनम जग चले पथ बांकुरे ॥१॥
कलि कुटिल नृपति की देखि सेना वली,
अगमने पग धरैं पछमनें नहिं मुरे।
अङ्ग अपु बसत अरि महा जोधा जदपि,
काम लोभादि सो इष्ट बल करि घुरे ॥२॥
राधिका लाल के नाम कौ कवच सजि,
कोटि सतसङ्ग करि भक्ति आयुध फुरे।
भाव गंभीर अरु धीर विद्या जु गुरु,
साधु मग विघ्न जेते जु भर हरि दुरे ॥३॥
सुविधि सेई जिननि दिव्य कानन थली,
जगत के मोह परपंच बंधन चुरे।
लोक अरु वेद बाईं जु गति दाहिनी दै,
जु निकसे कुमति देखि काइर झुरे ॥४॥
गुननि गरुवत सत पुरुष सनमुख,
भये दंभ पाखंड ढीले परे बापुरे।
दियौ आनक विदित राधिका पति,
मिलन मधुर रस भिलते अभिलाष सबही पुरे ॥५॥

जुगल आनँद वर्द्धन जु संपन्य है ॥३।
सिक परसंश श्री व्यास नंदन सुमति,
सुरस प्रापति मिथुन कृपा जो जन्य है।
बृन्दावन हित रूप बंदि अस महत जन,
पाइ कानन रहसि भये धनि धन्य है ॥४॥

भजन रस खेत बन सुमति सूरा जुरे।
चाउ दम्पति मिलन वढ़तु छिन छिन हिये,
धन्य सुभ जनम जग चले पथ बांकुरे ॥१॥
कलि कुटिल नृपति की देखि सैंना बली,
अगमनें पग धरैं पछमनें नहिं मुरे।
अङ्ग अपु बसत अरि महा जोधा जदपि,
काम लोभादि सो इष्ट बल करि घुरे ॥२॥
राधिका लाल के नाम कौ कवच सजि,
कोटि सतसङ्ग करि भक्ति आयुध फुरे।
भाव गंभीर अरु धीर विद्या जु गुरु,
साधु मग विघ्न जेते जु भर हरि दुरे ॥३॥
सुविधि सेई जिननि दिव्य कानन थली,
जगत के मोह परपंच बंधन चुरे।
लोक अरु वेद बाई जु गति दाहिनी दै,
जु निकसे कुमति देखि काइर मुरे ॥४॥
गुननि गरुवत सत पुरुष सनमुख,
भये दंभ पाखंड ढीले परे बापुरे।
दियौ आनक विदित राधिका पति,
मिलन मधुर रस झिले अभिलाष सबही पुरे ॥५॥

नकट भये दृगनि के गौर सांवल सजन,
धन्य ये महत जन कृपा की दिस दुरे ।
वृन्दावन हित रूप जुगल फल दाइका,
धन्य यह धरा मरमी रसिक साधु रे ॥६॥४॥
देखि राधा कुंवरि धाम अद्भुत लसै ।
उभै रुचि खेल की सचतु संपति विविधि,
रहतु कुसुमित जुगनि भाग्य वड़ मनु हसै ॥१॥
राति कुमुदनि विकसि कमल वासर खिलैं,
उठति सौरभ घनी मधुप लोभी फसै ।
कीर कोकिल बरहि सारका मनौं,
मुनि पढ़त अनुराग सौं लाल प्यारी जसै ॥२॥
तहाँ आनँद रूपी नवल द्रुम लता,
एक रस रहत तन पात एक न खसै ।
इंद बदनी फिरति सखी अगनित जहाँ,
कहौ ता ठौर में तिमिर किहिं बिधि बसै ॥३॥
अमल अवनी बिछी चूर कर्पूर की,
कहौ सोभा कहा देत उपमा नसै ।
चाह छिन छिन बढ़ति रसिक रस लबधि की,
कहति लखि प्रिया तरु बेलि कैसैं गसै ॥४॥
नेह रस प्रेम मूरति परम कौतिकी,
केलि आतुर निपट सीस पद तल घसै ।
वृन्दावन हित रूपलाल अभिलाष मन,
भरन करुना कुसल कुंज मंजुल धसै ॥५॥५॥
वंदि श्री स्वामिनी परम कौतिक सदन

कृष्ण अह्लादनी सदा राजति जहाँ,
निकर वपु धरैं तहाँ सुविधि सेवत मदन ॥१॥
बेद अरु तंत्र शिव सेप बरनत थके,
विधि बरनि चलि गये लही तद्दिप हद न।
लोक ललित धाम रासेस्वरी,
उदौ सौभाग्य करैं, उदौ चिन्ह जु पदन ॥२॥
विपिन छवि कमल मंडल लसतु करनिका,
तहाँ निर्तत दोऊ चरन नूपुर नदन।
उभै तन निरखि प्रतिबिंब मणि मणि जु प्रति,
अहा बानक कहा करी उपमा रदन ॥३॥
ललक छिन छिन नई रसिक नागर कुंवर,
दृगनि सादर रुचै रूप रस कौ अदन।
वृन्दावन हित रूप वंदि कानन रैनु,
महत महिमा न बरनी परति इहिं बदन ॥४॥६
लोक में मुकुट मणि पंच जोजन बना।
जहाँ की दासि वांछित जु सुर नागरी,
नहीं प्रापति निपट जान दुर्लभ घना ॥१॥
शिव समाधि जु धरैं जतन सब मुनि करैं,
कृपा बल लगै कहूँ हाथ सुख कौ कना।
नमो अस धाम अभिराम गौरंग कौ,
अखिल लोकनि धनी रंग राच्यौ मना ॥२॥
प्रेम कौ खेत सागर जु रस जुगल कौ,
जाहि मानत रसिक परम अपनौं धना।
तरनिजा तीर कानन जु कौतिक मई,

रूप फुलवारि जहाँ फिरति सहचरि गना ॥३॥
निकर आनँद सचैं खेल नव नव रचैं,
सनैं अनुराग सौं गौर साँवल तना।
रतें दूरि यह रहसि राधा रसिक,
बुद्धि नहीं छ्वै सकति कर्म जड़ जे जना ॥४॥
धन्य ते धन्य तिन जन्म जग माहिं,
गनि विपिन रस रसिक भये तजि विषै बासना।
वृन्दावन हित रूप स्याम स्यामा भजन,
सिमिटि सब ओर तें धरयौ साँचौ पना ॥५॥७॥
जयति वृंदाटवी महत महिमा भरी।
गहर रस सिंधु रहै बढ़त छिन छिन जहाँ,
प्रेम विधना तहाँ सृष्टि रसमय करी ॥१॥
गौर अरु श्याम चरितनि हरयौ जासु चित,
तिननि विपइनु कथा दूरि तें परि हरी।
कुंज कमनीय लीला ललित आदरी,
गुरु कृपा दृष्टि जा ओर रंचक ढरी ॥२॥
कोऊ सत पुरुष भेदी जु उहिं देस के,
तिननि मनि विर्ति लै मांहिले सुख धरी।
गोप्य तें गोप्य आलय जु श्री राधिका,
उच्च तें उच्च तहाँ सुमति राखी खरी ॥३॥
अगह तें अगह जो मिथुन को रहसि है,
सो गहायौ जु फल आस पूरी परी।
अतुल तें अतुल आनंद विवि मिलन कौ,
भाव अलि हित सुदत निरखि लागी झरी ४

मधुर तें मधुर रस चाखि हिय दृष्टि दृग,
स्वाद वीथी बहुरि तहां ते नहिं टरी
वृन्दावन हित रूप गहर तें गहर सुख,
मचलि परि मीत मन मानि धनि यह घरी ॥५॥

धन्य भई धरा जिन विपिन माथैं धरयौ ।
धरा चलि जाइगी धाम यह एक रस,
निगम आगम कहैं जानि सुमतिनु परयौ ॥१॥
सच्चिदानंद यह रूप ब्रजचंद कौ,
कियौ नर नारि रस मधुर जग विस्तरयौ ।
अवनि कौ रूप यौं ग्रहन कियौ धाम नें,
वंदि पुनि पुनि मना काज सुकृतिनु सरयौ ॥२॥
अहा कहा कृपा दुहुँ ओर को लखि परी,
परम आनन्द कौ घुमड़ि अंबुद झरयौ ।
ध्याइ रे ध्याइ अस दिव्य वृंदाटवी,
राधिका लाल रससिंधु जामें भरयौ ॥३॥
त्रिगुन माया पवन जहाँ परुषत नहीं,
एक रस रहत है सदाँ फूल्यौ फरयौ ।
उमगि कैं वारि सींचत तरनिनन्दनी,
चुवत रंग पत्र देखि नवल नित प्रति हरयौ ॥४॥
जुगल दुलरावनैं प्रीति नित नित नई,
महा छवि गहर बन ठौर ठौर जु करयौ ।
वृन्दावन हित रूप धाम कौतिक अवधि,
दरसि परयौ लोक हित परम करुना ढरयौ ५ ६

दिपतु है अवनि कानन कृपा ...

कहौ रसना कहा परम अचरज महा,
निगम आगम वदत देखि भव तें परैं ॥१॥
ज्यौं अखिल अंड कौ ईश ब्रज अवतरयौ,
त्यौं जु यह धरा कौ रूप बनपति करैं ।
दुहुँनि दरसाय लीला दई लोक वत,
बहिर जिन दृष्टि तिन सबनि की मति हरैं ॥२॥
रतन निरमोल लखि थकित जो जौहरी,
बापुरे कूंजरे कनक कीमत लरैं ।
कहाँ कोविद जु तिन बात कौं चित धरैं,
भाव करि हीन यौं अग्य पचि पचि मरैं ॥३॥
लता तरु अखिल आनन्द दाइक सबै,
निरखि चैतन्य तन भुव पराग जु झरैं ।
हरषि पग धरति है राधिका लाल तहाँ,
मही के भाग्य मनु अंक सादर भरैं ॥४॥
होत रोमांच उर प्रेम आधिक्य सों,
दिये भुज अंश चलि जात तरु तरु तरैं ।
विपिन कुसुमित रहतु हेत खटरितु जु यौं,
गौर अरु स्याम इत कौन छिन अनुसरैं ॥५॥
अमी की दृष्टि पोषत सबै मिथुन मिलि,
कुंवरि करुना अवधि बहुरि तिन दिस ढरैं ।
वृन्दावन हित रूप धन्य राधा भवन,
जे गहैं सरन ते दिव्य परिकर ररैं ॥६॥१०॥

* करखा राग पञ्चम *

धन्य धन्य वृन्दाटवी सुपद रवनी

प्रेम आगार सुख सार ही अवित नित,
मिथुन रस केलि जहाँ परम कमनी।
हंसजा तीर अलि भीर वगरयौ तहाँ,
पहुप घनसार अति चारु अवनी
वृन्दावन हित रूप स्याम मनसिज बिथा,
कुंज बसि राधिका कुंवरि दवनी ॥११।

* पद *

जयति जयति वृन्दाटवी गुननि गहरी।
तरनि तनया जासु हियें माला विमल,
पुलिन मनु रैनुका रूप लहरी॥
कुञ्ज कौतिक विशद मिथुन सौभाग की,
उमगि अनुराग रस परति दहरी।
वृन्दावन हित विपिन सुजस चुनि गुनि रतन,
रसिक जन प्रेम सों दाम पहरी ॥१२।
सदा वंदियै विपिन जीवनि विहारी।
परम करुनग्य असरन सरन देखियें,
प्रेम विधि रची जहाँ सृष्टि न्यारी॥
सबै थिर चर जहाँ सच्चिदानन्द मय,
रहयौ अंबुज सुवन छकि निहारी।
वृन्दावन हित धरैं पंच जोजन सुतन,
उचित सुख रुचित दै लाल प्यारी ॥१३॥
जयति वृन्दाटवी उदित भुव चंद्रमा,
राधिका स्याम कीनैं चकोरी।
बेलि तरु सुच्छ मकुलित रहै रैंन दिन

छिटकि रही चाँदनी चहूँ ओरी ॥१॥
झरत सीकर अमल सुधा बरषत मनौं,
दिसा निर्मल गगन छबि न थोरी।
अष्ट पुनि जाम पूरन जु सरसति कला,
दरसि अस जुगल मति प्रेम बोरी ॥२॥
सरद राका बनी कृपा बिनुमित जहाँ,
राहु अरि तिमिर दल बल जु मोरी।
हंसजा बारि चहुँ ओर पारस दिपत,
देखि प्रभुता छके रसिक गोरी ॥३॥
अहा बानिक कहा कहति नव लाड़िली,
उमगि सुख सिन्धु नैं मैंड़ तोरी।
वृन्दावन हित रूप नमो कानन ललित,
करत परसंस पुनि पुनि किशोरी ॥४॥१४॥

* रामकली *

स्याम माई यह सुख बानि परी है।
श्री वृन्दावनि कुञ्जनि सोभा मो दृग रहत अरी है ॥१॥
भोर भये खग निकर कुलाहल बोलनि प्रेम भरी है।
राधा नाम बेद धुनि मानौं, मुनि कुंवरनि उचरी है ॥२॥
पत्र फूल फल तरु बेलिन बहु, छबि बरसत गहरी है।
वृन्दावन हित रूप रसिक हरि, बन गुन मति जकरी है ॥३॥१

* राग विभास *

वृन्दावनघन रस रजधानी, जहाँ विहरत राधा नँदन्द
रति मन्दिर सेवति ललितादिक, गावति प्रेम छकी रचि छद॰

जिनके नाद स्वाद वन पूरित, घुमड़ी मनहुँ घटा आनन्द
वृन्दावन हित तृषित चकोरी, निरखत रूप रासिजुग चंदनु ॥

* विभास *

नमो नमो वन प्रेम परावधि,
जाहि न तजत पलक पिय प्यारी।
कौतिक भूमि लता द्रुम सैनी,
ललित वलित फल फूलनि भारी ॥
अति मन हरन कलिंदनन्दिनी,
रस पति रस मनु निकर पनारी।
वृन्दावन हित रूप जाउँ बलि,
कानन केलि निगम गति न्यारी ॥१

सुनि री तू ललिता परम रस गलिता,
मोहि लगतु कानन अति नीकौ।
जब जब देखौं तब तब औरै,
यह बन सब लोकनि सिर टीकौ ॥
याके रंग अमित छिन छिन में,
कुञ्ज कुञ्ज आनंद बढ़ै ही कौ।
वृन्दावन हित रूप स्वामिनी,
कहति भट्ट यह जीवन जी कौ ॥१८

निकर प्रवाह अखिल आनंदनि,
श्रवत सखी या वृन्दावन तें।
ताहि देखि पिय रसिक साँवरौ,
विथकित होत आप तन मन तें ॥

मुहिं दै तू मेरी सौं इतनी मति,
बन प्रताप कछु कहौं बदन तें।
वृन्दावन हित रूप स्वामिनी,
कहति बिवस जल ढरत हगनि तें ॥१९॥
राधा कौ वृन्दावन रसमय,
मोहन कौ प्यारौ लगै अति है।
पैंड़ एक भरि तजत न सींवा,
प्रीतम की ऐसी भई गति है॥
यातें गह्यौ अनन्यनि दृढ़ करि,
मन क्रम वच बढ़ी निर्मल रति है।
वृन्दावन हित रूप धाम यह,
जहाँ बढ़ति दंपति संपति है॥२०॥

* बिलावल *

बिनु मित भाग कहा कहौं वृन्दावन धरनी।
महिमा सिंधु अगाध जो बाराह सु बरनी ॥१॥
अखिल लोक मणि स्याम की लीला मन हरनी।
परम सुहागिनि राधिका सुख उतपति करनी ॥२॥
सहचरि मूरति प्रेम की सेवा विस्तरनी।
रविजा आनंद रूपिनी विबि रुचि लै ढरनी ॥३॥
कुंज कुंज आनन्द की अभिलाषा भरनी।
द्रुम बेली चैतन्य घन अमृत कन झरनी ॥४॥
पद अंकित पुलिन स्थल स्यामा तहाँ विचरनी।
वृन्दावन हित रूप बलि मुहिं दायक सरनी ५ २१

या कानन परताप कौं राधा हरि जानैं
जाकी सोभा देखन तें कबहूँ न अघानैं ॥१॥
विधि पुनि उद्धव से सखा तृन हौन लुभ्यानैं ।
वेद व्यास सुकदेव से जाकौ लहैं न प्रमानैं ॥२॥
नारद सनतकुमार से चिंतित चित ध्यानैं ।
रमा उमापति हू सदा मन मन जस गानैं ॥३॥
लीला उदधि समान बन मति अंजुरी समानैं ।
वृन्दावन हित रूप बलि किहि विधि जु बखानैं ॥४॥२२॥
वृन्दावन रज सेइयै स्वामिनि लै इच्छा ।
धनी दियौ धन पाइयै यह गुरु की सिच्छा ॥
नाते वस्तु जु मिलत है लै प्रेम परीच्छा ।
वृन्दावन हित रूप बलि स्यामा देहु भिच्छा ॥२३॥
या कानन बसियै जु तब राधा सुदृष्टि करि ।
ललितादिक करुना अवधि तिन चरन सरन परि ॥१॥
मन की दुबिधा डार दै आनंद बिपुल भरि ।
दंपति चरित अलाप करि विमुखनि संग परहरि ॥२॥
बन संपति कौं सुमति सचि यह व्रत साँचौ धरि ।
कुंवरि सुहाग लड़ाइ नित रसना अमृत झरि ॥३॥
लूटैं तेरौ भजन धन इंद्रिन तें बहु डरि ।
संत संगति सजि कोट कौं ठग चोरनि सौं लरि ॥४॥
बिपिन गगन ह्वै ससि उदित चकोर ह्वै अनुसरि ।
वृन्दावन हित रूप बलि नित सुख बारिध तरि ॥५॥२४॥
श्री राधा परसाद तें बसिवौ बन भावै ।
नहिं यह कुमति पिसाचिनी जहाँ तहाँ बहकावै ॥१

मारग डरयौ अमोल नग मूरख ज्यौं पावै ।
पाहन कौ भ्रम मानि कैं लै दूरि बगावै ॥२॥
विषै असित यौं मूढ़ मन मोकौं भटकावै ।
वन रहि दंपति पद भजौं तहाँ तें उचिटावै ॥३॥
तीन गुननि हू तें परैं तुम धाम कहावैं ।
गुननि रचित यह देह है किहिं विधि रहि आवै॥४॥
कुंवरि कृपा जो प्रेरिकैं मन रुचि उपजावै ।
अति दुर्लभ वृन्दाटवी तव रूप दिखावै ॥५॥
सूरा पूरा रसिक कोऊ नित फैंट बंधावै ।
तव ठहरै रस खेत में कहूँ चित न चलावै ॥६॥
गौर स्याम के मिलन कौं हिय बिरह जु तावै ।
वृन्दावन हित रूप अलि स्वामिनि अपनावै ॥७॥२५।
अहो लड़ैंती दीजिये वृन्दावन रहिवौ ।
न्हान पान जल रविसुता तुव कृपा जु चहिवौ ॥१॥
रज कौं सर्वसु मानिवौ मत आन न बहिबौ ।
जथा लाभ संतोष करि कुञ्जनि कौ गहिवौ ॥२॥
रस रूपी कौतिक चरित वानी कथि कहिवौ ।
छिन छिन प्रेम जु भीजिवौ तुम मिलन उमहिवौ ॥३॥
देह जनित दुख सुख सबै अपनौं कृत सहिवौ ।
वृन्दावन हित रूप भजि यह अलभि जु लहिवौ ॥४॥२६।
श्री राधा कौ रसमई वृन्दावन गाऊँ ।
मृदु मन कुंवरि कृपा करौ यह सुमति जु पाऊँ ॥१॥
रविजा तट वंशीवटा तहाँ मनहि लगाऊँ ।
बगरयौ जहाँ जुगल धना तहाँ चित बिरमाऊँ २

प्रेम देव प्रभुता जहाँ ताको परचाऊँ ।
संपति महल जु माहिली देखन अकुलाऊँ ॥३॥
स्वामिनि परम प्रसाद तें हिय चौंप बढ़ाऊँ ।
मिथुन सुरति अंबुद झरै चातृक व्रत ध्याऊँ ॥४॥
कुञ्ज भवन राधारवन विहरत जिहिं ठाऊँ ।
अली रली जा रंग में तहाँ दृग अरुझाऊँ ॥५॥
हित सजनी रुख ले चलौं नेरी जब आऊँ ।
वृन्दावन हित रूप रस पीवत न अघाऊँ ॥६॥

कानन नित्य बिहार की लोकनि धुज फरकी ।
अहा अहा सब ही कहे परै बात न तरकी ॥१॥
श्री राधा विपुल सुहाग लखि सारत मति सरकी ।
थाह न पावति बापुरी बन रस जु गहर की ॥२॥
कमला हू वांछित सदा संपति रस भर की ।
पसु पति सौं बूझति उमा बैभव या घर की ॥३॥
कहत गोप्य तें गोप्य अति रति जहाँ संकर की ।
जुगल प्रेम की भावना जिनके उर अरकी ॥४॥
स्वामिनि कृपा जु अति बली हित ओर सु ढरकी ।
कलि जलधर झरी रस गिरा श्रीव्यास कुंवरि की ॥५॥
नीरस अभिमानीनु की सुनि छाती दरकी ।
कीनी भरनि सुदृष्टि रस रसिकनि हिय सरकी ॥६॥
सुमति करत परसंश हित दत सर्वोपर की ।
वृन्दावन हितरूपिनी अलि राधावर की ॥७॥२

चलि मनुँवा वा देसरा रविजा तट वन है ।
विधि परलै ले जो बचै चेतन्न सतन है ।१।

पहुँचन कौं मुनि लै जु इक अनन्य दृढ़ पन है।
नैन खोलि हिय गुरु कृपा सूझन अंजन है ॥२॥
कीमति करिहैं रसिक जन बन महा रतन है।
उनही कें बिसराम रहि यह मोटौ धन है ॥३॥
हिय दृग नेह बटोरि कर सोहनी करि मन है।
सुमति संचि दंपति धनां दरिद्र नांसन हैं ॥४॥
सरन परे कौं नहि तजै राधा जु भवन है।
दर्पन लै कहा देखिये अस कर कंकन है ॥५॥
जौ तू चातक ब्रत धरै बन करुना घन है।
वृन्दावन हित रूप वपु लेहि प्रनत सरन है ॥६॥२६।

* राग सारंग *

मन सकहि तौ वसि रविजा तटी।
जिहि बन श्रीराधा सुहाग महिमा वरनत विधि वय घटी ॥१॥
सिव पुनि सेश सारदा नारद इनहूँ पै न परति डटी।
निगम अगोचर कानन वैभव रमा स्रवनहू उर जटी ॥२॥
परम अलौकिक देखि लोकवत इहि कौतिक कवि मति लटी।
है भुव पर हरि धाम मुकुट मणि यह अचिरज गति अटपटी ॥३॥
चारयौ विधि की सृष्टि जासु वन दिव्य प्रेम विधि परगटी।
पोषै सबै सुदृष्टि स्वामिनी कृपा अमित जिन तन बटी ॥४॥
कोकिल कूक मराल मोर सुक सबहिनु यह लागी रटी।
राधा सुजस गान बन पूरित मोहन सुनत न रुचि हटी ॥५॥
नाना द्रुम सोभा कौ संघट ललित लता गृह छबि छटी।
अमृत पान अस्नान तरनिजा जुगल अंग सौरभ अटी ६

कनक बेलि त्रैसंधि मंजरी स्याम सुभग पिक रस चटी
वृन्दावन हित रूप मिथुन मिलि करत सुरति आरंभटी ॥७॥

मन श्रीवृन्दावन बास करि ।

निस दिन कृपा मनाइ स्वामिनी ज्यों कारज आवै सुधरि ॥१॥
जिहिं बन श्रीराधा रजधानीं अनुचर ह्वै विहरत सुहरि ।
असन वसन परिचर्जा तत्पर ऐसैं दुलरावति कुंवरि ॥२॥
जहाँ रसिक साधुनि कौ संघट अचिरज रस के गहर परि ।
मिथुन किशोर कथा सुख पूरित नहिं त्रिभुवन सुख जास सरि ॥३॥
जनम लाभ चाहै जो नर तन तौ बंशीवट तीर परि ।
वृन्दावन हित रूप धाम पर समझि कुञ्ज गहि पुनि न टरि ॥४॥३

* पद *

वृन्दावन इहि विधि सौं बसौं ।

जथा लाभ संतोष अदूषित राधा जस रसना रसौं ॥१॥
लीला ललित निकुञ्ज केलि सर हिय की हिलगनि सौं धसौं ।
गौर स्याम अंबुज मकरन्दहिं कलहंसी ह्वै कैं गसौं ॥२॥
श्रीहरिवंश कृपा प्रसाद लहि भजन मानसिक उर लसौं ।
अति कमनीं कांनन गुन गाथा सुनत आन सब रुचि नसौं ॥३॥
मन गयन्द बन संपति दंपति सुरति पङ्क चहलै फसौं ।
वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि ब्रत अनन्य तें जिनि खसौं ॥४॥२

जब वृंदावन रज पाइयें ।

सुर नर नाग बिरञ्चि लोक पुनि हरि-पुर हू बिसराइयें ॥१॥
भरतखण्ड पर-दच्छिनां करि गनि गनि तीरथ न्हाईये ।
नहिं सम तूल तरनिजा दरसन कहाँ लगि सुजस सुनाईये २

कनक बसन गज भूमि गऊ जौ कोटिनु दान कराईये ।
पूजत नाहिं बिपिन रज कन कौं जब लै सीस चढाईये ॥३॥
कीजै कहा महातम तुस लै स्वर्ग सुखनि तैं धाईये ।
जिहिं फल जग प्रवाह में पुनि पुनि सुरपति रङ्क कहाईये ॥४॥
रस की रासि रसिक राधा पति श्री गुरु भेद लखाईये ।
अचल अखंडित कानन यह सुख-मिलि सतसंगति गाईये॥५॥
ज्यौं कोउ अमीं स्वाद ह्वै पूरन क्यौं खारौ जल भाईये ।
वृन्दावन हित रूप धाम रस यौं लहिं सबहि बिहाईये ॥६॥

* राग सारंग *

वृन्दावन हरि मन हरन हैं ।
अमी अमित गुन तैं पर जमुना त्रिभुवनमंगल करन हैं ॥१॥
द्रुम सैंनी परसति कालिंदी बहु विधि सोभा धरन हैं ।
बेली ललित बलित तिन कंठनि पत्र फूल बहु बरन हैं ॥२॥
जिन पर अति संकुलित निकर खग मधु रव ते उच्चरन हैं ।
पूरन प्रेम नवल रस पोषे राधा जस बिस्तरन हैं ॥३॥
मधुकर नाद स्वाद सौरभ सौं सब सुख आनंद भरन हैं ।
तैसोई सीतल सुगंध मन्द गति मारुत रुचि लै ढरन हैं ॥४॥
तैसोई पहुप पराग सकल बन सोभित झरि झरि परन हैं ।
तैसीयै परिमल झपट झकोरनि द्रुम मद सीकर झरन हैं ॥५॥
तैसोई माधविका गृह सोभित झलकति मणिमय धरन हैं ।
वृन्दावन हित राधा कानन निगमनि गति दुस्तरन हैं ॥६॥

बनबसि ऐस्वर्ज बिहाइकैं ।
रस मूरति सुहाग बनितनि मणि राधा कृपा मनाइकैं १

मोहन हूँ जाकी सुदृष्टि नित जाचत लाड़ लड़ाइकैं।
सो कृपाल अपनैं गृह आये लैंहि तोहि अपनाइ कैं ॥२॥
जिहिं रस नेह रसिक सब पोषे वैभव विपिन दिखाइ कैं।
तिन अनुराग जे कानन सेवत मिलत निमान बजाइ कैं ॥३॥
तजि पित मात भ्रात सुत दारा बन हित प्रीति बढ़ाइ कैं।
गहरु न करि तन ओस नीर ज्यौं छिन में जाइ बिलाइ कैं॥४॥
अति दुर्लभ वृन्दावन मैया गिर न परम पद पाइ कैं।
तजति न दया पराइन स्वामिनि द्वार परयौ जो आइ कैं ॥५॥
सुर्लभ भ्राजमान भुव तल पर हरिपुर मुकुट कहाइ कैं।
वृन्दावन हित रूप धाम जन करुना सहज सुभाइ कैं ॥६॥२

मन सुधि करि ऐसे ठौर की।
जहाँ खेलत श्रीस्याम सुभग तन कंठ भुजा तन गोर की ॥१॥
ललित तमाल लता मृदु कञ्चन लपटनि प्रेम मरोर की।
गुरु प्रसाद रसिकनि संग मिलि कैं देखौं नहि गम और की॥२॥
अतिसै रम्य सकल बन कुसुमित सौरभ अलि कुल दौर की।
वृन्दावन हित कुञ्ज कुटीरैं केलि रसिक सिरमौर की ॥३॥३१

वृन्दावन बसिवौ भावही।
राधा दूलह की रस चरचा अरचा भलैं बनि आवही ॥१॥
बिनु श्रम जतन जहाँ सब साधन महिमा भक्ति लखावही।
नित उठि श्रीजमुनाजल मज्जन जाकौं बिधि पछितावहीं ॥२॥
श्रीराधा सुदृष्टि करि सींचैं तिनकौं विपिन बसावहीं।
जिनकौं दरस परस अति दुर्लभ मोसौं मलिन मति पावहीं ॥३॥
नेति नेति कहि निगम रहे चुप कमला नाथ बतावहीं।
ऐसी गूढ़ कुञ्ज रस लीला ताहि प्रगट दरसावहीं ॥४॥

बलि बलि जाऊँ मोहि करुनानिधि बन पति जो अपना वही ।
वृन्दावन हित रूप वास रुचि रंचक उर उपजावही ॥५॥३७

मेरे मन वृन्दावन सरन रहि ।
प्रेम सहित विहरत बन बाथुन रसना राधा नाम कहि ॥१॥
आधि व्याधि मन देह जनित जे चेति मनुष्य तन सबै महि ।
बिषै महा बिष धार कुसंगति होहि धीर मति अब न बहि ॥२॥
कटि कोपीन मृदंग करुवा मचलि कुञ्ज कौ कौन गहि ।
रसमय मिथुन किशोर कथा रति गुरु प्रसाद यह लाभ लहि ॥३॥
वैभव सहज विलसि इहिं कानन गौर स्याम रस केलि चहि ।
वृन्दावन हित रूप धाम बलि जामैं बसि नित नित उमहि ॥४॥३८

बनबास लड़ैती दीजियै ।
तुम प्रसाद दुर्लभ नहिं स्वामिनि यहै अनुग्रह कीजियै ॥१॥
हित सरनागत जानि मानि यह विनती कर गहि लीजियै ।
वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि मिथुन हिलग सुख जीजियै ॥२॥३६

धनि धनि बामी वृन्दाटवी ।
राधा रसिक जहाँ रस लीला प्रेम सहित सबहिनु फबी ॥१॥
जाकौ विपुल प्रताप न जानत जिन मति अघ पाहन दवी ।
वृन्दावन हित ताहि प्रसंशत सुक उद्धव सिव विधि कवी ॥२॥४०

यह विपिन धाम आनंद कौ ।
ताहि बिहाइ बिषै सुख आतुर गर डारत दुख फंद कौ ॥१॥
चेततु नाहिं दई हत पायौ नर तन भजन सुछन्द कौ ।
जिहिं बन श्री वृषभान सुता रस प्रापति श्री नँदनन्दन कौ ॥२॥
ऐसौ गुन गुरुवौ सुख छाँड़त देखि भूलि मति मन्द कौ ।
वृन्दावन हित रूप जहाँ द्रुम बेलि पोष जुग चन्द कौ ३ ४१

वृन्दावन सेवौ विधि भली।
जहाँ रसिक साधुन कौ दरसन चलत फिरत कुञ्जनि गली ॥१॥
उत्तम व्रत्ति मधुकरी भिक्षा बैठि पाइ पुलिन स्थली।
सीतल जल जमुना कौ अचवन जुगल अंग सौरभ रली ॥२॥
जिहिं प्रसाद उज्वल उर दरसै प्रेम भक्ति भावनि फली।
सघन द्रुमनि की छाँह रहौ परि त्रिविधि पवन आवै चली ॥३॥
जहाँ रसिक विहरत नँदनन्दन रजधानी कीरति लली।
वृन्दावन हित तलप रचित सुख निरखत हित रूपा अली ॥४॥४२

यह रसमय राधा धाम है।
मोहन कौ मन हूँ अति मोहत श्रीवृन्दावन नाम है ॥१॥
कुञ्ज कुञ्ज बीथिनु बिहार सुख पूरित अति अभिराम है।
निस दिन मगन रहत पिय प्यारी कित बीतत छिन जाम है ॥२॥
कामधेंन चिंतामणि सुर तरु विपिन सकल गुन ग्राम है।
वृन्दावन हित रूप जाँऊ बलि पोषत स्यामा स्याम है ॥३॥४३

बन केलि अगम निगम दूरी।
परसत क्यौंव कुटिल रति कामी जिन उर विषय विषम जुरी ॥१॥
सिव विधि सुक उद्धव परसंशी रञ्चक तिन मन में ढुरी।
बिलमंगल जयदेव बखानी विविधि काव्य मति चातुरी ॥२॥
निरवधि रूप गुननि सुख सीमा श्री राधा रस माधुरी।
परम प्रसाद गूढ़ गति स्वामिनि श्री हरिवंश हियें फुरी ॥३॥
हरिपुर सिवा कृपा हित भूतल बन महिमा आनन्द घुरी।
वृन्दावन हित व्याससुवन दरस्यौ विहार विपिनेसुरी ॥४॥४४

वैभव निहार बन भूप कौ।
जहाँ तहाँ प्रतिबिम्ब बिराजत राधा मोहन रूप कौ १

छाया सघन लता द्रुम सीतल परसु न रञ्चक धूप कौ ।
वृन्दावन हित कौतिक सींवा राधारवन अनूप कौ ॥२॥४

वृन्दावन सब लोकनि मनी ।
जाकी रस महिमा विभूति कन जाति नहीं विधि पै भनी ॥१॥
कोटिन जूथ ललित ललितादिक रास रचन मंडल बनी ।
उभै किशोर जोति द्वै रस की निर्त्त गान कौतिक ठनी ॥२॥
जब हरि अधर धरी वह मुरली अमी अमित रस वरषनी ।
सिव विधि व्योम अवनि सब थिरचर पातालै मोह्यौ फनी ॥३॥
जमुना पुलिन रमत ब्रजमोहन नागरि संग सोभा घनी ।
जो रज श्रीराधा पद अंकित निरखि प्रेम पूरित धनी ॥४॥
कंदर्प कोटि विमोहन लीला वन बानिक परति न गनी ।
वृन्दावन हित अखिल भुवन करी कानन कीरति आपनी ॥५॥४

जिन वृन्दावन सरनी गही ।
हरि ताकी सब पूरी पारी अपनायौ स्वामिनि सही ॥१॥
जो रज शिव ब्रह्मादिक दुर्लभ सो जु कृपा सुलभ लही ।
मज्जन पान कलिन्दनन्दनी जुगल रहसि रसना कही ॥२॥
धनि धनि भयौ जगत यह जीवत अनन्त अमित निधि दृग चही ।
वृन्दावन हित रूप दुहुँ विधि जीत्यौ को घटती रही ॥३॥४

अब मन वृन्दावन बेगि चल ।
राधा कृष्ण नाम नित कहि सुनि सकल धर्म सिरमौर कलि ॥१॥
जहाँ विपुल परताप स्वामिनी बदन कमल भये स्याम अलि ।
ताकी सरनि गहौ मन क्रम वच वृन्दावन हित रूप बलि ॥२॥४

वन्दौं श्रीराधा कौ श्री वृन्दावन ।
जामें विविधि भाँति के कौतिक खेलत खेल धनी धन १

भरे रंग रस के जहाँ सरवर स्याम गौर जुग हंस मगन मन।
बृन्दावन हित रूप परावधि दुलरावति सहचरि जन ॥२॥४९

मन बृन्दावन मारग गहि रे।
जहाँ राधा हरि की रजधानी निर्भय तहाँ बाहुबल रहि रे ॥१॥
अचिरज रूप कुञ्ज थल बरषत गौर स्याम मुख रुख लै चहि रे।
बृंदावन हित नाम अमृत मय राधा कृष्ण अदूषित कहि रे ॥२॥५०

* राग गौरी *

सर्वोपरि बृन्दावन रसु है।
रसिक अनन्य पाइ बल गाजत या रस हीन अन्ध मनु पसु है ॥
सिव बिरंचि नारद सुक बरन्यौं श्रीमुख हू गायो वन रसु है।
बृन्दावन हित रूप व्यास सुत सुमति सच्यौ सोई सर्वसु है ॥२॥५१

* कान्हरौ *

कृपा देस सर्वोपर सुनियतु मन बृन्दावन मारग लगि रे।
गौर स्याम अम्बुद सुख बरषत रीझि भीजि चित चोंपनि खगि रे ॥
लोचन खोलि बिबेक दृष्टि के काल ज्वाल प्रगट्यौ लखि भगि रे।
बृन्दावन हित रूप बाग रमि निस रस अज्ञान नींद तें जगि रे ॥५२

धनि धनि बृंदावन रज धानी।
अखिल लोक थानैंत जहाँ के नृपति स्याम श्रीराधारानी ॥१॥
जाकी लीला परम अलौकिक पहुँचत नाहिं निगम हू बानी।
कुञ्ज केलि, सखियनि कौ सर्वसु क्यों परसत तप मद अभिमानी ॥२॥
सिव विधि सेष पवारं गावत सुनि सुनि कें कमला ललचानी।
ता हित चरन पलोटति निस दिन इहिं सुख लेश न उनहूँ जानी ॥३॥
प्रभुता मधुर ईश लखि भूलत अद्भुत महिमा परै न बखानी।
करि अलि भाव सेइ दंपति पद बृन्दावन हित रूप निसानी ॥४॥५३

* करखा राग मारू *

बंदि राधिका लाल कौ भवन रूरौ ।
कृपा मनु गगन ससि उदित पूरौ ॥टे०॥
परम सीतल जु सोभा किरनि जगमगैं,
अमी के कन जु निस द्यौस बरषैं ।
भये चकोरी जुगल अधिक आसक्त,
मन रंक थाती मिलै यौं जु हरषैं ॥१॥
रहत कुसुमित मनौं पूरि रही चाँदनी,
सदा निर्मल जु घटती न परही ।
वह कला छीन यह कला सरसतु रहै,
दृष्टि के परत जन ताप हरही ॥२॥
वह कलंक जु धरैं यह रहित औगुननि,
वह उदै अस्त होइ सबहि जानैं ।
एक रस रहैं यह धाम उदित निरखि,
विपुल प्रभुता जु किहिं विधि बखानैं ॥३॥
वह जु उड़गन सभा बैठि लागतु भलौ,
यह जु बातैं अधिक ओप कीयें ।
मिथुन जुत इंदु वदनीं अमित सहचरी,
मनहु ससि बृन्द अंकनि जु लीयें ॥४॥
वह जु हरुवौ उचकि गयौ आकास में,
यह जु गुरुवौ रह्यौं अवनि मांही ।
वह जु उड़राज महाराज यह धाम मणि,
कहा कहौं लोक उपमा जु नाहीं ५

वह छई रोग करि छीन पुनि दीन भयौ,
यह सकल विस्व कौ रोग हरता।
वह जु हरि चरन रज कौं जु तरसैं सदा,
यह जुगल चरन नित सीस धरता ॥६॥

वह जु पारस दिपै कबहुँ नभ बैठि कैं,
बदरिया अलप छाया जु परसैं।
यह जु सोभित सदा रहै पारस अचल,
तरनिजा वारि चहुं ओर दरसै ॥७॥

वह दुरावै देखि जलधर भये,
यह जु प्रफुलित बदन सदा सोहै।
वृन्दावन हित रूप धन्य वृन्दाटवी,
गौर अरु स्याम रस धाम जो है ॥८॥५८

* राग कान्हरौ *

वंदौ कानन तरु सुख दाइक।
हुतौ अचेत सचेत कियौ मुहि प्रभु समान प्रभुता सब लाइक ॥१॥
धन्य चैतन्य रूप जन प्रनितनि भाँति भाँति करि सदा सहाइक।
ललित कदंब कूल सरवर कें नित नव सोभा दृग दरसाइक ॥२॥
इन सनमुख ही होत विघन सब ना जानौं किहिं ओर पलाइक।
हेत भीतरे सदा डहडहे हरे हरे हरि चित्त चुराइक ॥३॥
प्रभु आज्ञा दीनी सो कीनी हौं लघु मति कहा भेदहि पाइक।
नाम दास वृन्दावन मेरौ सत्य कियौ अपु टहल चिताइक ॥४॥
इनकी महिमा धामी जानैं कहा जाने चर्म दृष्टि जु गाइक।
जिन तर लग्यौ रहतु आनंद मर जुगल केलि रस ये सरसाइक ॥५

पर हित करता इन सम को है जुगल सुदृष्टि पलै जु सुभाइक।
इच्छा बली स्वन गौरङ्गी वरवस तरु सेवा जु कराइक ॥६॥
कृपा सरूप दीन जन पोषक वरदातनि में ये बड़ नाइक।
गुरुजन महत मानि दियौ इनकौं ये रीझै अपु निकट वसाइक ॥७॥
अपु दिस लेत लगाइ सनेहिनु निगम सार सुख ये जु दिखाइक।
रे रे मनां सरनि लैवेगो परम प्रेम निधि तोहि भिजाइक ॥८॥
रसिकानन्द कुंवरि सर्वेस्वरि इनहिं प्रसंशत मन वच काइक।
वृन्दावन हित रूप अहा कहा विधि रचना नहिं ये जु अमाइक ॥९॥

* राग पूर्वी चौतालौ *

फूले फूले फिरत सरोवरि के तट,
राधा जू प्रीतम कदंव बिहारी।
रागति कोकिल कूजति हंसिनि कुहुकति,
मोरी ये देखौ आछैं नीके निर्त्तत प्यारी ॥
तरु सैंनी नैंननि सुख दैनी,
पल्लव अरुन चली बढ़ि डारी।
वृन्दावन हित रूप बिहारिनि,
आगैं आगैं चलियै नई नई दरसै सोभा भारी॥५६॥

* राग धनाश्री *

लगति प्यारी वृन्दावन की धरनी
देवनि दुर्लभ रसिकनि सुलभ सकल मनोरथ भरनी ॥१॥
झुकि रहे अंब कदंब कल्पतरु हरित बेलि मन हरनी।
दरस परस पावन मन भावन रविजा लहरिनु ढ़रनी ॥२॥
जा तट बिहरत राधा मोहन सोभा जाति न बरनी।
बरसति कृपा रसिकिनी नागरि केलि कला बिस्तरनी ३

मोरी पिकी सारिका मैंना राधा जस उच्चरनी।
गौर स्याम सुनि सुनि आनन्दित कृपा दृष्टि नित करनी ॥४॥
दीननि देति निवास जहाँ पट पीत धरन की घरनी।
वृन्दावन हित रूप स्वामिनी प्रीतम सुख अनुसरनी ॥५॥

* राग गौरी *

धनि रसना जो कहै विपिन जस।
सुमति उदार साधु सोई गनियै जिन परिहरे कुमति खल नीरस ॥१॥
कुञ्जनि की माधुरी बिलोकैं उरझि गयौ मन बली जु बरबस।
देह धरे को तिन फल पायौ रहे खिसाइ करत जे उपहास ॥२॥
जोग जग्य तीरथ ब्रत संजम जप तप समझि बिहायौ बाकस।
रास बिलास राधिका वल्लभ भीज्यौ हिय दृढ़ भाव महा रस ॥३॥
मिथ्या सूझ्यौ सकल पसारौ यह तन गनि महमान दिना दस।
वृन्दावन हित रूप सार गह्यौ गौर स्याम अनुभव प्रकास लस ॥४॥

जब कानन-अधिपत्ति अपनैं है।
तब तू मचलि परैगो द्वारें अति हित मानि अंक भरि लैहै ॥१॥
दरसावै लीला जु कुञ्ज की आपु रीझि तोकों जु रिझैहै।
सब तैं उच्च परम पद पावै सब तैं गरुवौ सो सुख दैहै ॥२॥
मना रिझाइ धनी कौ बन बसि सबै मनोरथ वांछित पैहै।
जानहु प्रीति माहिली प्रीतम तेरौ कृत बिरथा नहिं जैहै ॥३॥
दाता बड़ौ राधिकावल्लभ भाँति भाँति प्रनि तनि अघवैहै।
वृन्दावन हित रूप निकर रस हीये की रसना अचवैहै ॥४॥५६

कानन ससि चकोर ह्वै रहि रे।
यह सागर मन मीन राखि तू थिरकि २ सुख अमित जु लहि रे ॥१॥

करि सुर्लभ पायौ निपट अगह फल गाढौ गहि रे।
कृपा कल्पतरु आस पुजै है बार बार सरनागत चहि रे ॥२॥
देह धर्म दिस जिनि होइ आतुर दुखसुख आवै सबही सहि रे।
वृन्दावन हित रूप राधिक वल्लभ रस जस भजन उमहि रे ॥३॥

श्रीराधा वृन्दावन कौ धन।
श्री हरिवंश प्रसाद पाईयै जाकौ रुख लै चलत स्याम घन ॥१॥
रस बानी रसिकनि संगति बिनु लहै न भेद भाव सुख कौ कन।
वृन्दावन हित रूप रसाइनि बिलसैगौ अनन्य चातकपन ॥२॥

मो तन मन कौं गति वृन्दावन।
ताकी है दाइक रासेस्वरि प्रनति मनोरथ भरन विचत्तन ॥१॥
जनम जनम की भूख मिटैगी करि सुदृष्टि चूड़ामणि अलिगन।
वृन्दावन हित दास नामकौ नातौ मानि लरजि रंचक मन ॥२॥

कानन श्रीराधा कौ घर है।
ताकी दैहु सोहनी स्वामिनि यहै चाह मो उर अंतर है ॥१॥
बरुनिन सौं मग करौं ऊजरौ सदा बिराजै पुतरी कर है।
तहाँ धरौ पग जुगल अंस भुज ललित लतनि उरझत अंबर है ॥२॥
हौं सुरझाव लगौं जब नाचत नागरि निरख हँसति हर हर है।
वृन्दावन हित रूप बिलोकत बदली दसा प्रेम भयौ भर है ॥३॥

राधा कानन सरन मना परि।
ढरी जात है आयु राति दिन रसना प्रेम सहित कहि हरि हरि ॥१॥
गहि रहि मीत रविसुता कौ तट अपनावैगी कुंवरि कृपा करि।
श्री हरिवंश प्रसाद स्वामिनी देहैं उर आनंद विपुल भरि ॥२॥
निरदूषित करि बास रसिक जन सदा संग रमि दृढ़ व्रत यह धरि।
वृन्दावन हित रूप चितवत कुञ्जनि विचरि प्रेम सौं उर भरि ३

जा सिर वृन्दारन्य धनी है।
खरची मिली जुगल धन गरुवौ सब विधि भली बनी है ॥१॥
अंक राखि कैं सुबिधि पालि हैं पुनि पुजवै अभिलाष घनी है।
मूरति कृपा धरैं नवनी पर लोकनि मुकट मनी है ॥२॥
गुन ग्राही औगुन न विचारतु सरन जानि अपनी है।
धन्य धाम सब ते पर जहाँ रस की सरिता श्रवनी है ॥३॥
रसिकनि की रस सीर उपजनी याही बन अवनी है।
वृन्दावन हित रूप दयालता क्यों आवत बरनी है ॥४॥६५

वृन्दावन जु मात पिता भैया।
सब नाते याही सौं बनिहैं और न कोऊ धीर धरैया ॥१॥
वृन्दावन ही स्वामी समरथ भाँति भाँति रच्छा जु करैया।
हौं अति कुमति कपूत अहो बिभु तोसो नाहैं सरन पलैया ॥२॥
हौं कायर न खेत रुपि जानौं भीर परैं पाछैं भजवैया।
मेरे औगुन ढाँपन लायक दीसतु और दयाल न दैया ॥३॥
रीझौगे तुम कौन कृत्य करि हौं खोटी ही बात कहैया।
वृन्दावन हित रूप बाँह दै मोहि अभय करि बास बसैया ॥४॥६६

रसिकनि कैं कानन कुल इष्ट।
जामें गौर श्याम रस लीला छिन छिन बाढ़ति रहत गरिष्ट ॥१॥
नित नव मंगल हंस सुता तट उर बर सरसतु प्रेम बलिष्ट।
रुचि सौं सेवत सुमति प्रकासी केलि बिलोकत हिय की दृष्टि ॥२॥
ललित लता मंदिर रस बैभव नित सुख बिलसत आनँद वृष्टि।
नित नित पलत प्रान महलिनु के पावत सादर जुगल उच्छिष्ट ॥३॥
अपनाये राधा मुरलीधर उरझयौ जु महा रस मिष्ट।
वृन्दावन हित रूप छके नित वे नहिं अनमैं पुनि विधि सष्टि ४ ६७

* राग भैरी ताल चरचरी *

महत महिमा भरयौ राधिका रति सदन ।

छवि सु आश्चर्ज बदलतु रहै छिनहि छिन,
  सेप विधि सारदा बरनि बाँधी हद न ॥१॥
रस उदधि सुख उदधि विपुल सोभा उदधि,
  बहुरि कौतिक उदधि क्यों कहौं इहिं बदन ।
सुगम पुनि अगम भुव पर सबनि मुकुट मणि,
  दैंन सम चहत कवि करी उपमा रदन ॥२॥
रूप मद हरन कर धरन मुरली अजित,
  तासु मन हरन जा चरन नूपुर नदग ।
वृन्दावन हित रूप जयति नव नागरी,
  धाम अभिराम सेवत निकर वपु मदन ॥३॥६८

लोक में रस अवधि कौन असि धाम हैं ।

राधिका लाल कौ रस चरित कोष यह,
  रसिक जन मननि कौं दैंन विश्राम है ॥१॥
अवनि तरुवर लता निकर पंछी जहाँ,
  सबै मन गहन कौं परम अभिराम है ।
जासु रस कथा करे मुनिनु मन बावरे,
  निरखि छवि कामना बढ़ति उर काम है ॥२॥
निराहारी जना प्रभु जु गुन रूप के,
  रुचि बढ़ावन विपिन बिहारिनि नाम है ।
वृन्दावन हित रूप वन्दि रविजा तटी,
  उदधि आनन्द वहै जहाँ अष्ट जाम हैं ३ ६६

* पद *

जयति वृन्दाटवी रसिक आनँद भरन ।
लोक सब महामणि दिपतु हैं अवनि पर,
गौर अरु स्याम दृग परम सीतल करन ॥१
द्रुमनि सीकर श्रवित अमी हूँ ते अधिक,
जाति बहु लता फल फूल सोभा धरन ।
छबि निकर ललित बीथिनु लखि नित नये,
सहित सेना बली मदन कौ मन हरन ॥२॥
तात तू मात तू मित्र आरज तुही दई पुनि,
दयाल राखौ जु मोकौं सरन ।
अङ्क धनि जुगल दुलरावनौ भाव भरि,
अहा कानन कृपा प्रनत जन बिस्तरन ॥३॥
आपनौं वित सुविधि रङ्क ओली भरन,
कौनु करुना कुशल दीन ओरी ढरन ।
वृन्दावन हित रूप और कहा बरनियै,
जास की रैन में कहत मंगल मरन ॥४॥९

* राग रामकली तालमूल *

कानन की प्यारी अति अवनी,
जुगल किशोर केलि जहाँ कमनी ।
लखि रति मदन अलौकिक भुव पर,
बिलसत है जहाँ रसिक सिरमनी ॥१॥
तरु बेली सोभा वपु मानौं खग,
नाना बिधि अति अनुरागी

ठौर ठौर गावत पुनि निर्त्तत,
जिन रसना राधा रट लागी ॥२॥
फल फूलनि करि आवृत बीथी गन्ध,
अन्ध जहाँ मधुकर सैना ।
सरसिनु दपट लपट सौरभ की,
मारुत मिथुन बढ़ावतु मैना ॥३॥
पावन पुलिन पराग सुमंडित,
हरषि हरषि राखत पद दंपति ।
पहिरयौ धरा हरा मनु हीयें,
सचि सचि धरति भाग फल संपति ॥४॥
करति प्रशंस आपु मुख नागरि,
पुनि परसंशत स्याम धनी है ।
नाना रतन खचे कञ्चन मधि तन,
दुति मिल छबि बढ़ति घनी है ॥५॥
या बन के सुख भोगी दोऊ,
गौर स्याम रस लेत लहा हैं ।
डग भरि जात न बाहिर कबहूँ,
परम कौतिकी छके महा हैं ॥६॥
बन बैभव जु बिलोकत बिथकित,
संध्या भोर भयौ नहिं जानैं ।
वृन्दावन हित रूप धाम. यह धामी,
हू हिय हिलग बिकानैं ७ ७१

* राग भैरो, झपताल *

कानन सौ प्रीति साधि कानन ही कौं अराधि,
कानन सौं को दयाल समझि सरनि लै रे।
कानन प्रतिपाल करै कानन ही अङ्क भरै,
कानन कौं मना मीत अब न पीठि दै रे ॥१

कानन के रंग राचि कानन सों यही जाँचि,
कानन में जो रस अलि भाव करि अचै रे।
कानन में देह गारि कानन धन कौं सम्हारि,
कानन ते पावैगौ सबै सुख अघै रे ॥२

कानन सब लोक मनी कानन सिर राखि धनी,
कानन कौं होइ भृत्य डारि दूरि मै रे।
कानन जे रसिक जना तिन सौं करि नेह घना,
धरि अनन्य टेक पना जनम जीति है रे ॥३।

जूवा जिनि विषै हारि लाभु हानि जिय विचारि,
बारी बिष त्यागि सम्हरि अमी सीर वै रे।
कानन जिनके सुइष्ट तिनके सुनि वचन मिष्ट,
लीला बन की गरिष्ट गाइ हिय सिरै रे ॥४॥

समरथ अति लगतु मोहि अंगीकृत करै तोहि,
मन क्रम वच दीन होइ बिपिन में रहै रे।
अङ्क धरैं लाड़तु है थाती जो निगम गूढ़,
अरे मूढ़ लै रिझाइ आयु जिनि रितै रे ॥५॥

बेगि जागि पंथ लागि अपनौ गनि धन्य भागि,
मानसर बिहार सुमति हंसिनी गिधै रे

बलि बलि बृन्दावन हित रूप राधिका सुधाम,
ताकी परि पौरि मचलि अलभि लाभ पें रे ॥६॥

* राग पूरबी, भैरौ *

खोइ न वृथा मनुष तन दुर्ल्लभ,
परि रहि मन कुञ्जनि तरु तर रे।
सादर जाँचि राधिकावल्लभ दीन दुख,
दवन सब अभिलाष भरन बड़ घर रे ॥
प्रीति पारखू पुनि मिठबोला,
अपनावै माथे धरि कर रे।
वृन्दावन हितरूप समझि बनराज सरन गहि,
कहि राधा हरि तजि सब डर रे ॥७३॥

* भैरौ, तालमूल *

कानन मो गति कानन मो पति, कानन जननी जनक सु भैया।
कानन बास करौ नित निर्भय, यह मन होहि न अनत चलैया ॥
कानन की संपति दृग दरसौ कानन ही सुख होहु दिवैया।
वृन्दावन हित रूप राधिकाबल्लभ पद रति सुविध करैया ॥७४

* भैरौ, झपताल *

वृन्दावन दुर्ल्लभ अति निगम कहत रे।
करत रहत हाइ हाइ बीती सब जाति आयु,
अति अमोल रतन मूढ़ करन गहत रे ॥१॥
सूर सुता तट पुनीत, बसिरे तहाँ मना मीत,
गौर स्याम केलि ललित क्यौं न चहत रे।
काहे दुख सहतु भीर त्रिषित महा परयौ तीर,
पीवौ किन धापि सुधा सिंधु बहत रे २

साधि धर्म रति अनन्य, गुरु प्रसाद होहु धन्य.
कुञ्ज कौ उपास सुविधि क्यों न लहत रे।
जहाँ नृपति प्रेम राज, रसिक रसिकिनी समाज,
अभिमानी मदन निरखि थकित रहत रे ॥३।
जुगल चरन करत नेह, ह्वैहै रे दिव्य देह,
परालब्ध भोग प्रभु सुदृष्टि दहत रे।
बलि बलि वृन्दावन हित रूप व्याम सुत,
कृपालु दिय चिताइ ताहि छाँड़ि सूल महत रे ॥४।
दोहा–महिमा वृन्दारन्य की, पार न पायौ सेष।
विधि ऐस्वर्ज विचार तें, लह्यौ न ताकौ लेस ॥१॥
बरनत हारी सारदा, नारद पुनि व्यासादि।
क्रीड़त बल्लभ राधिका, सुखमय धाम अनादि ॥२॥
सब तें पर रसमय जु वपु, परम मनोहर वेस।
गौर स्याम सुख भोगता, मन मन जपत महेस ॥३॥
जस प्रकास वृन्दाविपिन, पचहत्तरि पद माँहि।
कृपा सुदत्त हितरूप गुरु, मेरो कृत यह नाँहि ॥४॥
ठारह से पचीस यौं, वर्ष जु माधव मास।
सुकल पच्छि एकादसी, पूरन ग्रन्थ प्रकास ॥५॥
सत चित आनन्द रूप है, श्री वृन्दावन धाम।
वृन्दावन हित रूप जहाँ, खेलत स्यामा स्याम ॥

॥ इति श्री वृन्दावन जस प्रकास बेली बन्ध वृन्दावनदास जी कृत सम्पूर्ण

अथ श्री वृन्दावन सत लीला

—प्रथम नाम हरिवंश हित, रटि रसना दिन रैन।
प्रीति रीति तब पाइये, अरु वृन्दावन ऐन ॥
चरन शरन हरिवंश की, जब लगि आयो नाहिं।
नवनिकुञ्ज निज माधुरी, क्यों परसै मन माँहि ॥
वृन्दावन सत करन को, कीन्हों मन उत्साह।
नवल राधिका कृपा विनु, कैसे होत निवाह ॥
यह आशा धरि चित्त में, कहत यथा मति मोर।
वृन्दावन सुख रङ्ग को, काहु न पायो ओर ॥
दुर्लभ दुर्घट सबनि ते, वृन्दाबन निज भौन।
नवल राधिका कृपा बिनु, कहिधों पावै कौन ॥
सबै अङ्ग गुन हीन हौं, ताको यतन न कोइ।
एक किशोरी कृपा तें, जो कछु होइ सो होइ ॥
सोउ कृपा अति सुगम नहिं, ताको कौन उपाव।
चरन शरन हरिवंश की, सहज हि बन्यौ बनाव ॥
हरिवंश चरन उर धरनि धरि, मन बच कै विश्वास।
कुँवरि कृपा ह्वै है तबहि, अरु वृन्दावन बास ॥
प्रिया चरन बल जानि कै, बाढ़यौ हिये हुलास।
तेई उर में आनि है, वृन्दा विपिन प्रकास ॥
कुँवरि किशोरी लाड़िली, करुनानिधि सुकुमारि।
बरनो वृन्दा बिपिन को, तिनके चरन सँभारि ॥
हेममई अवनी सहज, रतन खचित बहु रङ्ग।
चित्रित चित्र विचित्र गति, छबि की उठति तरङ्ग

बृन्दावन झलकनि झमक, फूले नैन निहारि।
रवि शशि दुतिधर जहां लगि, ते सब डारें वारि ॥
बृन्दावन दुतिपत्र की, उपमा को कछु नाहिं।
कोटि २ बैकुन्ठ हू, तेहि सम कहे न जाहिं ॥
लता लता सब कल्पतरु, परिजात सब फूल।
सहज एकरस रहत हैं, झलकत यमुना कूल ॥
कुञ्ज कुञ्ज अति प्रेम सों, कोटि कोटि रति मैन।
दिनहिं सँभारत रहत हैं, श्री बृन्दावन ऐन ॥
विपिनराज राजत दिनहिं, वरषत आनंद पुञ्ज।
लुब्ध सुगन्ध पराग रस, मधुप करत मधु गुञ्ज ॥
अरुन नील सित कमल कुल, रहे फूलि बहुरङ्ग।
बृन्दावन पहिरे मनो, बहु विधि बसन सुरङ्ग ॥
हितसों त्रिविध समीर बहै, जैसी रुचि जिहिकाल।
मधुर मधुर कल कोकिला, कूजत मोर मराल ॥
मण्डित यमुना वारियों, राजत परम रसाल।
अति सुदेस सोभित मनो, नील मनिन की माल ॥
बिपिन धाम आनन्द को, चतुरई चित्रित ताहि।
मदन केलि सम्पति सदा, तेहि करि पूरन आहि ॥
देवी बृन्दा बिपिन की, बृन्दा सखी सरूप।
जेहि विधि रुचि होइ दुहिन की, तेहि विधि करत अनूप ॥
छिन २ बन की छबि नई, नवल जुगल के हेत।
समुझि बात सब जीय की, सखि बृन्दा सुख देत ॥
गावत बृन्दा बिपिन गुन, नवल लाड़िली लाल।
सुखद लता फल फूल द्रुम, अद्भुत परम रसाल

उपमा वृन्दा बिपिन की, कहि धौं दीजै काहि ।
अति अभूत अद्भुत सरस, श्रीमुख बरनत ताहि ॥
आदि अन्त जाको नहीं, नित्य सुखद बन आहि ।
माया त्रिगुन प्रपञ्च की, पवन न परसत ताहि ॥
बृन्दा बिपिन सुहावनों, रहत एक रस नित्त ।
प्रेम सुरङ्ग रंगे तहाँ, एक प्रान द्वै मित्त ॥
अति स्वरूप सुकुमार तन, नव किशोर सुख रास ।
हरत प्रान सब सखिन के, करत मन्द मृदु हास ॥
न्यारो है सब लोक तें, वृन्दावन निज गेह ।
खेलत लाड़िली लाल जहँ, भीजे सरस सनेह ॥
गौर श्याम तन मन रँगे, प्रेम स्वाद रस सार ।
निकसत नहिं तिहि ऐनते, अटके सरस विहार ॥
बन है बाग सुहाग को, राख्यो रस में पागि ।
रूप रंग के फूल दोउ, प्रीति लता रहि लागि ॥
मदन सुधा के रस भरे, फूलि रहे दिन रैन ।
चहुंदिश भ्रमत न तजत छिन, भृङ्ग सखिन के नैन ॥
कानन में रहे झलकि के, आनन विविविधु कांति ।
सहज चकोरी सखिन की, अखियाँ निरखि सिरांति ॥
ऐसे रस में दिन मगन, नहिं जानत निशि भोर ।
वृन्दावन में प्रेम की, नदी बहै चहुं ओर ॥
महिमा वृन्दा बिपिन की, कैसे कै कहि जाय ।
ऐसे रसिक किशोर दोउ, जामें रहे लुभाय ॥
विपिन अलौकिक लोक में, अति अभूत रसकन्द ।
नवकिशोर इक प्रेम द्रुम, फूले रहत सुछंद

पत्र फूल फल लता प्रति, रहत रसिक पिय चाहि।
नवलकुँवरि दृग छटा जल, तिहि कर सींचे आहि॥
कुँवरि चरन अंकित धरनि, देखत जेहि जेहि ठौर।
प्रिया चरन रज जानि कै, लुठत रसिक सिरमौर॥
वृन्दावन प्यारो अधिक, यातें प्रेम अपार।
जामें खेलत लाड़िली, सर्वस प्रान अधार॥
सबै सखी सब सौंज लै, रँगी युगल ध्रुव रंग।
समै समै की जानि रुचि, लिये रहत हैं संग॥
वृन्दावन वैभव जितो, तितो कह्यौ नहिं जात।
देखत संपति विपिन की, कमला हू ललचात॥
वृन्दावन की लता सम, कोटि कल्पतरु नाहिं।
रज की तुल बैकुंठ नहिं, और लोक किहि माहिं॥
श्रीपति श्रीमुख कमल कह्यो, नारद सों समुझाइ।
वृन्दावन रस सबन तें, राख्यो दूरि दुराइ॥
अंश कला औतार जे, ते सेवत हैं ताहि।
ऐसे वृन्दा विपिन को, मन वच कै अवगाहि॥
शिव विधि उद्धव सबनि के, यह आशा है चित्त।
गुल्म लता ह्वै सिर धरैं, वृन्दावन रज नित्त॥
चतुरानन देख्यौ कछू, वृन्दाविपिन प्रभाव।
द्रुम द्रुम प्रति अरु लता प्रति, औरै बन्यो बनाव॥
आप सहित सब चतुर्भुज, सब ठां रह्यौ निहारि।
प्रभुता अपनी भूलि गयो, तन मन कै रह्यो हार॥
लोक चतुर्दश ठकुरई, संपति सकल समेत।
सब तजि बस वृन्दा विपिन, रसकिनि को रसखेत।

सकहितो वृन्दा विपिन बसि, छिन छिन आयु बिहात ।
ऐसो समो न पाइये, भली बनी है घात ॥
छांड़ि स्वाद सुख देह के, और जगत की लाज ।
मनहिं मार तन हारि कै, वृन्दावन में गाज ॥
वृन्दावन के बसत ही, अन्तर जो करै आनि ।
तिहि सम शत्रु न और कोउ, मन बच कै यह जानि ॥
वृन्दावन के बास को, जिनके नाहिं हुलास ।
माता मित्र सुतादि तिय, तजि ध्रुव तिनको पास ॥
और देश के बसत ही, अधिक भजन जो होइ ।
इहि सम नहिं पूजत तऊ, वृन्दावन रहै सोइ ॥
वृन्दावन में जो कबहुँ, भजन कछू नहिं होय ।
रज तो उड़ि लागै तनहि, पीवै यमुना तोय ॥
वृन्दा विपिन प्रभाव सुनि, अपनो ही गुन देत ।
जैसे बालक मलनि को, मात गोद भरि लेत ॥
और ठौर जो यतन करै, होत भजन तउ नाहिं ।
ह्यां (इहां) फिरै स्वारथ आपनें, भजन गहे फिरै बाहिं ॥
और देश के बसत ही, घटत भजन की बात ।
वृन्दावन में स्वारथौ, उलटि भजन ह्वै जात ॥
यद्यपि सब औगुन भरयो, तदपि करत तुव ईठ ।
हित मय वृन्दा विपिन को, कैसे दीजै पीठ ॥
वृन्दावन ते अनत ही, जेतिक श्वांस बिहात ।
ते दिन लेखे जिन लिखो, वृथा अकारथ जात ॥
भजन रसमई विपिन घर, समुझि बसे जो कोइ ।
प्रेम बीज तेहि खेत तें, तब ही अंकुर होइ

यद्यपि धावत विषै कों, भजन गहत चित पानि ।
ऐसे बृन्दा विपिन की, सरन गही ध्रुव आनि ॥
बसिबो बृन्दा विपिन कौ, जिहिं तिहिं विधि दृढ़ होइ ।
नहिं चूकै ऐसो समो, जतन कीजिये सोइ ॥
कहँ तू कहँ बृन्दा विपिन, आनि बन्यौ भल बान ।
यहै बात जिय समुझि कै, अपनो छांडि सयान ॥
छिन भंगुर तन जात है, छांड़िहि विषै अलोल ।
कौड़ी बदले लेहि तू, अद्भुत रतन अमोल ॥
कोटि कोटि हीरा रतन, अरु मनि विविध अनेक ।
मिथ्या लालच छांड़ि कै, गहि बृन्दावन एक ॥
नहिं सो माता पिता नहिं, मित्र पुत्र कोउ नाहिं ।
इनमें जो अन्तर करै, बसत बृन्दावन मांहि ॥
नाते जेते जगत के, ते सब मिथ्या मानि ।
सत्य नित्य आनन्द मय, बृन्दावन पहिंचानि ॥
बसि के बृन्दा विपिन में, ऐसी मन में राख ।
प्रान तजों बन ना तजों, कहौ बात कोउ लाख ॥
चलत फिरत सुनियत यहैं, (श्री) राधावल्लभलाल ।
ऐसे बृन्दा विपिन में, बसत रह्यौ सब काल ॥
बसिवो बृन्दा विपिन को, यह मन में धरि लेहु ।
कीजै ऐसो नेम दृढ़, या रज में परै देह ॥
खण्ड खण्ड ह्वै जाइ तन, अंग अंग सत टूक ।
वृन्दावन नहिं छांड़िये, छांड़िबो है बड़ि चूक ॥
पटतर बृन्दा विपिन की, कहिं धौं दीजै काहि ।
जेहि बन की ध्रुव रेनु में, मरिबो मंगल आहि

वृन्दावन के गुननि सुनि, हित सौं रज में लोट ।
जेहि सुख कौ पूजत नहीं, मुक्ति आदि सत कोट ॥
सुरपति पशुपति प्रजापति, रहे भूलि तेहि ठौर ।
बृन्दावन वैभव कहौ, कौन जानि है और ॥
यद्यपि राजत अवनि पर, सबते ऊँचो आहि ।
ताकी सम कहिये कहा, श्रीपति बंदत ताहि ॥
वृन्दावन वृन्दा विपिन, वृन्दा कानन ऐन ।
छिन छिन रसना रटो कर, वृन्दावन सुख दैन ॥
वृन्दावन आनंद घन, तो तन नश्वर आहि ।
पशु ज्यों खोवत विषै रस, काहि न चिंतत ताहि ॥
बृन्दावन बृन्दा कहत, दुरित वृन्द दुरि जाहिं ।
नेह बेलि रस भजन की, तब उपजै मन माहिं ॥
बृन्दावन श्रवननि सुनहि, बृन्दावन को गान ।
मन वच कै अति हेत सौं, बृन्दावन उर आन ॥
बृन्दावन को नाम रटि, वृन्दावन को देखि ।
बृन्दावन सौं प्रीत करि, बृन्दावन उर लेखि ॥
वृन्दा विपिन प्रनाम करि, बृन्दावन सुख खानि ।
जो चाहत विश्राम ध्रुव, बृन्दावन पहिंचानि ॥
तजि कै बृन्दा विपिन को, और तीर्थ जे जात ।
छांडि विमल चिंतामणी, कौड़ी को ललचात ॥
पाइ रतन चीन्हों नहीं, दीनों कर तें डार ।
यह माया श्रीकृष्ण की, मोह्यो सब संसार ॥
प्रगट जगत में जगमगै, वृन्दा विपिन अनूप ।
नैन अछत दीसत नहीं, यह माया को रूप

वृन्दावन को यश अमल, जिहि पुरान में नाहिं
ताकी बानी परो जिनि, कबहूँ श्रवननि माहिं।
वृन्दावन को यश सुनत, जिनके नाहिं हुलास।
तिनको परस न कीजिये, तजि ध्रुव तिन को पास॥
भुवन चतुर्दश आदि दै, ह्वै है सबको नास।
इक छत वृन्दा विपिन घन, सुख को सहज निवास॥
वृन्दाबन इह विधि बसै, तजि कै सब अभिमान।
तृण ते नीचो आप को, जानै सोई जान॥
कोमल चित सब सों मिलै, कबहुँ कठोर न होइ।
निस्नेही निर्वैरता, ताको शत्रु न कोइ॥
दूजे तीजे जो जुरै, साक पत्र कछु खाय।
ताही सों संतोष करि, रहै अधिक सुख पाय॥
देह स्वाद छुट जाहि सब, कछु होइ छीन शरीर।
प्रेम रङ्ग उर में बढ़ै, बिहरै यमुना तीर॥
युगल रूप की झलक उर, नैन रहे झलकाइ।
ऐसे सुख के रङ्ग में, राखै मनहिं रँगाइ॥
आवै छवि की झलक उर, झलकै नैननि वारि।
चितत स्यामल गौर तन, सकहि न तनहिं सँभारि॥
जीरन पट अति दीन लट, हिये सरस अनुराग।
विवस सघन बन में फिरै, गावत युगल सुहाग॥
रस में देखत फिरै बन, नैननि बन रहै आइ।
कहुँ कहुँ आनँद रंग भरि, परै धरनि थहराइ॥
ऐसी गति ह्वै है कबहुँ, मुख निसरत नहिं बैन।
देखि देखि वृन्दा विपिन, भरि भरि ढारै नैन

वृन्दावन तरु तरु तरे, ढरै नैन सुख नीर।
चिंतत फिरै आवेस बस, सांवल गौर शरीर॥
परम सच्चिदानंद घन, वृन्दा विपिन सुदेश।
जामें कबहूँ होत नहिं, माया काल प्रवेश॥
शारद जो शत कोटि मिलि, कलपन करै विचार।
वृन्दावन सुख रङ्ग को, कबहुँ न पावै पार॥
वृन्दावन आनन्द घन, सब तें उत्तम आहि।
मोते नीच न और कोउ, कैसे पैहों ताहि॥
इत बौना आकाश फल, चाहत है मन माहिं।
ताको एक कृपा विना, और यतन कछु नाहिं॥
कुँवरि किशोरी नाम सों, उपज्यौ दृढ़ विश्वास।
करुनानिधि मृदु चित्त अति, ताते बढ़ी जिय आस॥
जिनको वृन्दा विपिन है, कृपा तिनहि की होइ।
वृन्दावन में तबहिं तो, रहन पाइ है सोइ॥
वृन्दावन सत रतन की, माला गुही बनाइ।
भाल भाग जाके लिखी, सोई पहिरै आइ॥
वृन्दावन सुख रङ्ग की, आशा जो चित होइ।
निशि दिन कंठ धरे रहैं, छिन नहिं टारै सोइ॥
वृन्दावन सत जो कहै, सुनि है नीकी भाँति।
निसदिन तेहि उर जगमगै, वृन्दावन की काँति॥
वृन्दावन को चिंतवन, यहै दीप उर बार।
कोटि जन्म के तम अघहि, काटि करै उजियार॥
बसिकै वृन्दा विपिन में, इतनो बड़ो सयान।
युगल चरण के भजन बिन, निमिष न दीजै जान

सहज विराजत एक रस, वृन्दावन निज धाम।
ललितादिक सखियन सहित, क्रीड़त श्यामाश्याम॥
प्रेम सिंधु वृन्दा विपिन, जाकौ अंत न आदि।
जहाँ किलोलत रहत नित, युगल किशोर अनादि॥
न्यारो चौदह लोक तें, वृन्दावन निज भौन।
तहां न कबहूँ लगत है, महा प्रलय की पौन॥
महिमा वृन्दा विपिन की, कहि न सकत मम जीह।
जाके रसना द्वै सहस, तिनहूं काढ़ी लीह॥
एती मति मोपै कहा, शोभा निधि वनराज।
ढीठौ कै कछु कहत हौं, आवत नहिं जिय लाज॥
मति प्रमान चाहत कह्यौ, सोऊ कहत लजात।
सिन्धु अगम जेहि पार नहि, कैसे सीप समात॥
या मन के अवलंब हित, कीन्हों आहि उपाय।
वृन्दावन रस कहन में, मति कबहूँ उरझाय॥
सोलह से ध्रुव छयासिया, पून्यौ अहगन मास।
यह प्रबन्ध पूरन भयो, सुनत होत अघ नास॥
दोहा वृन्दा विपिन के, इकसत षोड़श आहि।
जो चाहत रस रीति फल, छिन छिन ध्रुव अवगाहि॥

॥ इति श्री वृन्दावनसत को जै जै श्री हितहरिवंश जी ॥

अथ श्रीख्याल हुल्लास लीला

-दोहा ख्याल हुलास मन, कछु इक कीनै आहि ।
प्रेम घटा जेहि उर चढ़ी, सो ध्रुव समुझै ताहि ॥
प्रीति समान न और सुख, दुखहू होत अपार ।
मिलिवो सुख दुख बिछुरिवो, यह कीनो निरधार ॥
बिन देखे तलफत रहै, क्यों पावै चित चैन ।
वदन रूप जल पान को, प्यासे हैं दोउ नैन ॥
अब सुन इक इक घरी तो, कलपन की सम होत ।
तिहिं दुख लिखवे को कहूं, नहिं कागद नहिं दोत ॥
कठिन पीर पिय बिरह की, लगे प्रेम के बान ।
अबतो चाहत है चल्यो, रहि न सकत इहि प्रान ॥
महा प्रेम निज मधुर अति, सबतें न्यारो आहि ।
तहां न मिलवो बिछुरिबो, जीवत रूपहि चारि ॥
यह रस नित्य विहार बिनु, सुन्यो न देख्यौ नैन ।
एक प्रीति वय रूप दोउ, बिलसत एक रस मैन ॥
नैना तो अटके जहाँ, तहां न विछुरन होइ ।
इक रस अद्भुत प्रेम के, सुखहि लहै दिन सोइ ॥
नवल बिमल रस प्रेम को, जिनके सहजहि ढार ।
तिनके हिये चलत रहै, सुख प्रवाह की धार ॥
युगल प्रेम रस माधुरी, तहां न अटके चित्त ।
चखत फिरै माया फलनि, तहां रहै दुख नित्त ॥
जहां जहां चित लागि है, तहां तहां दुख राशि ।
जब लगि मन परि है नहीं, युगल प्रेम की पाशि ॥

युगल रूप तन विपिन जहँ, तहां न अटकै जाइ
देखि विषै विष छिनक सुख, तिहि ठां रह्यौ लुभाइ।
मूरख मन समुझत नहीं, नवल रूप निधि पाय।
फीको छिल्लर विषै को, तहां धमत है धाय॥
सोऊ कर आवत नहीं, बनत न एकौ बात।
बिचही दुख पावत फिरत, दुहूँ ओर ते जात॥
जहां जहां चित दीजिये, तहां तहां दुख मूल।
तहां न अरुझै जाइ के, सदा रहै सुख फूल॥
अनत अटक नाहिन भली, यह समुझै सब कोइ।
लहै न मनको जो रुचै, फिर फिर दुख ही होइ॥
और विषै रस पाइये, सोऊ दुख करि जानि।
तहां न दीजै चित्त ध्रुव, यह कह्यो मेरो मानि॥
अबतौ ऐसी चित्त धरि, युगल चरन रँग राँचि।
महामाधुरी केलि गुन, छिन छिन गाय अरु नाचि॥
सुनि ध्रुव ऐसी चाहिये, छांडि जगत की रीति।
युगल चरन कोमल सुरँग, तिनही सों करि प्रीति॥
अब तौ आहि यहै भली, सबतें मोह मिटाय।
रसिक अनन्यनि संग गहि, श्यामा श्याम लड़ाय॥
अबतौ करनी है यहै, वृन्दावन करि बास।
युगल चरन छबि रंग रँगि, सबतें होइ उदास॥
तन मन कै बन सेइये, या पर नहिं मत और।
बिहरत जहँ सुकुमार दोउ, अद्भुत स्यामल गौर॥
सो०—सुनि लै मेरी बात, युगल चरन चित लाइये।
जो चूक्यो यह घात, फिर पाछैं पछिताइहै।

-अबतौ वय सब बीति गइ, अरु जु रही सोउ जात।
द्यौस न कछु वै करि सक्यो, अब जिनि खोवै रात॥
पंगु होइ सब ओर तें, अटकै विवि छवि माहि।
तबहीं तौ पावै सुखहि, और विषै छुटि जाहिं॥
अब कै देही मनुज की, पाई है केहुँ भाग।
युगल चन्द पद कमल सौं, कीजै ध्रुव अनुराग॥
समुझत नहिं देखत सुनत, घटत नाहिं ललचानि।
जैसे खोटे तुरँग की, मिटत न मनकी बानि॥
सुख तौ सोई जानि वो, इक रस रहै दिन साथ।
सो सुख दुख सम जानिये, होइ पराये हाथ॥
नख सिख लौं भूपन जिते, अंगनि छविहि निहार।
सुख सींवां माधुर्य रस, छिन छिन यहै बिचारि॥
जाके यह सम्पति सदा, सोइ धनी जग माहिं।
ताको माया काल की, पवनहु परसत नाहिं॥
कुंज भवन रचना रुचिर, सेज सुरंग अनूप।
तापर बैठे देखि ध्रुव, अद्भुत सहज सरूप॥
जाके नैननि झलकि रहैं, गौर श्याम अभिराम।
तिनही ध्रुव यह देह धरि, पायो है विश्राम॥
रूप सिंधु में पैठि ध्रुव, जो मन सकहि सम्हारि।
प्रेम रतन तब कर परै, विषया विष दै डार॥
ज्ञान भजन जो करहु बहु, कौन करै बकवाद।
विविधि भांति विंजन करौ, लोन बिना नहिं स्वाद॥
प्यार विना नहिं सोहही, करौ भजन बहु ग्यान।
दीपक बहु इक्ठौ रहैं, होत न भान समान

बहुति भांति लै चतुरई, करौ भजन की बात।
रंच प्रेम की छटा बिनु, सब नीरस ह्वै जात॥
पानिप मोती की जैसी, ऐसो भजन सनेह।
जाके उर झलकत रहै, तिनहि धरी ध्रुव देह॥
करत भजन विधिसों विध्यो, अरु अचार बहुतेर।
प्रेम छटा की झलक बिनु, होत है सब अंधेर॥
प्रेम छटा रञ्चक नहीं, विधि को भजन अपार।
स्वादी स्वाद न पावही, घृत बिनु ज्यों ज्यौनार॥
प्रेम आंच के लगत ही, ढरकि चलत मन मैन।
हियो छकै तन पुलकि ह्वै, भरि भरि ढारै नैन॥
अपरस ज्यान समान यम, भजन धर्म आचार।
पाहन कबहुं न होत मृदु, परयो रहै जलधार॥
बहु रँग माया बिपियघन, तहां फिरै सुखमानि।
ऐंचि खैंचि या मन मृगहि, गहि सतसंगहि आनि॥
मनतें चञ्चल नाहिं कछु, नेक न कहुँ ठहरात।
तबही तौ ध्रुव होत बस, परै प्रेम की घात॥
बिचल्यौ फिरै भलौ नहीं, प्रेम गली छुटि जाइ।
रहै एक ही ठौर लगि, युगल चरन चितलाइ॥
प्रेम रङ्ग सौं रँगे जे, नहिं आनत उर आन।
अद्भुत युगल बिहार रस, तेई करिहैं पान॥
घाइल कबहूँ नहिं भयो, नवल नैह के तीर।
अटक बिना ध्रुव खटक नहिं, कह जानै पर पीर॥
चढ़िकै मैन तुरङ्ग पै, चलिबो पावक माहिं।
प्रेम पंथ ऐसो कठिन, सब कोउ निबहत नाहिं

परयो न रूप प्रवाह में, परस्यो नहिं उर नेह।
सुनि ध्रुव तिन या जगत में, धरी बादही देह॥
प्रेम प्रकार अनेक विधि, तिन में उत्तम भांति।
अद्भुत चरित दुहूनि के, जिन के उर झलकांति॥
प्रेम भानु के उदय ते, मिटत है भ्रम सब केर।
खंड खंड ह्वै जाइ ध्रुव, माया मोह अँधेर॥
जहँ प्रीतम तेहिं देश की, प्यारी लागत पौन।
प्रेम छटा जाने बिना, यह सुख समुझै कौन॥
नव किशोरता माधुरी, दम्पति रूप निहारि।
तेहि सुख के ध्रुव निमष पर, ज्ञान मुक्ति सब वारि॥
जाको हीयो सरस नहिं, क्यों समुझै रस रीति।
बिन अनुभव जानै कहा, कैसी होत है प्रीति॥
मन न मिल्यो तन निकट है, तहां कहां सुखहोइ।
बिनु गुन मन्द मनियां कहौ, कैसे लीजै पोइ॥
ज्ञान बिना पशु हू कछू, समुझत प्रीति को रङ्ग।
मोह बँध्यो पाछे फिरत, तजै कबहू न संग॥
ज्ञान सहित नर देह वर, भरतखण्ड में होइ।
जो नहिं समुझै प्रेम रस, ताको रहिये रोइ॥
प्रेमी मलिन न होए ध्रुव, जाको उज्जल होय।
इक रस जाके उर बसै, रसिक लाड़ली पोय॥
अब ध्रुव ऐसी चाहिये, सबहीं तें मन फेर।
कै रसकनि को सङ्ग गहि, युगल चन्द छबिहेर

दोहा ख्याल हुलास के, तहँ प्रबन्ध कछु नाहिं।
आगे पाछे हैं भये, जो आये उर माहिं ॥
उलटो पंथ है प्रेम को, तहां रह्यो मन हारि।
यशहू सुनि लागत बुरो, मीठी लागत गारि ॥

॥ इति श्री ख्याल हुल्लास लीला की जै जै श्री हित हरिवंश चन्द्र जी ॥

अथ उत्कंठा माधुरी

श्री चैतन्य स्वरूप को, मन वच करूं प्रणाम।
सदा सनातन पाइये, श्री वृन्दावन धाम ॥१॥
गौर नाम अरु गौर तनु, अन्तर कृष्ण स्वरूप।
गौर साँवरे दुहुन को, प्रगट एक ही रूप ॥२॥
तिनके चरण प्रताप ते, सर्व सुलभ जग होय।
गौर साँवरे पाइये, आप अपनपौ खोय ॥३॥
वृन्दावन विहरहिं सदा, गहे परस्पर बाँह।
लालच तिनके मिलन को, उपजि परो जिय माहिं ॥४॥
उत्कंठा अंकुर कहूँ, उठ्यो हिय में आय।
ताकी तुम रच्छा करौ, कबहुँ उखरि मति जाय ॥५॥
डुलहि न पवन झकोर ते, जौ लौं नहिं दृढ़ मूल।
विघ्न न कोऊ कर सकै, रहहु सदा अनुकूल ॥६॥
पूरणमासी तुम करो, सदा अमृत की सींच।
यह अंकुर भीजो रहै, सदा प्रेम की कीच ॥७॥
अहो विशाखा सहचरी, तुम सब रस की मूल।
यह उत्कंठा बेलि ज्यों, नख सिख फूलै फूल ॥८॥
हो ललितादिक तुम सबै, मिलि सींचौ रस तोय।
यह उत्कंठा माधुरी, बेग सफल ज्यों होय ॥९॥
श्री वृन्दावन स्वामिनी, करि सुदृष्टि इहि ओर।
वृष्टि करौ अनुराग की, कृपा कटाच्छन कोर ॥१०॥
अहो लड़ैती बिन कहे, जानि लेउ जिय बात।
चरण तिहारे संग बिन, मोहि न कछू सुहात ११

पलक एक रहे कोटि सम, अलप कलप सम होय।
जो उपजै जिय में सदा, समझि सकै नहिं कोय ॥१२॥
कहि कहि काहि सुनाइये, सहि सहि उपजै शूल।
रहि रहि जिय ऐसे जरै, दहि दहि उठै दुकूल ॥१३॥
विरह अग्नि उर में बढ़ी, तप्यौ अवनि तनु जाय।
सुरत तेल तापर परै, कहु किहि भांति सिराय ॥१४॥
यह उत्कंठा की लता, चली बेग मुरझाय।
संग दामिनी श्यामघन, जो बरषे नहिं आय ॥१५॥
रोम रोम तन जरि उठै, बरि बरि उठै शरीर।
कब छिरकौगे आनि कै, कृपा कटाछिन नीर ॥१६॥
गिरि वन पुलिन निकुंज गृह, सकों देखि नहिं नैन।
सदा चकित देखत फिरों, कहुं न धरति चित चैन ॥१७॥
कालिंदी करवत लगै, चक्र लगै शशि भाय।
जो कबहूं उन सुखन की, परै सुरति जिय आय ॥१८॥
पवन लगै पाहन मनों, सेज लगै सम भान।
भोजन जल ऐसो लगै, गरल कियौ जनु पान ॥१९॥
फूल लगै फलका हिये, बसन मिलीमुख मोहि।
सबहिं सोंज उलटी परी, बिना एक पिय तोहि ॥२०॥
सबै अंधेरौ देखिये, जो सत सूर प्रकाश।
गौर सांवरे चन्द बिन, नयनन कौन हुलास ॥२१॥
बोलन खेलन हसन सुख, मिटी सबन की आस।
जे मन के सब सुख हुते, भये दुखन की रास ॥२२॥
दुख संकट अरु शूल सब, जो कछु हैं हिय मांहि।
देखत ही मुख दुहुन कौ, सबै सुखद ह्वै जांहि २३

वा मुख देखन को कहो, कीजे कौन उपाय।
कहा करौ कासो कहौं, परी कठिन अति आय ॥२४॥
ये लोचन आतुर अधिक, उनहिं पीर कछु नाँय।
जलते न्यारी मीन ज्यौं, तड़फि तड़फि अकुलाय ॥२५॥
-कान कथा मन ध्यान, रसना नाम अधार धरि।
नयनन गति नहिं आन, बिन देखे मुख माधुरी ॥२६॥
-गिरि वन पुर बीथिन सबै, रहौं निहार निहार।
कोऊ कहुँ नहिं पाइये, वा मुख की उनिहार ॥२७॥
वा मुख की आशा लगी, तजी आस सब जोग।
अब स्वामा हूं तजेगी, जो न बनै संजोग ॥२८॥
कहा करूं कासों कहूँ, को बूझे कित जाँउ।
बन बन ही डोलत फिरो, बोलत लेले नाँउ ॥२६॥
जो बन बन डोलत रहों, बाँध मिलन की फेंट।
अनजाने ही होयगी, कहूँ अचानक भेंट ॥३०॥
कोउ नाम तो करन पथ, कहूँ परैगो जाय।
बोलत बोलत कबहुँ तो, बोलहिंगे अकुलाय ॥३१॥
हो प्यारी हो प्राण पति, अहो प्रेम प्रतिपाल।
दुख मोचन रोचन सदा, लोचन कमल विशाल ॥३२॥
ऊंचे सुर सों टेर कै, कहूँ पुकारि पुकारि।
कृष्ण कृष्ण गोविंद हरि, रटों सु बारहि बारि ॥३३॥
हो निकुंज नागरि कुंवरि, नव नेही घन श्याम।
नैंनन में निस दिन रहो, अहो नैंन अभिराम ॥३४॥
अहो लड़ेती लाड़िली, अलकि लड़ी सुकुमार।
मन हरनी तरुनी तनक, दिखरावहु मुख चारु ।३५

गुणनि अगाधा राधिका, श्री राधा रस धाम।
सब सुख साधा पाइयें, आधा जाको नाम ॥३६॥
अहो सलोने साँवरे, सुन्दर सुखद स्वरूप।
मन मोहन मोहन हिये, महा मोद को रूप ॥३७॥
रतिनिधि रसिनिधि रूपनिधि, अरुनिधि प्रेम हुलास।
गुण आगर नागर नवल, सुख सागर की रास ॥३८॥
नवल किशोरी भामिनी, गोरी भोरी वाम।
महा मोहनी माधुरी, मोहन मन अभिराम ॥३९॥
मृगनैंनी आमोदनी, महामोद की रास।
गिरि वन पुलिन विलासिनी, मोमन करहु निवास ॥४०॥

* कवित्त *

कुंज कुंज केलि मिलि नवला नवेली भाँति,
करुना कटाक्ष करि करनि में धारिहों।
रातिहू की बात सब प्रीतम के परिचय,
कहिहों प्रगट प्रात नेंकु न बिसारिहों॥
माधुरी सो मन की हिलग वाहि भाँति करि,
प्रान हूँ ते प्यारी प्रिय सहचरि वारिहों।
अब तब जब कब लगिये रहत तक,
कुंवरि कृपा के कब ऐसो मोसों कारिहों ॥४१॥
अहो मन मोहन जी कौन हेत हमहीं सों,
कहा ऐसो निघट कठोर मन कीनों है।
तुम तो फिरत नित आना-कानी दिये इत,
में सों तन मन प्राण तुम ही कों दीनों है॥
मन बच क्रम कछु और न सहात मोहि

मन तो तिहारी माधुरी के रस भीनो है,
चैन न परत नेंक बैनन जनैये कहा।
नैना मेरे निपट कठिन नेंम लीनों है ॥४२॥
जोपै तो तिहारो मन भयौ है कठिन अति,
देखत हौं याही दुख दै है तो मिराइगौ॥
जाये तो तिहारे जिय ऐसी पै बसी है आय।
तुम सों हमारो कहौ कहाँ धौं बसाइगौ,
एक बार अपने को दूरिसों दिखाई देकें॥
जाहु फिर चले कान्ह कहा घटि जायगौ,
तुम तो दया के दानी जानानि के मनिजानि।
चतुर सुजान देखि मन तो सिराइगौ ॥४३॥
अनियारे कारे कहूँ, कजरारे कल वाम।
बाचक चाहनि चाह को, मोचक सदा सकाम ॥४४॥
मोहन मोहन सब कहैं, मोहन साँचो नाम।
मोहन मोहन के कछू, क्यों मोहन सब गाम ॥४५॥
जा कारन छोड़ी सबै, लोक वेद कुल कानि।
सो कबहूँ नहिं भूलि कै, देत दिखाई आनि ॥४६॥
सदा चटपटी चित बसै, समुझि सकै नहिं कोय।
कोऊ खटपटी हिये में, कहत लटपटी होय ॥४७॥
एक बार तो आय कै, नैंनन ही मिलि जाउ।
सोंह तुमें जो सांवरे, नेंकु दरश दिखराउ ॥४८॥
ऊरध स्वांस समीर सों, सीतल हैं गई देह।
तन मन डूबो जात है, इन नैंनन के मेह ॥४९॥
अहो प्राण पति प्राण यह, नैंनन में रहि आय

पलक एक लों पाइहों, जो पहुँचोगे धाय ॥५०॥
रोकति हो करि जतन सों, छिन छिन यहै सिखाय।
ए आवत हैं प्राण-पति, मति निकसौ अकुलाय ॥५१॥
जान सुगम राखनि कठिन, यह प्राणन की टेक।
सम्पुट के घनसार ज्यों, कीने जतन अनेक ॥५२॥
आस औषधी मेलि करि, नेह बास मों बांधि।
मुख सासन बासन कियो, धस्यो जतन सों सांधि ॥५३॥
पल में छिन में निमिष में, जो नहिं आवहु नाथ।
फिर पाछे पछताउगे, ज्यौं न परेगो हाथ ॥५४॥
प्राण गये जो आयहो, तौ न सरेगो काज।
अहो प्राण-पति प्रेम की, उलटि परैगी लाज ॥५५॥
प्राण गये की कछु नहीं, मति प्रीतम दुख होय।
यही समझि मन में सदा, छीजत नैनन रोय ॥५६॥
प्राण गए प्रीतम मिले, कहा प्रेम में स्वाद।
तन छूटे धन पाइये, मनहुँ कहां अहलाद ॥५७॥
मरे कहा हम होयँगे, जो जानें इहि बात।
तरपत ही बीतैं सदा, नैनन की दिन रात ॥५८॥
जा रसना नामावली, करी सदा गुणगान।
जिन कानन तव अमृत-मय, करी कथा रस पान ॥५९॥
जिन हाथन सों हेत सों, करी टहल बहु भांति।
जे लोचन मुख माधुरी, निरखि, न कबहु अघाति ॥६०॥
जिन ऐसो साधन कियो, यह निष्फल क्यों जाय।
सो सरीर क्यों सांवरे जग, दीजै सलिल बहाय ॥६१॥
चतुर सिरोमणि हो बड़े, तुमहीं करो विचार।

ताको यह गति बूझिये, कै कृमि कै विट छार ॥६२॥
परम सनेही होंय जो, सो शरीर तजि जांहि।
ब्याध सदेही पाइये, यह विवेक तुम मांहि ॥६३॥
भक्त अभक्त मिले सबै, कीने एक समान।
भक्त सदेह बुलाइये, तौ यह भजन प्रमान ॥६४॥
एक बार इन लोचननि, देखौं नवल विहार।
इनहीं हाथन दुहुन को, करौं बैठि शृङ्गार ॥६५॥
इनहीं पांवन प्रगट ही, बन बन डोलौं संग।
सैनन में ही समझि हौं, कछुक बात रस रंग ॥६६॥
जो कबहूँ तुम कहोगे, बिना प्रेम बिन भाउ।
या शरीर संजोग कौ, कैसो बने उपाउ ॥६७॥
जब करुणा-मय देखिहौं, लोचन कमल विशाल।
सबहिं प्रेम संजोगता, उपजि परै तेहि काल ॥६८॥
कुबिजा कौं सूधी करि, ध्रुव सदेह गयो लोक।
ए बातें सुनि सुनि सबै, मिटेउ हिये कौ शोक ॥६९॥
पारवती के खंड में, सबै जुवति है जाहि।
हम को एति कठिन कहा, श्रीवृन्दावन मांहि ॥७०॥
कीये को सब करत हैं, दीये को सब देत।
अन कीये को कीजिए, यहै प्रेम कौ हेत ॥७१॥
नहिं संजम सुमिरन कछु, नहिं साधन नहिं नेम।
नहिं मन में समझौं कछु, कहा कहावत प्रेम ॥७२॥
इन लोचन की लालसा, कबहुँ न मनते जाय।
ज्यों प्यासे कौं नीर बिन, और न कछु सुहाय ॥७३॥
नैंन दुखी तव दरस बिनु, देत छिनहिं छिन रोय

नैंनन के दुख हरन कों, तुम बिनु नांहिन कोय ॥७४॥
तुमसे हम को एक हैं, हममे तुमहिं अनेक।
हो प्रीतम सो कीजिये, रहै प्रेम की टेक ॥७५॥
जो मोसों मोसी करौ, नांहि कछु मोहि टौर।
तुम हो तैसी कीजिये, अहो रसिक सिरमौर ॥७६॥
परम तुच्छ हों त्रणहूँ ते, मांगत सकल सुमेर।
तन घट में चाहत कियौ, सत सागर के घेर ॥७७॥
करत मनोरथ अति कठिन, विकल कहत मुख बैंन।
जो मन को दुर्लभ सदा, चाहत देखौं नैंन ॥७८॥
सुगम करौ सब सांवरे, पैं सुदृष्टि जो होय।
अन-करनी करनी करहु, करनी करहु न कोय ॥७९॥
ज्यों सागर की लहर तें, कांपत हिये अनेक।
उन अगस्त-मुनि छिनक में, कियो आचमन एक ॥८०॥
हाहा कर त्रण दन्त धरि, जांचत हूँ कछु दीन।
कोटि जतन को कीजिये, जल बिन जिये न मीन ॥८१॥
और करौ तब कीजियेहु, विविध भांति की केलि।
एक बार संग खेलिये, मिलि होरी के खेल ॥८२॥
जब होरी के खेल की, सुरत परत जिय आय।
वही सुरत मन में बसै, सबहिं सुरत मिटि जाय ॥८३॥
जागत सोवत चलत चित, बैठत यही विचारि।
हो हो होरी कबहुँ तो, उठति पुकारि पुकारि ॥८४॥
सदा संग मिलि खेलिये, सपने हू में जाय।
दुरि भाजहु जनु लाल के, मुख गुलाल लपटाय ॥८५॥
मूंदि रहौं इन लोचननि, अंचल ओट दुराय।

तुम अंचल यह सांवरौ, भरे अचानक आय ॥८६॥
जौ लों सोऊँ स्वप्न में, तो लौं यह सुख होय।
जागे कछु न देखिये, तरफि पुकारों रोय ॥८७॥
वा दुख कौ नहिं पारहू, कहौ कहां लों बैंन।
कै समुझै जाकै लगै, कै लागें जहँ नैंन ॥८८॥
इन खेलन की लालसा, लगी रहै जिय मांहि।
या मन के दुख हरन को, बिना कुंवरि कोउ नांहि ॥८९॥
बार बार जांचत यही, विह्वल बिकल विहाल।
कब लिपटाऊँ लाल के, घोरि अरगजा भाल ॥९०॥
कब आंजहुगी करन सों, लोचन कमल विशाल।
ता छिनु छवि ऐसी फबी, जनु कुरँग परि जाल ॥९१॥
कर मीडहिं लोचन कुंवरि, रहै न कछु संभारि।
तौलों केसर के कलश, देँहु शीष ते ढारि ॥९२॥
मुख सोंधों लपटाय कै, अरु बेंदा देऊँ भाल।
कब देखहु इहिं भाँति सों, लपटे बदन गुलाल ॥९३॥
कुँवरि सैन समुझाय है, कर मुरली हरि लेहु।
नीकी भाँति बनाय कै, वेस जुवति को देहु ॥९४॥
तब अपने कर कुँवर को, वेश सखी को देउँ।
वा मुख की तब माधुरी, निरखि बलैया लेउँ ॥९५॥
इत खैलन के खेल को, कलमलात दिन रैंन।
तरफि तरफि छिनु छिनु परों, निमिष न आवत चैंन ॥९६॥
हो हो कहत पुकारिहों, अहो श्याम सुनि लेउ।
होरी संग न खेलि हो, तो होरी है देउ ॥९७॥
खेल कहाँ लों बरनियें, जो उपजै जिय माँहि।

उठैं मनोरथ हिये में, फिर फिर हिये समाँहि ॥९८॥
वा होरी के खेल को, खेल कहूँ ह्वै जांउ।
कै सोधों ह्वै दुहुन कों, अङ्ग अङ्ग लपटांउ ॥९९॥
कै गुलाल ह्वै लाल के, परों लोचननि जाय।
कै पिचकारी प्रिया की, दूजे कौन उपाय ॥१००॥
कै केशर के रंग में, कोजे जाय प्रवेश।
तब क्यों हू कछु पाइये, वा सुख को लव लेश ॥१०१॥
कै फुलवारी फूलिये, तिन फूलन में जाय।
जिन फूलन के भाँवते, भूषन करें बनाय ॥१०२॥
कै सोवें जा सेज पै, सेज सोइ ह्वै जाँउ।
कै क्यों हू ह्वै मधुकरी, मुख सुगन्धि लपटाँउ ॥१०३॥
पिय प्यारी जहँ पग धरैं, होंहु तहाँ की धूरि।
जो समझै नहिं प्राण पति, रहों ठौर सब पूरि ॥१०४॥
कै उर में ह्वै माधुरी, माल कंठ लपटांउ।
कै अञ्जन ह्वै दोहुनि के, नैंनन मांझ समांउ ॥१०५॥
कठिन मनोरथ मन उठे, को पूरनि करे आनि।
कृपा करेंगी लाडिली, दीन दुखी मोहिं जानि ॥१०६॥
सुधि आवे वा समय की, बुधि औरें ह्वै जाय।
विह्वल विकल पुकारि कै, परौं धरनि मुरझाय ॥१०७॥
अब तो या तन को तनक, और न कछू सुहाय।
जब ते उत्कंठा लता, उठी हिये में आय ॥१०८॥
तब हम तो कछु भले हे, हुतो भजन से हेत।
अब गति औरे होत है, नेक नाम मुख लेत ॥१०९॥
श्याम नाम जो श्रवण में, परै कहूँ ते आय।

तौ लोइन वा रूप को, अधिक उठें अकुलाय ॥११०॥
संयम सुमिरन सब मिटे, उलटी सबै सुहाय।
एक लालसा मिलन की, रही अकेली आय ॥१११॥
और कहाँ ते सुमरिये, लीला रास विलास।
रा अच्छर के कहत ही, होत कम्प अरु स्वास ॥११२॥
नैंन सजल बानी सिथिल, उठे रोम अकुलाय।
आपुन ही को आपुनौं, तन बैरी ह्वै जाय ॥११३॥
कब आवोगे धाय के, अति विह्वल मोहिं जान।
दुरि पाछे लोचन दोउ, कर मूंदहुगे आन ॥११४॥
तब अपने हीं हिये में, करों अनेक विचारि।
कै सुपनों पायो सरस, देखौं दृगन उघारि ॥११५॥
कै देखत हों ध्यान में, दोऊ मुख सुकुमारि।
कै मन में संभ्रम कछू, उठत बारहिं बारि ॥११६॥
कै काहू की कृपाते, कबहुं साँच है जाय।
तौ लौं भुज भरि भामते, लैहौं बेगि उठाय ॥११७॥
तब आंचर सों प्राण पति, कर पोंछोगे नैंन।
मधुर मधुर हंसि कहेंगे, प्रेम लपेटे बैंन ॥११८॥
अहो माधुरी हम बिना, जो बीतो दुख तोय।
सो दुख तेरो हिये में, छिन छिन साले मोय ॥११९॥
बीतो सो बीती सबै, अब जिन करहु सन्देह।
अब निबहैगी दुहुन सों, सदा एक रस नेह ॥१२०॥
अब कबहूं जिन भूलि कै, मन मति करहु कुरंग।
पलक न अन्तर होंहुंगो, सदा खेलि हम संग ॥१२१॥
हौं अपने कर कुँवारि को, करौं आजु शृङ्गार

तू रुचि-रुचि कर देहि मो, वन फूलन के हार ॥१२२॥
विविध भाँति के फूल तब, लै जाऊँ उठि धाय।
भूषन परम अनूप अति, देउँ बनाय बनाय ॥१२३॥
सीस फूल सोभा मनों, कोटिक जरे जराय।
वरन वरन वेनी मनों, रही त्रिवैनी आय ॥१२४॥
सुवन दारमी सुमन को, रचि वेंदा देऊँ भाल।
रचों अनूपम हिये को, हेम जुही की माल ॥१२५॥
पदचि रचों उर फूल की, छबि देखत रहौं भूल।
फूलन सों ऐसी बनी, मनहुँ बनों मखतूल ॥१२६॥
फूलन के अंगद रचौं, पहोंची फूल गुलाल।
नूपुर कंकन झिंझिनी, बाजहिं परम रसाल ॥१२७॥
रीझ कछू मुसकायेंगे, करि सुदिष्टि इहि ओर।
माल मरगजी कंठ के, दै हैं मोहि अकोर ॥१२८॥
नख सिख करहुँ सिंगार जब, दरस दिखाऊँ आनि।
कब देखों वा मुकुर में, मिलि मुख की मुसकानि ॥१२९॥
षटरस नाना भाँति के, धरों निकट सब आनि।
मधुर सलोने चरपरे, कछु मन की रुचि जानि ॥१३०॥
अरस परस भोजन करहु, सो सुख कह्यौ न जाय।
नैंनन ही में सखिन कों, देत बुलाय बुलाय ॥१३१॥
विविध भाँति बीरी रुचिर, देहों तुम्है बनाय।
तब देखों जब कुँवरि कों, अपने हाथ खवाय ॥१३२॥
सेज सँवारों सुखद अति, जहाँ करो विश्राम।
धरों सौंज सब समय की, नव हिकुंज सुखधाम ॥१३३॥
तुम पौढोगे प्रिया प्रिय, नव प्रजंक परिजाय।

ललित भाँति नव खगनि सौं, लगौं पलोटनि पाय ॥१३४॥
अरसि परसि मिलि करहुगे, कछुक हास परिहास।
समझि समझि मुसकाउगे, दोउ भेद के गाँस ॥१३५॥
तब कछु लोचन लोल अति, कछु सलज्ज कछु वाम।
कछु काजरारे ढरि रहे, पिय के सदा सकाम ॥१३६॥
कछुक डगमगे रगमगे, देत सगबगे सैंन।
चपल खरे रस अनुसरे, भरे मनोरथ मैंन ॥१३७॥
कब देखौं यह भाँति सौं, जुडे नैंन सौं नैंन।
अरस परस मुसकाति मन, समझ गूढ़ कछु सैंन ॥१३८॥
कब इन कानन परहिंगे, प्राणन कों सुख दैंन।
कछु ललचौंहे लाल के, लोभ लपेटे बैंन ॥१३९॥
जब प्रीतम रस रङ्ग में, रहे परस्पर छाय।
तब ललिता मोहि सैंन दै, लैहैं निकट बुलाय ॥१४०॥
अरस परस भुज कंठ में, निरखहिंगे छवि नैंन।
सब सुख मोहि बताय हैं, करकै सैंना बैंन ॥१४१॥
नव निकुञ्ज के रंध्र में, छिन छिन नवल बिहार।
निरखि माधुरी नैंन भरि, भरहिं नैंन मतवार ॥१४२॥
सखी विशाखा कहैंगी, कबहु विवस मत होहि।
यहाँ प्रेम बाधक सदा, कहि समुझायो तोहि ॥१४३॥
कै सनमुख सुख देखिये, करत हास परिहास।
कै सेवा सब समय की, कीजै निकट निवास ॥१४४॥
रूपमंजरी आनि कै, कर पौंछेगी नैंन।
कछु कानन में कहैंगी, परम मधुर अति बैंन ॥१४५॥
सखी सहेली सबै मिलि, प्रीति करेंगी आनि

सैंनन में सुख देंइगी, नई सहचरी जानि ॥१४६॥
जब जागेंगे जुगल वर, लैहैं निकट बुलाय।
अहो माधुरी मोद सों, कछुक मधुर सुर गाय ॥१४७॥
भेद रागिनी राग के, उपजहिंगे बहु भाँति।
तान गान सुन प्राणपति, रीझि रीझि मुसकाति ॥१४८॥
दसन खंडित बीरी रुचिर, दैं हैं निकट बुलाय।
कुंवरि आपने कंठ को, हार कंठ पहराय ॥१४९॥
तब सैंनन में कहैंगे, कछु विनोद रस गाय।
मन भाये पहौंचे निकट, दिन होरी के आय ॥१५०॥
भाँति भाँति परिहास रस, कहिहौं कछुक बनाय।
किलकि किलकि हँसि जाँयगे, दोउ कंठ लपटाय ॥१५१॥
तब होरी की सोंज सब, राखौं सकल संवारि।
घोरि अरगजा घटनि में, केसर सरस सुधारि ॥१५२॥
रचि गुलाल बहु भाँति को, सोधौं सरस बनाय।
चन्दन चारु कपूर सों, भाजन विविधि भराय ॥१५३॥
करि अबीर बहु रंग को, नव गुलाल को नीर।
चलि खेलहु पिय प्राणपति, कालिंदी के तीर ॥१५४॥
हुलसि उठे हिय लाडिले, दिन होरी के जान।
अपने अपने मेल को, सबै मतौ मन ठान ॥१५५॥
वृन्दादिक सब सामरी, भई श्याम की ओर।
ललित विशाखा माधुरी, बनी कुंवरि की जोरि ॥१५६॥
एक ओर नव नागरी, लिये सहेली संग।
ढफ दुंदभि और झालरी, बाजत भेरि मृदङ्ग ॥१५७॥
उतहिं कुंवरि संग किन्नरी, रूरज म्रुरज नीसान।

हो हो होरी त्रिन कछु, और परहिं नहिं कान ॥१५८
फेटन भरे गुलाल की, सोंधो सरस मिलाय।
दुरि भाजत हैं प्राणपति, प्रिया बदन लपटाय ॥१५९॥
घोरि अरगजा घटनि में, राखे सबनि दुराय।
दुरि पाछे ह्वै श्याम के, दई शीश ते नाय ॥१६०॥
एक सखी तब बीच करि, ढिंग ठारी भइ आन।
पिचकारी रस पूरि कै, दई नैंन में तान ॥१६१॥
भरि भरि झोरि अबीर के, दीने सबनि उड़ाय।
अँधियारो करि श्याम को, लैगई कहूँ दुराय ॥१६२॥
बहुत दिनन में सबन के, भये मनोरथ आज।
नीकी भाँति बनाय के, करौ जुवति को साज ॥१६३॥
नख सिख अंग सिंगार करि, चली प्रिया पै धाय।
आज नई इक सहचरी, चाहति देखौ पाय ॥१६४॥
सब सखियन कर गहि लिए, ढिँग बैठारी आय।
तन पुलकित भो प्रेम सों, परस प्रिया के पाय ॥१६५॥
पहचानी हम सखी यह, परसत ही कर आय।
जो भाजी दुरि सबनि के, मुख सोंधो लपटाय ॥१६६॥
बहुरो वाही रूप सों, मिलि झुलि औंगी डोल।
सब सहेली सहचरी, गावहिं राग हिंडोल ॥१६७॥
एक अरगजा घोरि कै, छिरकत हैं तेहि गात।
इक गुलाल लपटाय मुख, देखत ही दुरि जात ॥१६८॥
इक पिचकारी कनक की, नव केशर सों घोरि।
पिय प्यारी कों निरखि कें, चितै हँसति मुख मोरि ॥१६९॥
इहि विधि हिल मिलि खेलिए, फागु बड़ो त्यौहार

बहुरयो मधु ऋतु जानि के, विहरहि विपिन विहार ॥१७०॥
तव वृन्दा द्रुम वेलिको, दीनों परम निदेश।
नख सिख करहु सिंगार सब, पहिरहु नूतन वेश ॥१७१॥
हेम जुही हरषहु हिये, हरि आवत तव हेतु।
प्रिय लागति हौ पीय कों, प्रिया वदन सुख देत ॥१७२॥
हो तमाल मालावली, करहु मोद विस्तार।
सुख पावत हैं स्वामिनी, देखि श्याम उनहार ॥१७३॥
हो मल्ली हो मालती, हो चम्पक हो चारु।
नख सिख तें आनन्द सों, फूलहु सब फुलवार ॥१७४॥
यही मनोरथ मन कियो, सबैं सुमन निरवार।
आजु कुंवरि मिलि करहिगे, अपने करन सिंगार ॥१७५॥
फूल रही कुसुमावली, छबि वरनी नहिं जात।
सबहि सरस सुख देति हैं, अपनी अपनी भाँति ॥१७६॥
अरसि परसि भुज अंस धरि, निरखत सुख चहुँ ओर।
चितवत ही आगें चलें, नाचत मोर चकोर ॥१७७॥
जहाँ कुंद देखति कुँवरि, निरखति तहाँ निहारि।
ताही तें भावत अधिक, प्रिया दशन अनुसारि ॥१७८॥
नील कमल निरखे कहूँ, तन पुलकित तेहि काल।
अपने कर सों कुंवरि लै, करी कंठ की माल ॥१७९॥
पीत कमल लालन कहूँ, लख्यों ललित कर धाय।
बार बार चूमत तिनहिं, प्रियहि दिखाय दिखाय ॥१८०॥
मंद मंद गति चलति हैं, फेरि रही तन काँति।
नवल माधुरी कुसुम के, दलन विछावत जात ॥१८१॥
नवल माधुरी पंथ की, रचना रची बनाय

नवल माधुरी कुँज में, मिले कुंवरि दोउ आय ॥१८२॥
नवल माधुरी करनि सों, नवल करत शृङ्गार।
नवल माधुरी फूल सों, देत सँवारि सँवारि ॥१८३॥
नवल माधुरी दलन सों, बाँधे कवरी केस।
नवल माधुरी बीन के, बैनी रची सुदेस ॥१८४॥
नवल माधुरी कुसुम के, करन करे अवतंस।
नवल माधुरी माल के, लटकत फोंदा अंस ॥१८५॥
नवल माधुरी सेज पर, नेंक करौ विश्राम।
नवल मधुरी प्रेम सों, पवन करत अभिराम ॥१८६॥
नैंनन सों नैंना मिले, मुख सों मुख लपटाय।
भुज अरुझे सुरझे नहीं, रहे सुरति सुरझाय ॥१८७॥
उरसों उर ऐसे मिले, सब अङ्गन सों अङ्ग।
मनहुँ अरगजा में कियौ, नव केशर को रङ्ग ॥१८८॥
अरस परस बतरात मिलि, कछुक अटपटी बात।
नैंन बैंन तन मन सुनत, सबै श्रवन ह्वै जात ॥१८९॥
जब निरखत मुख माधुरी, लोचन रहत लुभाय।
श्रवन प्रान तन मन सबै, नैंननि में रहि आय ॥१९०॥
जब बोलत तब बचन कों श्रवन अतिहि ललचात।
जब चाहत चख चाह को, बैंन खरे अकुलात ॥१९१॥
जब सैनन मुसकात दुहु, चितै माधुरी ओर।
देखत सब सुख पूरि कै, कृपा कटाच्छन कोर ॥१९२॥
ता छिन की शोभा कछू, कहत बनैं नहिं बैंन।
कै सुख समुझै माधुरी, कै माधुरि के नैंन ॥१९३॥
समय जानि कै सहचरी, रही निकट सब आय

अपनी अपनी सेज सब, लीनी करन बनाय ॥१९४॥
सीतल सुखद सुवास इक, करवावति जल पान।
एक सखी तब दुहुन को, दरस दिखायो आन ॥१९५॥
एक कुसुम बहु भाँति के, लाई सरस सँवारि।
एक माधुरी दुहुन की, नैंनन रही निहारि ॥१९६॥
एकनि चित्र विचित्र अति, रचे अनूपम भाँति।
चितै चितै नागरि कुँवरि, नैंननि में मुसकाति ॥१९७॥
एक बजावत किन्नरी, इक नाचत संगीत।
इक गावत अनुराग सों, दुलरावत दोउ मीत ॥१९८॥
एक निकर सारस बनें, एक गौर इक श्याम।
सदा एक रस रसन सों, रटत पिया पिय नाम ॥१९९॥
इक भोजन बहु भाँति के, लाई रुचिर बनाय।
देत माधुरी दुहुन को, नव नव रुचि उपजाय ॥२००॥
जुर मंडल बैठी निकट, सबै सहेली सङ्ग।
बीच बीच परिहास के, उपजत कोटि तरङ्ग ॥२०१॥
पान करत रस माधुरी, पियत न कोउ अघात।
ता पाछे अचवन कियौ, जल सुगन्धि बहु भाँति ॥२०२॥
रचि बीरी करि कुंवरि के, देत सँवारि सँवारि।
कर काँपत है कुँवरि के, मुख माधुरी निहारि ॥२०३॥
तब उनको मन जानकैं, हौं अपने कर देत।
वे सहचरि सुख समझि कें, अरसि परसि मुख लेत ॥२०४॥
इहि विधि विलसि बसन्त ऋतु, सकल सुखन की रास।
नवल माधुरी कुंज में, कीने विवध विलास ॥२०५॥
लाग्यौ पवन सुहावनौ, श्रमकन उठे सुदेश।
गिरिवन पुलिन निकुंज गृह, ग्रीषम कियौ प्रवेश २०६।

अथ करुणा बेली

✻ चौपाई ✻

व्याससुवन करुणा अब करो । मो सिर चारु चरणरज धरो ॥
श्रीहितरूप कृपा की आसा । याचत उर धरि बड़ौ हुलासा ॥
करुणानिधि तुम नाम कहावैं । मोसौ दीन चरण रति पावैं ॥
प्रथम करो करुणा गुरु राज । जिनौं शरण गहे की लाज ॥
पुनि ये रसिक सुदृष्टि निहारो । मोपै करुणा सदा विचारो ॥
करुणा दया साधु गुरु करि हैं । मो उर ताप तिमिर सब हरि हैं ॥
श्रीगुरु साधु जाहि अपनावैं । तेई जन हरि के मन भावैं ॥
जिनको विरद विदित जग माँही । अभय करैं पकरैं जा बाहीं ॥
हे करुणा निधि करुणा कीजै । अब निज शरण रावरी दीजै ॥
ऐसी सदा विचारौ चित ही । हौं तव-कृपा मनावत नितही ॥
बिनती सुनो साधु-मनरञ्जन । तुम पदकमल सकल दुख गञ्जन ॥
अहो नाथ तुम दीन दयाला । अपने कौं कीजै प्रतिपाला ॥
मो करणी नहीं चित में धरिये । अपनी कृपा ओर ही ढरिये ॥
जो मम औगुन ग्रहन करौगे । अपनो विरद आप बिसरौगे ॥
करुणामय ! यह विरद बढावौ । जो हमसे दीनन अपनावौ ॥
अहो कृष्ण ! पदरति अब पाऊँ । जुगल केलि कलकीरति गाऊँ ॥
देहु कृष्ण यह भक्ति सुधन है । तुम दासन के हिये दृढपन है ॥
भक्तन की अभिलाषा दायक । हो राधापति! तुम सब लायक ॥
देहु देहु करुणाकरि पद-रति । तुम समान को त्रिभुवन में पति॥
हे ब्रजईश सीस दीजै पद । तुम हो परम दया करुणा हद ॥
करो अनुग्रह अपने जनकौं । जैसे गौ चाहत बच्छन कौं ॥
यौं हरि देहु भक्ति वरदानै जाकी रतिकौं जगत बखानै

हे गोकुलविधु वदन दिखावौ नैंन चकोरन सुधा पिवावौ
निरख सफल ह्वैहैं दृग मेरे। पावन गुण गाऊँ मैं तेरे॥
अहो अहो त्रिभुवन के स्वामी। तुम हौ सबके अन्तर्यामी॥
यातें अपनी ओर निहारौ। मेरौ दोष न चित में धारौ॥
मिलन आसकी बेलि निपाई। ऐसी करौ जु अफल न जाई॥
तुम पद दरशन पूरण फल है। दै सतसंगत सींचत जल है॥
यह अभिलाष रहित मन नित है। प्राणनाथ मम आरत चित है॥
तुम समरथ हौं दीन महाई। शरण गहे की तुमैं बड़ाई॥
हे व्रजदूलह! नन्ददुलारे!। कब ऐहो दृग आगे प्यारे॥
नहिं जानैं किहि छिन दरसोगे। तपत हिये कब सुख बरसोगे॥
कानन सघन वीथियन मांहीं। निरखौं प्रिया अंस गरबाँहीं॥
पूरित नेह बचन सुनि हौं जब। श्रवण लाभ फल हरि गनिहो तब॥
हे वृन्दावनचन्द! विनोदी। देहु दान मैं ओटत गोदी॥
बात तुमारी जीवन मेरी। सब विधि पूजो आश सवेरी॥
परम दया के मन्दिर तुमहीं। यातै शरण गहत हैं हमहीं॥
राखौ नाथ कृपा करि नेरैं। अहो कृपानिधि हम नित टेरैं॥
तुम गुणगहर कमलदल लोचन। अपने जन के सब दुख मोचन॥
हे सुन्दरवर! तुम हौ नग-धर। दीजै अभयदान सिर कर-वर॥
सुनौ कान दे विनती हो हरि। तुमहिं सुनाऊँ बहुत भांति करि॥
अपने की सुधि आप न लीजे। ऐसी कहा निठुरता कीजे॥
और बात नहिं चितहि विचारो। कृपा दृष्टि मम ओर निहारो॥
इहि विधि नाथ तुम्हारो जस है। जो बिसरो तौ का मम बस है॥
अहो कृष्ण जो दास कहावै। सो क्यों जगत मांहि दुख पावै॥
यह तौ बड़ी त्रास आवत है। कृपा अवधि क्यों तोहि भावत है॥

[illegible] ॥
अपनी जनकी लज्जा गहिवें बहुत न आवत है प्रभु कहिवे
जाकौ अनुग सो न सुधि लेही । वह न कहावै नाथ सनेही ॥
अगनित द्वन्द देह के पथ हैं । तुम बिन टारन को समरथ हैं ॥
बार बार हम हरि यह याचैं । तुम पद छांड़ि अनत नहिं राचैं ॥
ऐसी सुमति देहु करुणानिधि । कहौप्राणपतिमिलिहौकिहिविधि॥
कब उपजैगी यह मन मांही । राखौगे मोहि चरणन छांही ॥
में तो निश्चय यहै करी है । तुम धौं जिय में कहा धरी है ॥
खोटौ खरौ परो जो शरणी । कहा देखनी ताकी करणी ॥
विरद तुम्हारौ विदित रसाला । अब तौ करे बनै प्रतिपाला ॥
कब ऐहो इन नैंननि आगें । कब ये रूप तिहारे पागें ॥
हे राधापति ? तुम पद दरसौं । सुयश रावरो गावत सरसौं ॥
हे अभिराम श्याम बनवासी । कब परसौं वे पद सुखरासी ॥
अब उर आशा अधिक भई है । तुम धौं मन में कहा ठई है ॥
देहु न नाथ अनाकनी मोसौं । अपनी विथा सुनाई तोसौं ॥
भली लगै सो करि हो ब्रजपति । मेरें तौ तुमहीं हो हरि गति ॥
अली जुगलविधु मो दृगभूपन । कब सींचौगे प्रेम पियूषण ॥
कौतुक मिथुन सकल सुख ऐना । वन घन रमत निहारौं नैंना ॥
निभृत निकुञ्ज तें निकसो जवही । मेरी दृष्टि परौगे तब ही ॥
कब व्है हैं वह मंगल बिरियां । आवत युगल अंश भुज धरियां॥
अब कछु कहत परस्पर वानी । सो तौ परम नेह-रस सानी ।
ताहि सुनत बदलै गति तनकी । पूजै अभिलाषा सव मन की ॥
हे सुखरासि दास्य अब पाऊँ । हे प्रभु ! तुम पद कृपा मनाऊँ ॥
कानन कमनी केलि विलोकौं । निरखत पलक धरनि गति रोकौं

ऐसौं बानक बनि है कबहूँ। करुणामय! बिनती सुन अबहूँ॥
अति अभिराम श्याम सुखदाता। तुम पतितन पावन विख्याता॥
अहो अकिञ्चन जन-मन-भावन। भक्तन उर आनन्द बढ़ावन॥
दासन भीर सदा लागत हौ। अब कछु नाथ! दूर भागत हौ॥
जो तुम कहो करम तुव खोटे। तौ तुम .रि का विधि हौ मोटे॥
करमन के बस तुम जन होई। तो तुव भजन करै क्यों कोई॥
जो तुम बड़े करम ठहरावौ। तौ तुम क्यों जग ईश कहावौ॥
जाके दंड जगत ये नांचै। सोई धनी कहावै सांचै॥
जो हरिदास-करम बस कहिये। तो प्रभु! तुमहिं न ऐसी चहिये॥
नीति अनीति आपही देखौ। हमकों याकौ बड़ौ परेखौ॥
उत्तम करमन करि जो तरिये। तौ तुमकों काहे अनुसरिये॥
ये हठ छाँड़ि देइ अब हरि किन। करमन लार बहावौ प्रभु जिन॥
साधु सभा के तुम ही मण्डन। करो कटाक्ष कर्म होय खण्डन॥
हो ब्रजनाथ साथ देउ मेरौ। ऐंचौ पकरि बाँहि हौं तेरौ॥
हौं भूल्यो संसार-विषय-वन। भ्रमत फिरौं पाऊँ पीड़ा तन॥
तुम सौ दयाल देखि छिटकावै। कहौ कृष्ण को पार लगावै॥
यह गति देख न जो कसकै मन। तौ हरि कहा कहाये तो जन॥
अपने कौं स्वामी जो तजि है। लेहु विचार कौन हरि लजि हैं॥
तातैं विरद पुरातन गहिये। तुम सौं बार बार हरि कहिये॥
बृन्दावन हित रूप रावरे। कब परि हौ मम दृष्टि साँवरे॥
राधा रसिक कहावौ नागर। भक्तन की गति करुणा सागर॥
वरणि सुनाइ बेली करुणा। अबतौ नाथ कृपा दिस ढरुणा॥
हौं नहिं लोक भ्रमन तें डरोई। एक बात कौ संशय करोई॥
निस[illegible] [illegible] उस्ते [illegible]। इच्छा वस तन धरौं अनन्त

जो कोउ जाकी शरणे-आवै यद्यपि औगुनी दण्ड न पावै
अहो शरणागत-पालक गिरधर। अब मो लाज राख सुन्दरवर॥
सती चढ़ी सर अगनि न जारै। कहौ नाथ! वह कहाँ पुकारै॥
प्यासे कौं जल नदी न देई। तौ हरि कहौ कौन सुधि लेई॥
प्रफुलित कमल रोष रवि ठानै। इहु दुख वारिज कहाँ बखानै॥
चन्द्र चकोरन तें दुरि रहि है। हो हरि! व्यथा कहाँ वह कहि है॥
दीपक मन्दिर हरै न तम कौं। तौ प्रभु तुम विसरावौ हमकौं॥
जो जल काठ न तरै गुसांई। तरुवर बैठन देय न छांई॥
सुनौ प्राणपति! तौ कहा वस है। जोपै उन मन धर्यौ विरस है॥
ये ब्रत तजौ तौ अचरज नांही। पै न संभवै प्रभु तुम माहीं॥
अहो कृष्ण! अब करो न ऐसी। जैसी तुम जु विचारौ तैसी॥
नैंक सुदृष्टि करौ मम ओरी। कारज होय बात यह थोरी॥
हे बलवीर! धीर मति पनके। रक्षक सदा आपने जनके॥
त्राहिमाम शरणागति आयौ। त्यागु न उचित जु भृत्य कहायौ॥
जो अगतिन की सुगति न करि है। कहौ कृष्ण! को फैंट पकरि है॥
अब चितवौ रंचक सुदृष्टि कर। अखिल भुवन तौ जाय नाथ! तर॥
जाकौ जतन कहा करवै है। रंचक दया हृदय धरिवै है॥
तुम तौ दीन दयाल-प्रभू अति। हौं हितरूप चरण पाऊँ रति॥
तुम हरि उर आनन्द भरन हौ। भक्तन की आरति जु हरण हौ॥
अब न गहर कीजै इत देखौ। जैसे टरै करम की रेखौ॥
हो दुख दमन, रसिकराधापति। भक्ति दान दीजै उदार-मति॥
दाता देत कछू नहिं राखै। श्रीगुरु-सन्त भागवत भाखै॥
देहु देहु पद सेव सदाई। तुम दानी हौं कृपण महाई॥
सब जुग मांहि विदित यग गाथा जो अनाथ सो किये सनाथा

सुनौ कान दै कानन बासी । अब जिन जगत करावं
तुम जु ज्ञानघन त्रिभुवन ईसौ । अभय कर कमल धरौ म
मैं विनती प्रभु करी घनेरी । कही रुचि दैनी प्रेम
सुन कै नाथ ! धरौ मन मांहीं । जैसे परयौ रहै यहि
तुम लायक दायक सबही सुख । दर्शाओ काहे न सुन्द
पाऊँ यह शोभा प्रसाद-धर । ब्रजपति नन्दन जो रा

* दोहा *

श्रीहरिवंश प्रताप तैं, वरणी करुणा वेलि ।
ब्रजभूषण राधा धनी, दरसावौ रस केलि ॥
सम्वत सै दश आठ गत, चार वरष उपरन्त ।
कृष्णदरस अभिलाष हित, कथा सुनौ हरि सन्त ॥
जेठ वदी पांचै सु दिन, बल हित रूप विचार ।
हरि गुरु साधु कृपा करौ, वरन्यौ यह सुखसार ॥
दीन बन्धु करुणा अवधि, भक्तवत्सल यह नाम ।
वृन्दावनहित लेउ सुधि, विरह बढै ज्यों श्याम ॥

* इति श्री करुणाबेली सम्पूर्ण *

श्रीयुगल सनेह पत्रिका

टेक—वंदौं प्रेम खिलारी दम्पति उर जो है।
कौतुक रचै जु भारी, दोऊनि मन मोहै ॥
कौतुक रचै जु भारी भारी अति रस रूप छकावै।
सदा सदेह बसै वृन्दावन पिय प्यारी दुलरावै ॥
याके खेल रसिकजन परखैं थिर चर सब मन भावै।
वृन्दावन हित रूप सहेलिन चित जु चोज उपजावै ॥१॥
जुगल प्रेम रस कोस तहाँ की अधिकारिनि जु सहेली।
प्रनऊं प्रथम चरन तिन दत बरनौं कानन रस केलि ॥
मोहि सुमति दाइक सब लाइक गौर श्याम हित बेली।
वृन्दावन हित रूप कुञ्ज सन्तत पिय प्रिया नवेली ॥२॥
श्रीहरिबंश गिरा करि समझी दम्पिति चरित कहानी।
बहुतनि सुनी कही पुनि बहुतनि अनुरागनि ही जानी ॥
बन्दौं चरण रसिकजन गुरवे रस की लखी निसानी।
वृन्दावन हित रूप न परचे नीरस विधि जु विधानी ॥३॥
महा भाव दम्पति रस बतियाँ समुझति सन्धि सहेली।
कमल गन्ध कौ अलि ज्यौं मरमी जा उर लगन गहेली ॥
दादुर मीन चिन्हार न तासौं जदपि रहै नित भेली।
वृन्दावन हित रूप जानत ततसुख जु उपास दुलेली ॥४॥
सब रस एकमेक करि सानें अनुभव कर उर हीनैं।
मरम न पावैं तरक उठावैं अपुकौं मान प्रवीनैं ॥
गौर श्याम कौ प्रेम इकौंना बिरले रसिक जु चीन्हैं।
रस पुनि रूप सवादिनु वृन्दावन हित द्वै वपु कीन्हैं ५

देखत देखत ओट कोट से होत अनमिले मानें।
ऐसो प्रेम बली उर खेलै को कवि रीति बखानें॥
कानन कथा अगोचर सबनें प्रेमी ही पहिचानें।
वृन्दावन हित रूप न परच्यौ जो अचिरज सो जानें॥६॥
दिये लिये मन रहैं सहेली दम्पति मिले खिलौना।
कानन छबि सर क्रीडत सांवल गौर हंस मनु छौना॥
छिन छिन नये नये अस कौतुक भये न हैं पुनि हौना।
बृन्दावन हित रूप अभी नैननि की ओक अचौना॥७॥
प्रीत परख प्रीतम ही जानें जा हिय लगन लगी है।
कै जानै प्राणन की प्यारी जो रस गहर पगी है॥
कै जानैं मरमी जु सहेली दुहुँ हिय हिलग खगी है।
वृन्दावन हित रूप निहारनि पिय दृग भूख जगी है॥८॥
पलक परत बीतत जु कलप सत दुहुँ हिय हिलगनि ऐसी।
गौर श्याम ही मरमी इहि सुख हौं बरनौं विधि कैसी॥
कौन अटपटी हिये चटपटी देखी सुनी न जैसी।
वृन्दावन हित रूप छके नव लाल प्रिया नव वैसी॥६॥
नेह निपुन चंद्रिका सँवारत राखी कछुक झुकौंही।
बतरस प्रिये लगाइ रह गये इक टक ठाढ़ौं सौंही॥
प्रीतम प्रीत लीन भये सजनी नागरि समझि लजौंहीं।
वृन्दावन हित रूप बिकानें मैंन आपनी गौंहीं॥१०॥
मारग प्रेम दुहेलो सजनी ये दोऊ चलि जानें।
कै मरमी इन हिये सिन्धु कौ जो लै थाह प्रमानें॥
हिलग सन्धि जो होहि सहेली सो मरमहिं पहिचानें।
वृन्दावन हित रूप चोट हिय लगी सु पीर बखानें १

कुंजमहल कौतुक जु अलौकिक दृग अनुरागी जानैं
रसना लोचन हीन बापुरी कैसे छवि सु बखानैं ॥
भावहीन भावक के हिय कौ मरम कहा पहिचानैं ।
वृन्दावन हित रूप देसरा मती रसिक उर आनैं ॥१२॥
उक्ति जुक्ति वहु भांति मिलावैं वा घर भेदी नाहीं ।
रूप चोट लागी जाकैं कसकै जु करेजा मांही ॥
नेमी कुशल पुकारु करन परसै न सूर की छांहीं ।
वृन्दावन हित रूप देस प्रेमी ही आवैं जांहीं ॥१३॥
बिन मित प्रेम अंत नहिं पावै दोऊ बल टकटोरैं ।
समझि समझि मुसिकात रस छके पुनि पुनि ग्रीवा ढोरैं ॥
परन देत नहिं रस में अंतर प्रीतम रहै कर जोरैं ।
बृन्दावन हित रूप प्यास पीवतहू बढ़ै दुहुँ ओरैं ॥१४॥
बलदत रहैं मननि कौं सजनी ऐसे रसिक खिलारी ।
नीठ नीठ हौं हूँ समझत हौं निकट रहत जु बारी ॥
लाल अनाकनी दै जु भुलावैं मुहि सम्हरावै प्यारी ।
वृन्दावन हित रूप अमल की मो चित चढ़ै खुमारी ॥१५॥
विहरत कुंज लगत कछु औरै रास रमत कछु औरैं ।
बनविहार लागत कछु औरै मो मति होइ लखि बौरैं ॥
सतदुति मुकर भूमि कानन की प्रतिबिंबत सब ठौरैं ।
बृन्दावन हित रूप बादल से होत श्याम तन गौरैं ॥१६॥
गरुवौ नेह नवल नागिरि कोऊ थाह न पावै ।
लाल नेह उर उछरि परत है तातें नाच नचावै ॥
दुहूँ हिलगकी संधि सहेली सो रचि छन्दहिं गावै ।
वृन्दावन हित रूप कृपा करि रसिकनि सुविधि चितावै १७

रस रतनन के रसिक जौहरी नीके परखन हारे।
बेचैं मूरी बेर कहा सो करि हैं परख बिचारे॥
कहाँ सूत खासा महमूदी कहाँ सन ढेर नवारे।
वृन्दावन हित रूप कहाँ अलि कहाँ गुबरेला कारे॥१८॥
कानन है कमनीय लोक जहाँ रस वैभव जु सची है।
देववधू देखन तरसति कमलामति बहुत पची है॥
महामधुर रसलीला अतरकि श्यामल गौर रची है।
वृन्दावन हित रूपी सम्पति धनि जेहि उर जो खची है॥१९॥
मिंहीं विहार नैंन पुनि मन कौ ये रस भोगी बांके।
कुँजमहल झूमत रस छाके कौतिक चरित जहाँ के॥
तत सुख सुखी सहेली निरखति गहे रंध्र मग नांके।
वृन्दावन हित रूप रसिक जन भेदी जान तहाँ के॥२०॥
महल माहिली बातें लावें मरमिनु बांच सुनावें।
गौर श्याम की अकथ कथा गूंगे ज्यौं सैंन जतावैं॥
कहा जानैं नौमी जु बापुरे अनुरागिनि ही भावें।
वृन्दावन हित रूप सवादी तिनकौं प्रेम छकावें॥२१॥
रसके देस उपासी वासी इनकी सृष्टि जु न्यारी।
कहा मिलैं सुख ह्वै है तासौं निर्गुन ध्यान अहारी॥
यह धाप्यौ रस चरित अमी पी वह जु कूप जल खारी।
बृन्दावन हित रूप रसिकजन रहनी कहनी भारी॥२२॥
खेलत जहाँ जुगल कुंजनि में चित्त न तहाँ चलायौ।
सतसंगति करि हीन पंगु रस घाटी पंथ न पायौ॥
स्यामा स्याम कमल पद संगी तिन सौं मन न मिलायौ
वृन्दावन हित रूप न परस्यौ घाट बिहार [illegible]॥२३

सब सुभ भोगी गौर श्याम कानन भंडार भर्यौ है।
अति कमनी कुँजनि क्रीडत रस अमलिनु अमल पर्यौ है॥
हैं अधकारिनि संधि सहेली कछु इक प्रगट कर्यौ है।
वृन्दावन हित रूप कृपा दय पायौ तिन उचर्यौ है॥२४॥
रूप चोट प्रीतम उर लागी पुनि पुनि सूर सरा है।
प्रेम खेत कौ चलन बांकुरौ वही लग्यौ पुनि चाहै॥
मन कौ घाव दिखावै काकौ मन ही मन अवगाहै।
वृन्दावन हित रूप बान बिंध्यौ तदपि नाहिं कराहै॥२५॥
बेपरवाहि खिलारी पुनि पुनि चोट तहांई डारै।
सांचौ सूर सांवलौ अपनौ पग न पिछौंडौ टारै॥
ऐसौ प्रेम खेल अति बांकौ इत उत कोऊ न हारै।
वृन्दावन हित रूप रीझ घाइल पुनि ताहि सम्हारै॥२६॥
दीन अधीन चुटीलौ प्यारी प्रीतम मिल्यौ निमानी।
गुन गरबे बरनौ जु कहाँ लगि तैं अबहूँ नाहीं जानी॥
तुहि सिख देत देत री अतिलडि मेरी मति बौरानी।
वृन्दावन हित रूप जपत सो तेरे गुननि कहानी॥२७॥
जाहि कहत तू प्रान भाँवतौ तासौं ऐंड जु ठानै।
पाछे लग्यौ जु आवै ताके मन की तू नहिं जानै॥
सबै अंग प्रीतम के प्यारी तेरे हाथ बिकानैं।
वृन्दावन हित रूप महा गरबीली बात न मानै॥२८॥
अनाकनी दै बात सखी की सुनी न उत्तर दीयौ।
मरमी जानि आपने हित की धाप अमी सौ पीयौ॥
प्रीतम नेह समुझि कै गरुवौ सजनी कर गहि लीयौ।
वृन्दावन हित रूप प्रेम अति बली बिलोयौ हीयौ २६

मणि सुहाग जगमगति जराऊ बेंदी भाल लसी है।
वदन मयंक प्रिया कौ वा शशि की मनु करत हँसी है॥
अहा कहा चटकीली श्यामा मोहि दृगनि दरसी है।
वृन्दावन हित रूप लाल के उर दृग माहिं वसी है॥३०॥
चिबुक मध्य राजत जु श्यामबिंदु मनु बैठ्यौ अलि छौंना।
कमल पराग पिवत है सादर धरि जु रह्यौ मुख मौंना॥
किधौं शोभा कौ निकर समझि कै विधि नैं दियौ डिठौंना।
वृन्दावन हित रूप श्याम मनके वस करन जु टौंना॥३१॥
नेह गली प्रीतम अवगाहैं जामैं बाँकी घाटी।
यह विधना की सृष्टि न विद्या जो कोउ पढ़ै जु पाटी॥
वृन्दावन हित रूप लगौहै मन न कपट की टाटी।
न्याय प्रिया मन करि जु आदरैं कबहुं न देहि उचाटी॥३२॥
नख सिख किये सिंगार मोहिनी देहुँ सु उपमा को है।
जाकौं कहत मदन कौ मोहन ताहू कौ मन मोहै॥
त्रिभुवन त्रिया मुकट मणि तिनकी कानन रानी जोहै।
वृन्दावन हित रूप घटासी चढ़ी अटापर सोहै॥३३॥
नेही नरम गरम नहिं होई सदा रहै उर सीरौ।
आदर अधिक प्रिया कौ राखै देइ बिछाइ पट पीरौ॥
नेही जगत काच मनियां यह जगमगाय रह्यौ हीरौ।
वृन्दावन हित रूप बिक्यौ सो मुख तें बोलै धीरौ॥३४॥
जुगल हिलग हिय संधि सहेली ताही सुख मैं झूलैं।
अष्ट पहर षट रितु तिनकौ उर कमल कृपा जल फूलैं॥
भोरी कुंवरि किशोरी गोरी गनैं प्राण समतूलैं।
वृन्दावन हित रूप महल की मिही टहल अनुकूलैं ३५

प्रीतम रहैं प्रिया मन लीयें प्रिया लियें मन पीकौ ।
सखी रहें दोउनि मन लीयें रङ्ग बढ़ै अति नीकौ ॥
कानन छबि नित नई दिखावै प्रेम बढ़ै नित हीकौ ।
वृन्दावन हित रूप विहारिनि सकल तियनी सिर टीकौ॥३६॥
झूमैं भुमैं रूप रस अमली और अमल नहिं भावै ।
सहै न पलक परन कौ अन्तर पीछै लाग्यौ आवै ॥
आपुन रूप गुमानी जद्दिप तद्दिप सुधि बिसरावै ।
वृन्दावन हित रूप रसिक चूड़ामणि न्याय कहावै ॥३७॥
परम कौतिक परम जान मणि कियौ प्रेम ने भोरौ ।
सखियनि टहल बटावै प्यारो मानै अधिक निहोरौ ॥
छिनहूँ सहै न अंतर इत उत भलौ बन्यौ है जोरौ ।
वृन्दावन हित रूप बारनै लैं छबि पै तृन तोरौ ॥३८॥
कहा जानैं निंदक जु कुतर्की रसिक जननि कौ पैंडौ ।
रस छाकिनु ही सूधौ सूझै विमुखनि ऐंडौ बैंडौ ॥
गौर श्याम खेलत जु कुंज थल सुख की परत उलैंडौ ।
वृन्दावन हित रूप सबादिनु दृग मग परथौ उरझैंडौ ॥३६॥
रस की सीर कुंज थल उपजी दृग के करनि बटोरैं ।
लोभी ललित किशोर बुद्धि बल सुख विलसन कौ जोरैं॥
दोऊ कुशल खिलारी छिन छिन मन निवृत्ति टकटोरैं ।
वृन्दावन हित रूप प्रीति की ग्रन्थि छुटति नहिं छोरैं ॥४०॥
आज कौ छबि वरनै बाला बैंनी कटि जु लपेटी ।
ओरनियाँ के छोर मोरि सिर धरैं चलति हैं टेढी ॥
टेढे बचन कहति प्रीतम सौं मन डारति ओरेढी ।
वृन्दावन हित रूप कहाँ खसि परी श्रवण तें ढेढी ॥४१॥

कुंज बड़ौ है नगर हमारौ प्यारी जू तरहि बसावौ।
सेज हमारौ भवन तहाँ मंगल रस महा दिखावौ॥
तुम छाकौ जा सुख में तामें मोहूँ कौं जु छकावौ।
वृन्दावन हित रूप विहारिनि लाड सहित अपनावौ ॥४२॥
पहिरें सूही सारी प्यारी जामें झल्लैं पल्लैं।
अतलस कौ अतरौटा मोति लावनि लागि जु हल्लैं॥
पीत दरयाई निरखि कंचुकी थानें मदन दहल्लैं।
वृन्दावन हित रूप नैंन पैं फँसे अनत नहिं चल्लैं ॥४३॥
झुकी चन्द्रिका ऐसें प्यारी पिय मन गहलौ कीयौ।
आनन त्रिधु मनु कलस सुधा कौ साधि सीस पर लीयौ॥
राहु लग्यौ आवतु है पाछें ताहि न रंचक दीयौ।
वृन्दावन हित रूप लाल अनुरागी नैंननि पीयौ ॥४४॥
झमकि चलनि में कैसी छबि सौं हालत है सिर जूरौ।
सम्पति बहुत अङ्क लीयें यह वदन कलाधर पूरौ॥
अँग अँग सोभा रतन जौहरी परखन प्रीतम रूरौ।
वृन्दावन हित रूप दिपतु यह कर सुहाग मणि चूरौ ॥४५॥
तुम बन चलौ अनकनी दीये हुलसै पिय लखि हीयौ।
या सोभा कौ तें जु अतिलडी कबहूँ सुख नहिं लीयौ॥
कानन मांहि जिते सब थिरचर पोष सबनि कौ दीयौ।
वृन्दावन हित रूप गुमानी प्रीतम सो बस कीयौ ॥४६॥
तो उर प्रीति किती है प्यारी काहू मित न करी है।
मेरौ ही सौ तन है तेरौ कहाधौं संधि धरी है॥
विद्या निकर चातुरी सीवां याही वपु जु भरी है।
वृन्दावन हित रूप और नहीं त्रिभुवन रोर परी है ॥४७॥

तन सुथराई तेरी स्यामा मन अचिरज उपजावै।
रस सोभा सुख सम्पति ऐसी क्यों इहि तन जु दुरावै॥
या वैभव की लोक प्रशंसा कहत कहत नहिं आवै।
वृन्दावन हित रूप अहा मन मिलहूँ थाह न पावै॥४८॥
मन सागर तन अति जु ऊजरी गुन गरुवौ मित नाहीं।
चरन अलंकृत करत जु अवनी जहाँ जहाँ चलि जाहीं॥
वरनौं किते एक रसना जे खेल रचित बन माहीं।
वृन्दावन हित रूप मतगुनो दरसत पिय गरवाहीं॥४९॥
कहा कहौं लाड छकनिता छिनकी नैना कछु लजौंहे।
पिय समुझैं कैं हौं ही स्वामिनि जेहि कारन जु हंसौंहे॥
प्रीतम हिये चटपटी छवि निरख्यौ चाहे रहि सौंहे।
वृन्दावन हित रूप अमल दृग छाके निपट लगौंहे॥५०॥
आधीनी आसक्ति लाल की जो कछु कहौं सो थोरी।
बेपरवाहि निपट गरवीली तू सुनि कुंवरि किशोरी॥
सँग लगि चलै पछिमनौ रहि कें बंध्यौ नेह की डोरी।
वृन्दावन हित रूपी गुमानी लोक मुकटमणि जोरी॥५१॥
मिही प्रीति की गली साँकरी मुरलीधर ही मरमी।
प्रान भांवती करै सो आदरैं गहे रहैं चित नरमी॥
शुद्ध प्रेम दोऊनि खिलावैं नहीं कपट की गरमी।
वृन्दावन हित रूप भेद समुझै जो हित की धरमी॥५२॥
हिय हिलगनि गाढी है इत उत सुमति सहेली तोलौ।
कहि आवै काहू पै तौ तुम न्याइ न्याइ ही बोलौ॥
परखत बनी न अब लगि नितही लारैं लागी डोलौ।
वृन्दावन हित रूप सयानी यह मन भरम जु खोलौ॥५३॥

प्रीति अकृत सबै दरसति है कहा कहै कोउ गहली।
जुगल कोस उर संपति की कर सकै सम्हार न पहली॥
नई नई बढ़ति रहति है छिन छिन जिन जानैं तू सहली।
वृन्दावन हित रूप प्रेम रहै दोउनि की मति दहली॥५४।
यह रस ब्रह्मलोक पाताले अवनी हूँ दरसत नाहैं।
या रसकौं कमलापुर हू के तरसत हैं मन माहैं॥
यह रस रासेस्वरी कृपा तैं प्रेमी जन अवगाहैं।
बृन्दावन हित रूप जुगल रहैं या रस भरे उमाहैं॥५५।
यह रस सृष्टि पलति कानन की निज सजनी अधिकारी।
जाचौ रे जाचौ अनुरागी सो कृपाल अति भारी॥
ताकी होत सुदृष्टि अंगीकृत करि हैं विपिन विहारी।
वृन्दावन हित रूप सेइ दुर्ल्लभ रस गली जु न्यारी॥५६।
जो पथ रसिक महा मति जानैं रासेश्वरी जनायौ।
कहैं सुनैं अनुसरैं सुमति नर वांछित सबनै पायौ॥
कुमतिजु तर्क उठावैं अजहूं दई जिन्हैं भरमायौ।
बृन्दावन हित रूप कृपा-जनितनि ही के उर भायौ॥५७।
दूलह दुलहिन हाथ डोरना बांध्यौ राखति सजनी।
यह दिन इनकौ प्यारौ लागै याही सुख की भजनी॥
खेल खिलावैं मंगल गावैं सुनैं रससीर उपजनी।
वृन्दावन हित रूप छके छबि नित सुहाग की रजनी॥५८।
विपुल प्रकाश निरखि री सजनी कमनी कुञ्ज मँझारा।
अस उदार गौरंग बिना को बरषै आनन्द धारा॥
सुरत सूर उर चाह सतगुनी ललकत बारंबारा।
वृन्दावन हित रूप छके दोउ अद्भुत रंग बिहारा ५६

अचरज धाम नाम वृन्दावन रसमय सृष्टि जहाँ है।
अचरज गौर स्याम रस भोगी संतत सदा तहां हैं॥
अचरज रूप सहेली जे दंपति सेवा सुख चाहैं।
वृन्दावन हित रूप अलौकिक यह रस अनत कहाँ हैं॥६०॥
बेपरवार अनन्य स्याम स्यामा पद के अनुरागी।
और सुखनि जाचैं नहिं राचैं या रस में मति पागी॥
हित बिग्रह धरि जो उपदेस्यौ धनि धनि सो बड़भागी।
वृन्दावन हित रूप चटपटी जुगल मिलन हिय लागी॥६१॥
राधा लाल प्रेम पर्चाये धनि ते रसिक प्रवीना।
तिन पद परसि रसग्य भये बहु जगत उजागर कीना॥
तिहिं मारग मैं औगुन चुनि चुनि काढ़ैं निपट कमीना।
वृन्दावन हित रूप भाव हीनें निंदक जु मलीना॥६२॥
गाडर कौ ब्यौपारी काहे जाइ सुलावैं घोरें।
चाहैं काच मूदरा सो जौहरीनु क्यौं टकटोरैं॥
पद्धिति रसिक मिलै न बुद्धिबल उक्ति जुक्ति बहु जोरैं।
वृन्दावन हित रूप फुरैं नहिं निंदक पुनि मुड़ फोरैं॥६३॥
खाल बार की छोलैं कपटी खरचैं बहु चतुराई।
मिश्री स्वाद बखानैं कबहूँ देखी नहिं मुख खाई॥
रसिक सङ्ग नहिं कीयौ हीयौ भाव न भीज्यौ भाई।
वृन्दावन हित रूप न पर्च्यौ असहन कुटिल महाई॥६४॥
औरै समुझ लगन कछु औरै रहन कहन कछु औरैं।
चतुराई करि जुक्ति मिलावैं नहीं ठिकानौ ठौरैं॥
धर्म मर्म नहिं समुझैं चाहैं भये रसिक सिरमौरैं।
वृन्दावन हित रूप भाव रस नि रीस करि दौरैं ६५

वाला नैंन विशाशा माला सुरझावति है ठाढ़ी।
पीत कंचुकी लसति हिये पैं खमकि बनी है गाढ़ी॥
इकटक रसिक लाल अवलोकत हिलग हिये अतिबाढ़ी।
वृन्दावन हित रूप बिना मित तासौं अङ्ग अङ्ग आढ़ी॥६६॥
ठाढ़ी रहिरी लाड़ गहेली हौं माला सुरझाँऊ।
वेशरि नथकी गूंझ जु ढीली ताहू सुविधि बनाऊँ॥
ऐंडी बैंडी चाल छाड़ि दै सूधे चलन सिखाऊं।
वृन्दावन हित रूप फूल की माल रीझी मैं पाऊं॥६७॥
स्यामा की भांवती सहेली काकौ मन मैं लाऊं।
ठाढ़े करिकें दीन बचन प्रीतम के वदन कहाऊं॥
कबहूँ देखी नांहिं अपूरब ऐसी कुंज दिखाऊं।
वृन्दावन हित रूप नाम राधा पंछीनु पढ़ाऊं॥६८॥
अलबेली को मन अलबेलौ कौतिक देख अरूझैं।
निज सजनी की ठोड़ी गहि गहि पुनि पुनि ताकौं बूझैं॥
प्रीतम अनुरागी सुनवे कौं मन मन अधिक अमूझैं।
वृन्दावन हित रूप अतिलड़ी अरवी गही जु मूझैं॥६९॥
जाइ राखी कौतिक जु दिखायौ मुकर महल के मांही।
एक सरूप अनेक दरसि परे जहौं तहौं परछाहीं॥
चतुर महा घेरी जु भुराई मन धीरज धरै नांहीं।
वृन्दावन हित रूप मूंदि दृग बैठी सखी गरवाहीं॥७०॥
या कौतिक तें धापी सजनी हौं भांवती जु तेरी।
मोसी हां अनेक चल पिय पै राख बड़ाई मेरी॥
हँसत लतनि के ओलैं प्रीतम आई प्रिया दरैरी।
वृन्दावन हित रूप बढि परी इत उत प्रीति घनेरी ७१।

या कानन की मोहन लीला छिन छिन नई नई दरसै ।
गावत सुनत और वरनत रसना अमृतही वरसै ॥
या विधना की सृष्टि न्यारी समुझन देखनकौं तरसै ।
वृन्दावन हित रूप रसमई परसत हिय सुख सरसै ॥७२॥
रसिकनि जान्यौ मान्यौ सर्वसु यह रस सबतें भारौ ।
नीलांबर धरनी गौरांगी पिय पीतांबर वारौ ॥
रूठौ तूठौ कोऊ सदा. सेव्य यह इष्ट हमारौ ।
वृन्दावन हित रूप कुञ्ज कमनी जो क्रीडन हारौ ॥७३॥
अंग सुथरता वचन मधुरता प्रीति पारखू भारी ।
परम भांवती मन भावंता कानन निपुन विहारी ॥
जाकी लीला लोक मोहनी रसिकनि लागी प्यारी ।
वृन्दावन हित रूप सम्पति दंपति जहां विस्तारी ॥७४॥
हंसनि भावै मानसरोवर कागनि भावै मोरी ।
क्रीडा कुंज रुचै रसिकनि रुचै कुत्सित कर्म अघोरी ॥
असहन रुचै पराई निंदा रुचै चोर मन चोरी ।
वृन्दावन हित रूप धन्य जिन सुमति जुगल रस वोरी ॥७५॥
अहा कहा आनन्द वरषि पिय हिय धर करी हरी है ।
गौर घटा नित रहै ऊनई रंग अनेक भरी है ॥
अति उदार मुरलीधर कौं सुख देवै बानि परी है ।
वृन्दावन हित रूप महारस लागी रहत झरी है ॥७६॥
गली भली छवि भई उपजनी चरन धरति गौरंगी ।
प्रीतम उर आनन्द भरति है धन्य सुमति अरधंगी ॥
लोक मुकटमणि कंत महाबली बस कीयौं भ्रभंगी ।
वृन्दावन हित रूप रसिक नागर रसकेलि प्रसंगी ७७

सोधैं भीनी चोली नागरि पहिरे फूलनि माला।
नीलकमल कर लियें फिरावति अति गुनिवंती बाला॥
मोरति वदन भीर भँवरनि लखि निरोति नैंन विशाला।
वृन्दावन हित रूप रहे छकि रूप गुमानी लाला॥७८॥
सनैं सनैं आये नियरे पियरे पटओर दुरावैं।
पलक परन नैंननि पन लीयौ ग्रीवा रीझि डुलावैं॥
अति आसक्त स्याम सुकृती सो मन वांछित सुख पावैं।
वृन्दावन हित रूप नेह पथ सांचौ सुभट कहावैं॥७९॥
रूप धसक की कसक करेजा पीतम नीकैं जानैं।
मनही मन जु सराहैं सूरा मुख करि नाहिं बखानैं॥
रसिक लाल की लगन माहिली प्यारी ही पहिचानैं।
वृन्दावन हित रूप प्रीति विचरावति कपट जु थानें॥८०॥
सुख दायक लाइक ऐसे बिनु आप दीन को मानैं।
खेलैं खेल अनेक ताकि पुनि डारैं चोट निमानैं॥
कुटिल कटाक्ष बान सहि सनमुख तन मन रीझि बिकानैं।
वृन्दावन हित रूप अमल कौ अमली ही सुख जानैं॥८१॥
नित दूलह नित दुलहिनि नित नित चाह नवेली दरसै।
नित नव नेह सेहरे सोहैं नित नव मंगल सरसै॥
नित सुहाग की रैंन मनावैं नित गरुवौ सुख वरसै।
वृन्दावन हित रूप नयौ नित उपमा सींव न परसै॥८२॥
चतुरा एक सहेली चाहति चरन महावर दीयौ।
तन चटकीली मन जु रंगीली देखौ ताकौ कीयो॥
भरी अधिक अभिलाष फिरति है रस मादिक सो पीयौ।
वृन्दावन हित रूप गुन भरी निधरक जाकौ हीयौ ८३

वह तो परम प्रीत की भूखी रूखी सो न पत्याई।
टहल तुम्हारी की अभिलाषा जा मन रहत सदाई ॥
लै आऊं प्यारीजू अबहीं रीझौ तेहिं सुघराई।
वृन्दावन हित रूप अतिलड़ी दै आदर जु बुलाई ॥८४॥
चटदै आइ गई चटकीली भरयौ महाबर चरना।
चित्र अनूप बनाए मनदै सबहिनु के मन हरना ॥
देखि देखि रीझी प्यारी सांवरे बिलच्छन बरना।
वृन्दावन हित रूप मौन गहि रही न हांहू करना ॥८५॥
गई पलाइ सघन कुंजनि में रीझि दैन जब बोली।
लावौ खोजि कहति हँसि नागरि उन मन गांसन खोली ॥
अतरौटा सारी देहु मेरी सौंधें भीनी चोली।
वृन्दावन हित रूप चातुरी सींव बुद्धि में तोली ॥८६॥
मन भावंता मेरौ सजनी इहिं मन थाह न पाई।
रोम रोम छबि पूरित मेरी तदपि भूख सवाई ॥
लाड परावधि नेह परावधि इक मुख कही न जाई।
वृन्दावन हित रूप प्रेम में छाक्यौ रहै सदाई ॥८७॥
मो प्रीतम की यहै बड़ाई मो सुख सुखी निमानौं।
जो अभिलाष उठै जा छिन ताकौ नीकें पहिचानौं ॥
मैं मन प्रीतम कौं दीयौ पिय मन मो हाथ बिकानौं।
वृन्दावन हित रूप सहेली तोसौं मरम बखानौं ॥८८॥
रंग महल की रसबतियां प्रीतम जानै कै प्यारी।
कै जानैं दुहुँ संधि सहेली इहिं सुख बिलसन हारी ॥
तन मन अदल बदल छिन छिन अस प्रीति न कहूं निहारी।
वृन्दावन हित रूप रस मई लीला पै हौं वारी ॥८९॥

गरुवौ धाम नाम पुनि गरुवौ गरुवौ रसजु महाई।
गरुवे खेल रचत हैं दंपति कहत कह्यौ नहिं जाई॥
कौतिक कुंज नैंन मो देखै विधि रसना न बनाई।
वृन्दावन हित रूप स्वाद यह गूंगे की जु मिठाई॥६०॥
लोचन लोल ठुमुकि पग राखति चलत देखि परछाहीं।
छबि छाकी इहिं विधि अलबेली प्रीतम के गरबाहीं॥
रहि रहि जाति खगनि के कौतिक ठाढी जहां तहांहीं।
वृन्दावन हित रूप बहुरि उरझति रस बतियनि माहीं॥६१॥
चरन चिह्न अवनी जु अलंकृत मनु सिर आप दई है।
भाग्य भरी लागति अति कमनी हरषित हिये भई है॥
रीझि प्रकासति संपति अपनी नित नित नई नई है।
वृन्दावन हित रूप विलसि कानन सुख सीर बई है॥६२॥
प्रीतम दृगनि गड हैं सजनी उपरैंनीके पल्ले।
मनु छबि उमगि चली हैतनतैं पवन लागि जब हल्ले॥
चखनि देति पुनि चौंधी दमकनि हाथ मणिनु के छल्ले।
वृन्दावन हित रूप बली नैं मदन सुभट दल मल्ले॥६३॥
उच्च भाल पर बैंदी मनु ससि अंक लसै ससि छौंना।
ता आगे जु मीन द्वै चंचल मानों रुचिर खिलौंना॥
छूटी मुख मंजुल जु मयूखैं शोभा बढ़ी अगौंना।
वृन्दावन हित रूप लाल दृग ओक जु अभी अचौंना॥६४॥
रूप अमल कौं अमली पीवत पीवत कबहूं ना धापैं।
प्यावनहार उदार अहा भरि भरि कै भाजन आपै॥
लाउ लाउ यौं त्रिषित वदन तें बारंबार अलापै।
वृन्दावन हित रूप गरीबी गहि न देहि संतापै ६५

कबहूं अनखि रहति कबहूं ग्रीवां प्रसन्न ह्वै मोरैं।
कबहूं भौंह चढ़ावैं कबहूं दृष्टि जु सनमुख जोरैं॥
कबहूं अधर रहैं रमि मुसिकनि प्रीतम कौ चित चोरैं।
बृन्दावन हित रूप कबहूं पिय गहि गहि चिबुक निहारैं॥९६॥
निपट अडीलौ जाकौ हीयौ रूप नरम करि दीयौ।
नेह आंच लगि ढरयौ रांग ज्यौं बली निमानौं कीयौ॥
ऊपर चटक मटक जाकौ उर ढांपि प्रेम नैं लीयौ।
बृन्दावन हित रूप प्रीति गाहक न लोक अस बीयौ॥९७॥
मनदूबरौ रूप सौदागर नैंननि भूख घनेरौ।
देखत देखत त्रिपित न मानैं तन बजार दई फेरौ॥
सौदा करत न धापै कबहूं रचै बुधिबल बहुतेरौ।
बृन्दावन हित रूप बगीचा डेरा दीयौ नेरौ॥९८॥
या कानन नित रङ्ग बढ़ावनि सकल सुखन कौ धामा।
गरबीली अरबीली तरुनि मुकटमणि सुन्दरि स्यामा॥
मुरली मैं आराधत छिन छिन हौं बलि राधा नामा।
बृन्दावन हित रूप रोम पर वारौं कोटिक भामा॥९९॥
मदन मान डारयौ लतखूंदनि धनि तू कानन रानी।
अमृत महिमा फीकी लागी सुनि तो मीठी बानी॥
तेरौ जस गावत फीकी लागी लोकनि बधुनि कहानी।
बृन्दावन हित रूप भये मुरलीधर तो गुनगानी॥१००॥
राधासी को रूप आगरी को रस विलसन हारी।
काकौ कंत गुनीलौ ऐसौ जैसौ कुंज बिहारी॥
कानन कीसी कहां रजधानी सब विधि सृष्टि निहारी।
बृन्दावन हित रूप कहां अस सजनी सेवन हारी॥१०१

रसमय धाम सृष्टि जहां रसमय कथा अलौकि न्यारी।
रासेश्वरी कृपा तें जानें और नहीं अधिकारी ॥
बुधिबल करत करि गये करि हैं पंडित और अनारी।
वृन्दावन हित रूप न परचे नीरस तर्क विकारी ॥१०२॥
भजन भावना हिये न परसैं बचन रचैं चतुराई।
रस मर्मिनु सौं तर्क उठावैं नीरस निलज महाई ॥
प्रेम नगर की डगर न परसैं तजैं न उर कुटिलाई।
वृन्दावन हित रूप न परचे खरखूंदनि जु मचाई ॥१०३॥
गौर श्याम के भजन न भीज्यौ प्रेम नहीं उर कपटी।
कूंवां परयौ अकास उड़त खग तिनकौं करैं जु झपटी ॥
रसिक कहावै सोई जाकै दंपति मिलन चटपटी।
वृन्दावन हित रूप प्रेम की जानौं सृष्टि अटपटी ॥१०४॥
महली की गति महिली जानैं लखै न बाहिर बारौ।
नृप की रहनि कहनि क्यों पावै भेड चरावन हारौ ॥
गौर स्याम चरितनि कौ मरमी धरमी कौ व्रत भारौ।
वृन्दावन हित रूप रसिक जन कौ रस गहर अखारौ ॥१०५॥
मन चढ़ि गयौ प्रेम के छाजैं उतरत नाहिं उतारयौ।
पिय मन लियौ चढ़ाइ तहां कौतुक ही देखत हारयौ ॥
और खेल विसरायौ ऐसौ खेल जहां विस्तारयौ।
वृन्दावन हित रूप मगन भयौ फिरि पाछयौ न निहारयौ ॥१०६॥
मन जीतन कौं प्रेम वली है जो कृपाल उर आवैं।
याके चरितनि सोई जानैं जाकौं खेल खिलावैं ॥
कहा जानैं नीरस अनभेदी गडि गडि बात बनावैं।
वृन्दावन हित रूप छुटीलौ सो याके गुन गावैं ॥१०७

बसत सदेह लाल प्यारी हिये कानन जाकौ थानौं।
आराधत हैं रसिक अगह फल दाइक लाइक जानौं ॥
सांचौ प्रेम अलौकिक जहाँ तहाँ जुगल भजन नीसानौं।
वृन्दावन हित रूप गहर रस बूडनि कहा बखानौं ॥१०८॥
प्रीतम दृष्टि रहति ही ऊंची अपनी छबि में छाके।
प्रिया वदन अविलोकत रहि गए नीचे नैन लला के ॥
चाव चौंपसौं कुंज दिखावत अगमानी भये ताके।
वृन्दावन हित रूप गडे दृग प्रीति रिनी भये जाके ॥१०९॥
जुगल रहसि रस क्यों परसै भरे जग झूठे रस फक्के।
रसिक जननि संगति न रुच्यौ खाए न बुद्धि रस धक्के ॥
रस पद्धति के धर्मिनु निंदै हिय खाली जु उचक्के।
वृन्दावन हित रूप छके जे धर्मिनु मिलि भये पक्के ॥११०॥
देखा देखी रसिक न होई है रस मारग बंका।
असहन निंदा करत पराई कबहूं न मानै संका ॥
कहा सिंह की सरवर करि है गीदर फिरै जु रंका।
वृन्दावन हित रूप छक्यौ जिन दियौ अनन्य पथ डंका ॥१११॥
रसिक जननिकौ मारग बांकौ गिरै जहां अभिमानी।
सुहृद सीलता प्रेम द्रवै उर रस की यही निसानी ॥
भावक जननि संग सुधरयौ तिन समुझी प्रेम कहानी।
वृन्दावन हित रूप रसमई कुंज केलि कछु जानी ॥११२॥
हित दातार देहिं रस अनुभव ढाहि कपट के कोटा।
वह रस अविकारी जिनि देहि विकारी जग रस ओटा ॥
महत जननि के विना अनुग्र; विना प्रेम उर चोटा।
वृन्दावन हित रूप दूरि है गौर स्याम कौ जोटा। ११३

सिर सांटै जु कुंज रस वैभव नाहिंन हांसी खेला।
वाही ठौर बसावै मनकौं हौंन न देहि अकेला॥
भींज्यौ भजन रहै निसि वासर गुरु पूरे कौ चेला।
वृन्दावन हित रूप निरखि जब जुगल रहसि रस मेला॥११४॥
त्रिभुवन में एकै सुनियत है जुगल प्रेम रस हट्टी।
सौंदागर हैं रसिक तहां के रस जु वानगी चट्टी॥
प्रेम खिलावै त्यौं त्यौं खेलत समुझत दोउ रस गट्टी।
वृन्दावन हित रूप कहां यह जहां विमुखता टट्टी॥११५॥
जा मन जुगल भावना लाग्यौ दरसि परयौ छबि लटकौ।
धूम धाम यह जग विवाद कौ सहि न सकै मन खटकौ॥
जिन पायौ रस स्वाद रुचै परपंच न ताहि कपटकौं।
वृन्दावन हित रूप चुभ्यौ चित गौर स्यामकौ चटकौ॥११६॥
मेरौ कह्यौ न मानति नवल धारि जु रही मन अरवी।
ज्यौं ज्यौं लाड़ करत प्रीतम तू त्यौं त्यौं अधिक जु गरवी॥
मान राख मुरलीधर पिय को कहि न बात मुख करवी।
वृन्दावन हित रूप भयौ तौ लाल दृगनि कौ परवी॥११७॥
तो मन लिये रहत है तापै चढ़ी रहत भ्रू भंगी।
मोहन मदन बदन तो ताकतु परम रसिक नवरंगी॥
कमल जाति जड़ सोउ आदरतु भँवर आपने संगी।
वृन्दावन हित रूप कहत तुहि मुरलीधर अरधंगी॥११८॥
गौर स्याम मिलि कुंज विराजौ अतुलित सख होइ मोकौं।
प्रीतम करै ढिठाई तब हौं गूढ़ वचन कहि टोकौं॥
कोऊ सखी न जाइ अगमनी सबकौं बुधि बल रोकौं।
वृन्दावन हित रूप रंध्र मग कमनी केलि विलोकौं ११६

तू जब बाट चलति हे प्यारी धरा हरा पग करई।
ऐसी लसति ललाई मनु अनुराग सु उमग्यौ परई॥
बार-बार अवलोकत प्रीतम मन धीरज नहिं धरई।
वृन्दावन हित रूप अति बली तन सहजोर उबरई॥१२०॥
औरनि के प्रीतम सुनियत जिनकौ सुभाव है भौंड़ौ।
तेरौ प्रीतम सकुचीलौ मन लीयें चलत पिछौंड़ौ॥
रसिक मुकटमणि न्याइ कहावै कोविद नेह कनौंड़ौ।
वृन्दावन हित रूप रीझनौ बिलसत हैं रस औंड़ौ॥१२१॥
तुम सुहाग मणि लोक उजागर यामें नाहिन सक री।
तनक चढ़त भुव भंगी प्रीतम हिये होइ धकपक री॥
लाल चित्त वित तोलत छिन-छिन अपनी बुधि करि तकरी।
वृन्दावन हित रूप फिरावति जैसे करि गहि चकरी॥१२२॥
अभिमानी रति नाथ सखी री रह्यौ गरब मन भरिकैं।
काहू दृष्टि न लावै अपनें बिपुल पराक्रम करिकैं॥
कुंज महल की पौरी सेवत भयौ दीन मन डरिकैं।
वृन्दावन हित रूप चोट सहि उबरयौ पाइनु परिकैं॥१२३॥
छिन-छिन छबि बदलति है इत उत छिन-छिन बाढ़ति ईठी।
हौं मन भायौ लाभ लहत हौं इत उत करति बसीठी॥
छिन-छिन नइ-नइ केलि मनोहर इन दोउनि की डीठी।
वृन्दावन हित रूप रस छकी बात लगति मुहि मीठी॥१२४॥
मनहूं सौं दुबकाऊँ बतियाँ पुनि बिन कहे बनैं ना।
जो गरुवौ सुख देख्यौ चाहौ तौ देखौ मो नैंना॥
गौर-स्याम राजत सेज्या पर ओढ़े इक उपरैंना।
वृन्दावन हित रूप भवन सुनि रति रन बदत जु बैंना १२५

पढ़े प्रेम चटसाल सखी ये अन ऐनी रस पटियाँ।
आपुन छकैं छकावैं औरनि चलत अनोखी वटियाँ॥
अरधङ्गी अनुकूल लाल सँकै न मदन की सटियाँ।
वृन्दावन हित रूप पहेरी प्रेम रचै सु उलटियाँ॥१२६॥
या कानन में महा गुमानी लाल करत हैं फेरौ।
गौरङ्गी मन लिये चलत डारत बातन उरझेरौ॥
झूमैं घूमैं प्रेम अमल जानैं नहिं साँझ सवेरौ।
वृन्दावन हित रूप छकलियौ लूटि मदन कौ डेरौ॥१२७॥
गौरङ्गी ही सुधन बटोरयौ है रस गाहक पूरौ।
मदन जीत सिर लसत सेहरौ फिरत है सबल गरूरौ॥
वृन्दावन हित रूप अतिलड़ी अतिलड़ सब गुन पूरौ।
आठ पहर कानन में सजनी रहत प्रेम धमतूरौ॥१२८॥
प्यारी प्रान सुधन है मेरौ देखेही सचु पाऊँ।
दूजो नहिं अवलम्ब और जो सजनी तोहि बताऊँ॥
सर्वेश्वरि बन रानी ताकौ हौं दूलह जु कहाऊँ।
वृन्दावन हित रूप रिझावन मुरली में रस गाऊँ॥१२९॥
प्रेम पन्थ की गली साँकरी मरमी लाल बिहारी।
जतन अनेक रचै पुनि निकसै वाही गली मँझारी॥
सुद्ध सनेह दुहनि खिलावत हौं नित निरखन हारी।
वृन्दावन हित रूप गहर रस विलसन के अधिकारी॥१३०॥
प्रीतम प्रिया मान लहि फूलें काहू दृष्टि न लावै।
भाँति-भाँति कौ सुख अनुरागी इन कुंजनि में पावै॥
रूप गुमानी की आधीन करि नागरि नाच नचावै।
वृन्दावन हित रूप जाल मन फँस्यौ न निकस्यौ भावै॥१३१॥

न्य कुंवरि जू तेरौ प्रीतम सीलवंत मिठ बोला।
रम प्रवीन दीन ह्वै जानैं तो चित ग्रन्थि जु खोला॥
गुन परखन कौं तू जु जौहरी यह रस रतन अमोला।
वृन्दावन हित रूप छक्यौ झूलत आनन्द हिंडोला॥१३२॥
न सौं करत खवासी प्रीतम लागि चलत है पैंडैं।
टकि चरन राखति जु भाँवती निरखि तजत पल मैंडैं॥
ऐसी रस लीला जु रचत हैं विधि रचना जु पलैंडैं।
वृन्दावन हित रूप रङ्ग रस सुख की परति उलैंडैं॥१३३॥
भावंती कौ मन भावंता है सब भाँति रङ्गीलौ।
बेहद रस क्रीड़ा जाकी लखि रतिपति मद भयौ ढीलौ॥
नख सिख भर्यौ रसिकता नागर बन्यौ रहत चटकीलौ।
वृन्दावन हित रूप राधिका सुधन पाइ गरवीलौ॥१३४॥
अति अनुरागिनि सजनी कुंजनि कौतिक व्याह रचावैं।
सूहे वसन सजैं दोउनि तन मौरी मौर धरावैं॥
मरुवट वदन डोरना कर वर फूली मङ्गल गावैं।
वृन्दावन हित रूप नेह की भाँवरि सुविधि फिरावैं॥१३५॥
घूँघटरौ नहिं खोलैं वरनी बना करै अति ढीठी।
पिय कर टारैं वदन दुरावैं अति लजवंती दीठी॥
उम्फलनि लाड दुहूँ दिस यह रस रीति लगै मुहि मीठी।
वृन्दावन हित रूप सखी मन मिल सौं करत वसीठी॥१३६॥
प्रथम मिलन की सकुच घनेरी वरना छवि अडकीलौ।
नैंन खोल अवलोकन मन कर नरम होत गरवीलौ॥
मोहन मदन मोहि तैं लीयौ बोलत ढीलौ-ढीलौ।
वृन्दावन हित रूप भयौ अब नागर रसिक रङ्गीलौ १३७

सकुच निवारैं सर्वसु वारैं प्यारी कौ मन लैकैं।
लाड़भरी लड़काति दुलहिनी रही सखी पद नैकैं॥
लाज जहाज महागुनवन्ती बैठी घूँघट दैकैं।
वृन्दावन हित रूप अमीसे सब के बचन अचैकैं॥१३८॥
लाल आय ठाड़े भये आगें श्रवत अमीसे बैंना।
उरझैं परत मीन छवि जल मनु धीरज धरत न नैंना॥
चितै जात अनकनी जु दै लाघवता कहत बनैं ना।
वृन्दावन हित रूप जाहि लखि दहलत मनसिज सैंना॥१३६॥
अस दिन दुलहिनि लोकनि दुर्लभ जैसी मुरलीधर की।
वृन्दारन्य धाम सर्वोपर वरषा आनन्द भर की॥
लीला नई-नई नित दरसति या वंशीवट तर की।
वृन्दावन हित रूप मोहनी चितवनि राधा वर की॥१४०॥
झमकि दुरैं कुंजनि पुनि निकसैं सजनी सुधि न सम्हारैं।
रस लोभीनि फिरत है ऐसें देह छाँह ज्यों लारैं॥
अष्ट पहर कीयें जु चकोरी जुग विधु वदन निहारैं।
वृन्दावन हित रूप प्रेम छकि सेवा-सुख विस्तारैं॥१४१॥
गहैं कदम्ब की डारि छबीली प्रीतम ओर निहारैं।
छुटत कटाक्ष बाण सहसन मुख भृकुटि धनुष कों धारैं॥
प्रीतम सूर सराहैं पुनि-पुनि पग न पिछौंडो टारैं।
वृन्दावन हित रूप चोट तब रीझि-रीझि कैं डारैं॥१४२॥
कबहूँ चढ़ैं नवारैं कौतिक खेल रचैं ता माँही।
कबहूँ लेइ झाँई जमुना जल भुजा डारि गरबाँही॥
चकित भई गोरी मन भोरी निरखि जुगल परछाँही।
वृन्दावन हित रूप कौंन दरसत इम सम उहि ठाँही १४३

हंस हंसिनी विहरैं जा तट प्रीतम प्रिये दिखावैं।
लखि पंछिनु की प्रीति अलौकिक रोम-रोम सचुपावैं॥
वहस परी है इत उत मानौं सुरसौं सुर जु मिलावैं।
वृन्दावन हित रूप सुघर पंछिनु अहलाद बढ़ावैं ॥१४४॥
मधुप लेत मकरन्द कमल तें पिय संकेत जतावैं।
अति आतुर चातुर अनुरागिन कौं ये कौतिक भावैं॥
समुझति हैं मन मिल जु सहेली श्रवननि लगि बतरावैं।
वृन्दावन हित रूप जुगल रोमांचित तन ह्वै आवैं ॥१४५॥
प्रफुल्लित हैं तरु वेलि परस्पर जे इहि भाँति गसी हैं।
अधिक मान मन पाइ भामिनी पियके अङ्क वसी हैं॥
सुख दै लै कै सुकृतिनि मानौं भाग्य मनाइ हँसी हैं।
वृन्दावन हित रूप जुगल उर आनन्द देति लसी हैं ॥१४६॥
कानन की संपति जु भोगता विहरत तीरैं-तीरैं।
झुकि रहे जहाँ तुङ्ग तरु बेली विरमैं धीर समीरैं॥
तहाँ बदली जु मननि गति औरै हँसत हैं धीरैं धीरैं।
वृन्दावन हित रूप चले ताकि कमनी कुंज कुटीरैं ॥१४७॥
सुख की लूट होति है कानन ये दोऊ महा लुटेरा।
दृग कर लै लै भरत कोश उर जानत जतन घनेरा॥
सजनी मन उत्साह बढ़ावति गनति न साँझ सवेरा।
वृन्दावन हित रूप देत बिच राइ मदन कों डेरा ॥१४८॥
प्रेम देस रांमती धनी धन मुख तें मीठे बोलैं।
अंश अंश दियें वाहु कुंज के अँगना लटकत डोलैं॥
चतुर सहेली श्रवननि लगि लगि दुहुँनि मनोरथ तोलैं।
वृन्दावन हित रूप मरम की बातनि मरमिनि खोलैं १४६

नीरस कहा समुझि है यह रस नरपसु दई बनायौ।
रस पद्धति के रसिक समुझि हैं कृपा जनित मैं गायौ ॥
श्रीराधावल्लभ जु गोप्य रस श्री हरिवंश चितायौ।
वृन्दावन हित रूप परम अनुरागिनु हियौ सिरायौ ॥१५०॥
जिन समुझौ सो भयौ सर्वोपर जन्म लाभ फल पायौ।
अरु जो या रस हीन दई सो कारी धार बहायौ ॥
जय श्रीरूपलाल गुरुराज बुद्धि के दृगन सुविधि दरसायौ।
वृन्दावन हित रूप पत्रिका जुगल सनेह सुनायौ ॥१५१॥
जुगल सनेह पत्रिका रोचक रसिकनि कौ मन हरनी।
ठारहसै छतीसा कार्तिक सुदि पंचमी सुवरनी ॥
पठन श्रवण आनन्द बढ़ावन सब विधि मंगल करनी।
वृन्दावन हित रूप रसाइनि अनुरागिनु उर भरनी ॥१५२॥
अनुभव जनित सृष्टि अक्षर की परखैं अनुभव वारे।
नीरस अभिमानी जु कुतर्की समुझैं कहा विचारे ॥
गौर स्याम रस लीला के रसज्ञजन बिलसन हारे।
वृन्दावन हित रूप छके ऐंडाइल हित मतवारे ॥१५३॥
रसिकनि जानौं रसिकनि मानौं रसिक इष्ट हैं मेरे।
रसिकनि ही सौं कहौं रस कथा सुनि सुख लहौं घनेरे ॥
रसिकनि कृपा सबल प्रभु सनमुख देखौं किये बहुतेरे।
वृन्दावन हित रूप भाव अलि भावक पहुँचे नेरे ॥१५४॥

दोहा—जुगल सनेह जु पत्रिका, पढ़ै सुनै हियलाग।
ताही के उर झलकि हैं, दम्पति पद अनुराग ॥१॥
रसिक महामति बिलसि हैं, सुधन आपनों जानि।
मुक्ति मंमिता कौं न यह, सूझै रसकी खानि २

बन्दौं तिन के पद कमल, दम्पति रस जु रसज्ञ।
ते रस रतननि विलसि हैं, लखैं न नीरस अज्ञ ॥३॥
सुधासिन्धु वृन्दाटवी, सीप कुंज उर मांहि।
तहाँ रस रतन प्रगट भये, कीमत बनैं जु नांहि ॥४॥
वृन्दावन हित रूप कौ, जा उर भयौ उदोत।
ताकी औरै कहनि सुनि, हियौ घावरौ होत ॥५॥
इकसत चौवन मांझ मधि, भरी जु हित रसरीति।
केलिदास हस्ताक्षरनि, लिखी सु गरुवी प्रीति ॥६॥
कुल राठौर सु भक्ति रति, नृपति बहादुर नाम।
जुगल सनेह यह पत्रिका, लिखी जु तिनके धाम ॥७॥

※ इति श्रीजुगल सनेह पत्रिका श्रीवृन्दावनदासजी कृत सम्पूर्ण ※
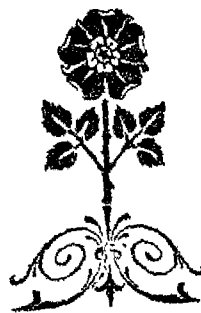
पद (राग कान्हरो)

प्रीति की रीति को पैंडोई न्यारो ।
कै जानत बृषभानु नन्दिनी, कै जानत यह कान्हर कारो ॥
बातन प्रीति न होई सखी री, यह अपने जिय सोच विचारो ।
'सूरदास' यह प्रीति कठिन है, सीस दियें नहिं होत निवारो ॥१॥

नेह निगोड़े को पैंडो ही न्यारौ ।
जो कोई होय के आँधौ चलैसु लहै प्रिय वस्तु चहुंधा उजारौ ॥
मोतो इतै उत भूल्यौ फिरै न लहै कछु जो कोउ होय अँख्यारौ ।
'वृन्दावन' सोई याकौ पथिक है जापै कृपा करैं कान्हर प्यारौ ॥२॥

प्रेम पन्थ कौ पैंड़ौ ही न्यारो ।
कै जानै वृषभानु नन्दिनी कै जानै ब्रजराज दुलारो ॥
याही ते रसिकन को श्री वन लागत प्रानन हूं ते प्यारो ।
'अली किशोरी' के सङ्ग विहरत मोहन मुरली वारो ॥३॥

* पद *

जाको मन लाग्यो गोपाल सों, ताहि और क्यों भावै ।
लेकर मीन चीर में राखो, जल बिन सचु नहिं पावै ॥
जैसे शूरमा घायल घूमै, तऊ पीर न काहू जनावै ।
ज्यों गूंगो गुड़ खाय रहत है, स्वाद न कछू बतावै ॥
जैसे सरिता मिलै सिन्धु में, बहुरि प्रवाह न आवै ।
तैसे 'सूर' कमल मुख निरखत, चित इत उत न डुलावै ॥४॥

श्री भक्त प्रसाद वेली

* राग भैरों ताल चर्चरी *

सुमति दायक प्रथम ध्यान पद हिये धरि !

राधिका लाल अनुराग मूरति ललित फलित भये रसिक रस कृपा दत जासु करि। व्यास कुलदीप कलिकौ तिमिर दलमलन अर्थ जिहि नाम बल गये सब विघन टरि ! विमल गुण निकर रसना गहकि गान करि परम परसाद ते विपुल आनंद भरि। भानुजा पद कमल धरें व्रत बांकुरौ जहां अलि ह्वै भ्रमत स्याम अभिराम हरि! वृंदावन हित वरनि भक्त जन चरित अब मही मंगल करन और दूजौ न सरि॥१॥

भक्त जन चरित आलाप करि नित नये।

प्रणित जन काज वर बुद्धि अवनी भरन कृपा अम्बुद घुमडि प्रेम पावस छये। विषम जग रोग की सूल गई संग रहि नाम हरि हरि कहत अमंगल च्वै भये। सदा सादर पियौ श्रवन पुट मानि रुचि कथामृत स्याम कौ अखिल विधि सुख दये॥ रंक ते राव हरि मिलन के चाउ करि जिननु अपु दया बल छिनक में निर्मये ! कामना बीज सब हरि विमुख जा।ऽ कै भक्ति के बीज आनंद रूपी वये॥ सुलभ प्रापति दई अचल प्रभु धाम की चलत जा पंथ बहु लाभ दिन दिन लये ! वृन्दावन हित सुमिरि भेद गुरु मुख वचन सकल दुख वृंद अस सुमति जागत गये॥२॥

दया निधि संत सहायक तिन मिलि हरि गुण गाय।

अवसर भलौ चेति मन बौरे फिरि पाछें पछिताय॥ बहुरि जगत दुख वारिध बूडै मनुष जनम अति दुर्लभ पाय! वृन्दावन हित रूप राधिका वल्लभ पद चित लाय ३

राधावर मुरलीधर भक्तनि हितकारी !
भक्तनि के काज विविध लीला विस्तारी ॥ भक्तनि के हेत स्याम अरवरात भारी । ग्राह ग्रसित गजपति की आपदा निवारी ॥ चन्द हाम विष निवारि विषया दई नारी । भक्त वत्सल करुना मय प्रभु की बलिहारी ॥ शंकर शिर हाथ धरन असुर विपति पारी । रक्षा प्रभु करि आनि बने ब्रह्मचारी ॥ विधि मन भयो सोच अवनि गई जल मँझारी । अद्भुत वपु सूकर धर्यो दंत लै उधारी ॥ सांभू मनु हेत यज्ञ पुरुष के मुरारी । वृन्दावन हित अनेक संतनि भय टारी ॥४॥

देखै किनि नैंन खोलि हरि को हित भाई ।
कहां कहां भक्तनि की पीर प्रभु मिटाई ॥ ज्ञान भक्ति दीपक की जोति कछु सिराई । रूप कपिल देव धारि अतिशै सरसाई ॥ देवहूति जननी कौं सबै विधि लखाई । संतनि सों समझि बूझि हरिपथ गति पाई ॥ वीना धरि साधु संग विपुल मति बढ़ाई । प्रथम जन्म तजि कै उर अचल भक्ति आई ॥ भृगु की उर सही लात सीलता जनाई । हित वृन्दावन कृष्ण बिना कहां अस बडाई ॥५॥

श्री हरिवंश पंथ मन लगि रे ।
सिर पर काल विषम दावानल नाको एक भक्ति गहि भगि रे ॥ भक्त कृपा जलधर कौ चात्रक धरि अनन्य व्रत गाढौ खगि रे । पोषैं हरि चरितामृत छिन छिन तिहिं वड दान महा सुख पगि रे ॥ श्रीगुरु के परसाद चेति चित युगल केलि रस हिय सगबगि रे । वृन्दावन हित रूप जाऊं वलि जग अज्ञान नींद ते जगि रे ॥६॥

※ विभास ※

संत संग प्रापति निजु हरि पद बिमुख संग जग वारिधि बहि हौ । जनम धरौगे लख चौरासी मनुष देह विनु क्यौं हरि लहि हौ ॥

ज्वरौगे सुख लवधि पाय हौ जब साधुन की सरनी गहि हौ
वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि कृष्ण नाम रसना रुचि कहि हौ ॥७॥
जिहि नौका हरि संत उतरि गये रे मन। खोजि चलैं किनि उहिं रुख ।
औघट घाट विकट वन इत उत नेंक डिगै पावै दारुन दुख ॥
जानै सुगम पंथ वह तब ही भेद भाव सुनि लै श्री गुरु मुख ।
वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि मगन रहत शिव नारद जिहिं सुख॥८॥
मन चात्रक ब्रत धरि जो सेवै तो पोषै हरि अम्बुद छिन छिन ।
घुमड्यौ रहतु प्रेम पावस ऋतु जन हित अति करुनामय दिन दिन ॥
सोभा संघट द्रवित निरन्तर आरत हरन और कोउ न विन ।
वृन्दावन हित रूप स्याम घन सब सुख दायक सरनि ग है किन ॥६॥
चेति मना मानुष तन दुर्लभ हरि भजिवे की वार भली है ।
गहि सतसंगति गुरु पद रति करि दिन दिन घटती आयु चली है ॥
अगति जाहुगे असत संग करि सुगति पंथ हरि भक्ति गली है ।
जहँ गये अभय भये जे जे जन युग युग प्रभु सेवा सुफली है ॥
करुना कुशल रसिक नंदनन्दन अति दयाल वृषभानु लली है ।
वृन्दावन हित गहि सरनागत सब तजि बन बसि अचल थली है॥१०॥

* भैरों चर्चरी *

मुरलिका धरन जो नाम रसना रटै ।

संत मणि सिखा अम लोक पावन करै गाढ अति प्रीति जिहि युगल चरननि जटै ॥ सील संतोष कौ कवच तिहिं सुदृढ़ तन भक्ति पथ सुभट पग पछमनौं नहिं हटै । ललित लीला उदधि बुद्धि अवगाहतें चाह छिन छिन बढै ललक नाहिंन घटै ॥ काम अरु क्रोध मद लोभ अरि दलमलें राधिका वन रसिक सुमिरि नागर नटै । मत्त चित चाव घूमत रहै मिथुन कैं केलि मकरन्द हिय रमन

सादर चटै ॥ कुंज कमनीय के सुख तरंगनि रलै बिना मित भाग्य रस रीति जब यह पटै। वृन्दावन हित बहै प्रेम मारुत जहां जासु थल बैठि कै नेह सौरभ अटै ॥११॥

सरद राका निसा संत महिमा बनी।

भक्ति नवधा ललित फूलि वन उपवननि सुयश सौरभ महक उठति चहुँ दिसि घनी ॥ हरि चरित बदन विधु उदित मनो चान्दनी फटिक मणि जन हिये दुति न आवत भनी। सुधा छिन छिन श्रवित भाव भीजनि भई जासु आनंद मित जाति कापै गनी ॥ सुभग सर धीर गंभीर अति सीलता त्रिविध मारुत सुखित कृष्ण पद रति ठनी। पंक अघ त्याग तन दमा उज्वल वारि देखि कैसी विकच सुमति यह कुमुदनी ॥ गुण निकर स्वच्छ सब काल मंडित मही नस्यौ अज्ञान तम ताप तीनौ हनी। वृन्दावन हित सदा वंदि हित रूप पद परम अद्भुत कथा भृत्य राधा धनी ॥१२॥

* राग रामकली *

हरि मुख संत महिमा कही।

उद्धव प्रति प्रभु प्रगट भाषी कहा छानी रही ॥ शिव विधि कमला बंधु हलधर इमि मम प्यार न सही। जैसे मुहि मम भक्त प्यारे आपनपौ हूं नहीं ॥ तिनके पाछै फिरत निस दिन चरन रज सिर लही। मो मैं घटती नेह पालन ताकी औषधि यही ॥ भक्त कोटि अनंत सांची प्रीति तिन निर्बही। मम वतु इक क्यों देहु बदलो रिनी ह्वै वै पै चही ॥ उननि सुत धन धाम त्यागे सरनि मेरी गही। वृन्दावन हित जिन लगि हौं बहु जनम धारौं मही ॥१३॥

जो हरि संतनि विमुख भयौ हौ।

[illegible] विकट वन भूल्यौ पद पथ अगति दयौ हौ माया डाइन

बहु बिधि डहक्यौ लोभ पिमाच ग्रस्यौ हौ केहरि काम वित्रस करि दीनौ क्रोध भुजग डस्यौ हौ ॥ मोहमहा नद सरिता पैरत नाहिंन पार लह्यौ हौ। दावानल दुर्जन वचननि सौं तन मन बहुत दह्यौ हौ ॥ बीते कलप अनंत भोगवत दारुन दुख पायौं हौ। वृन्दावन हित रूप साधु गुरु तऊ न सरनि आयौ हौ ॥१४॥

जब ते साधु संगति भई।

तब तें जग परपंच ज्वाला जरनि हिय की गई ॥ कुमति दिन दिन घटी बाढी सुमति अति सुख मई। भक्ति बेली लहलही जल पोष वचननि दई ॥ सारासार विवेक तिनतें भेद गति लखि लई। दृष्टि पथ कियें रसिक मोहन पद रुचि बाढी नई ॥ कृपा अम्बुद हिय गगन में पावस ऋतु ज्यों छई। ताही छिन तें दसा पलटी और बानिक ठई ॥ हरि चरितामृत संत मुख तें संजीवनि अचई। असुभ कंटक बन जरायौ सीर सुख की बई ॥ आपु बल प्रभु कों मिलायौ पाप मति रितई। वृन्दावन हित रूप सचिवौ बुद्धि जिन गिधई ॥१५॥

जब गुरु लार संतनि दियौ।

तबतें सब संदेह काढ्यौ भक्ति भीज्यौ हियौ ॥ दुसह वारिध जगत तरिबौ सो जु गोपद कियौ। स्याम नातौ मानि ताकौ हरषि भुज भरि लियौ ॥ जीति सो प्रभु पास गवन्यौं कर न काहू छियौ। वृन्दाबन हित रूप रस तहां सदा सादर पियौ ॥१६॥

देखो संत बड उपकार।

सदा इह जग मांह विचरत जन उधारन हार ॥ दीन दावानल जरत दुख काम क्रोध मंझार। ज्ञान लोचन हीन कर वर खैंचि लेत उबार ॥ बचन सीतल अमी सींचत राखि अपने लार। विपुल श्री धन दै मिटाई तृष्णा जग जंजार तिलक दाम हरि नाम

मुद्रा दसा उज्जल धार कियौ आपु समान छिन में कौन अस दातार ॥ निगम कौ पितु ताहि सौंपत दै विवेक विचार । वृन्दावन हित रूप वंदौ करत भव निधि पार ॥१७॥

* राग विलावल *

हरितें हरि के दास की महिमा अति भारी ।

हरि गनि गनि जन उद्धरे इन सृष्टी उधारी । असुरनि कुल संघार कौं अवतरत मुरारी । भक्तनि हरि सेवा प्रचुर घर घर विस्तारी ॥ हरि काहू सुकृति मिले ताके काज संवारी । भक्त प्रगट जग में फिरैं सब जन हितकारी ॥ हरि अधिकारी प्रीति कियौ उपदेश बिचारी । इननि एक बल नाम के सबही विधि टारी ॥ हरि सागर पय को मथ्यौ काढे रतन मझारी । संतान निगम उदधि मथ्यौ करी भक्ति जु न्यारी ॥ हरि वरु काहू इक दियौ वैभव अधिकारी । वृन्दावन हित संत वर जग भक्ति संचारी ॥१८॥

संत चरन वन्दन करौं जिन संश मिटायौ ।

परम हंस छिन में कियौ तन काग भुलायौ ॥ वाद विवाद विषाद जग सर पंक छुडायौ। जलज पराग जु मानसर सो पंथ दिखायौ ॥ रहनि कहनि औरै भई जब मरम जनायौ । तन मन की गति बदलि कैं कुल देश विहायौ ॥ यह वपु जीरन भाव वपु अति पुष्ट करायौ । छाप विपुल परताप दै जग चरन नवायै ॥ जिन संगति बिनु यतन ही हरि हीरा पायौ । परशंस्यौ गुरु जौहरी कर परखि गहायौ ॥ साधु सुयश के सिंधु कौं किन थाह बतायौ । वृन्दावन हित रूप बलि मैं लघु मति गायौ ॥१६॥

पंथी जे हरि पुर चले तिन सौं मिलि भाई ।

जो चलिबे उहि देश कौ तौ ये जु सहाई साधु सजाती म्योजि कै

निर्भय तब जाई। जग पथ उलटौ चल्यौ तहां करि न मिताइ
गुरु समरथ की सरन गहि और डरहि महाहि। ह्वै संतन कौ
लाडिलौ सुख विलस सदाई ॥ प्रबल चोर इंद्री जिननु कृत
भक्ति लगाई। कृष्ण भजन लै गांठ गथ सब भांति भलाई ॥ जिन
जिन हरि धन संग्रह्यौ तिनकी जु बडाई। सुमिरत शिव ब्रह्मादि
मुनि कीरति जग छाई ॥ हरिदासन लारैं लगे तिनकी बनि आई।
वृन्दावन हित प्रभु मिलै वांछित निधि पाई ॥२०॥

जौ प्रभु प्रापति चाहियै तौ संतनि आदरि।

उर मंदिर जिन के बसैं करुना मय हो हरि ॥ जन संकट नहिं सहि
सकैं रच्छा सब विधि करि। खग पति पै आरूढ नित रहैं चक्र-
पाणि धरि ॥ बस ह्वै जानत भक्त कैं हिय नेह रहे भरि। अपने
ों भायौ करत अनुचर ज्यौं अनुसरि ॥ ऐसे प्यारे दास हरि तिन
चरन सरन परि। वृन्दावन हित रूप बलि विनु श्रम भव निधि तरि॥२१॥

लाल तुम्हारी रीझ कौं ये संत सु जानैं।

इन चरननि अनुसरे तऊ पहिचानैं ॥ बाजीगर के खेल को
चटिया उर आनैं। और सकल जग कौतिकी तिहि नाटि भुलानैं ॥
या बटुवा तें रचै सब जगत विधानै। बहुरि बटोरि धरै तहीं श्रम
रुष न मानै ॥ पौढत नीर अगाध में अहि सज्या ठानैं। पुनि
प्यारे निज धाम में क्रीडत सुख सानै ॥ कहां लगि हरि हरिदास
केकोऊ गुननि बखानै। वृन्दावन हित रूप बलि बहु लीला बानै ॥२२॥

जो प्रसाद भक्तनि लह्यौ गति पड़ै न बखानी।

सो पावत नहीं सुपन हूं धन मद अभिमानी ॥ बेहद नद हरि रस
था शुक नारद गानी। परम हंस ये संत जन क्रीड़ा तहां ठानी ॥
कुन तुस कूटैं सदा नीरस ये ज्ञानी हाथ न लागै एक कण श्रम

करहिं बिनानी सेवत बड़े तड़ाग कौ जहां नाहिंन पानी । क्यौं पावै कल्याण सो करैं सर्वसु हानी ॥ हरि संतनि बाटैं परे यह सब हिनु जानी । बृन्दावन हित रूप बलि युग युग सुख दानी ॥२३॥

* राग आसावरी *

हरि के संतनि सरनि गहौ रे ।

नौका अछत जगत दुख वारिधि काहे मूढ़ बहौ रे ॥ दुर्लभ तजि हरि भक्ति आन विधि काहे कष्ट सहौ रे । छाया सुभग कल्प तरु तजि क्यौं ग्रीषम ताप दहौ रे ॥ द्रवित भक्त मुख हरि चरितामृत सहित विवेक चहौ रे । पुनि सादर बांटत सब हीकौं सुकृती वेगि लहौ रे ॥ सत गुरु साधु कृपा वांछित ह्वै हरि मिलिवे उमहौ रे । बृन्दावन हित रूप वन्दि पद हरि हरि टेरि कहौ रे ॥२४॥

विचरत संत महीतल ऐसे ।

मोह पंक ग्रेही जन दहले होई हरि सन्मुख जैसे ॥ ज्यौं रजनी आये निद्रा बस जग जन कृत अलसाने । लगत सचेत पंथ जबही तब रबि कौ होत पयाने ॥ यौं अज्ञान ग्रसित तिन हिय तें तम सब टारि दियौ है । बृन्दावन हित रूप जाउँ बलि भक्ति प्रकास कियौ है ॥२५॥

संतनि वंदौ संतनि गावौ ।

संतनि इष्ट जानि उर लावौ ॥ संतनि सरनि सदा सुख पावौ । संतनि मिलि हिय तिमिर न सावौ ॥ संतनि संग रंग उपजावौ । डरि तिन सौं अपराध छमावौ ॥ संतनि के गुन वरन सुनावौ । रसना पावन यश सरसावौ ॥ बृन्दावन हित कृपा मनावौ । दिन दिन बेलि भक्ति बढावौ ॥२६।

विदित बिरद जग मांही मम प्रभु संतन के प्रतिपालक
जन की पीर भीर उठि लागत दुष्टनि के घर घालक ॥ नाना रूप धरत युग युग प्रति असुरनि की मति चालक । वृन्दावन हित रूप नंद घर दासनि हित भये बालक ॥२७॥

दास ते स्वामी उपमा पावै ।

यद्यपि गुण अनंत स्वामी के दास बिना को गावै ॥ दास बली स्वामी के बल करि करै सु जो मन भावै । स्वामी समरथ औगुन ताके तनिक न मन में लावै । सेवक बिनु स्वामी पद कैसो काके मन में आवै ॥ स्वामी बिनु सेवक निगुसायौ जहां तहां नाम धरावै ॥ स्वामी होहि दयाल रीझि कृत सेवक कौं अपनावै । वृन्दावन हित रूप स्वामि कौं विपुल प्रताप बढावै ॥२८॥

भक्तनि के हरि करत मनोरथ ।

ताते संत चलत हरि के पथ ॥ हरि मन जन की लाज बडी है । भक्त सुमति हरि चरन अडी है ॥ ग्रह बन फिरत भक्त के पाछै । श्रीमुख कह्यौ उद्धव प्रति आछै ॥ कहां कहां न भक्त हित करता । संतनि के द्रोहिनु संहरता ॥ अपने जन के बस ह्वै जानत । सर्वसु स्याम भक्त कौं मानत ॥ उनये अम्बुद रहत कृपा भारे । वृन्दावन हित रूप रसिक हरि ॥२९॥

* धनाश्री ताल रूपक *

हरि ते अधिक हो हरि के संत उदार ।

जे सुख संपति हो देत न लावत बार ॥ कृपावंत श्रीकृष्ण दया बल बिचरत पर उपकार ॥ हरिते....टेक ॥ भूरि भाग्य तो सेइ चरन रज अम्बुद भक्ति निकेत । बिनु याचे करुनामय वे अस भरहिं मनोरथ खेत सादर हरिगुन निकर संचहिं उर करि मिलि दृढ

अनुराग । वृन्दावन हित रूजु जाँउ बलि जगत नीद तजि जाग ॥३०

संत सुख सरवर उरहि भरेंगे ।

जो तू तपित जनम अगनित धरि सो छिन माँहि हरेंगे ॥ असित ब्याल संसार निरखि तिहि करुना अमित ढरेंगे । प्रभु निर्मित सदवैद्य साधु जन निर्विष वेगि करेंगे ॥ पुनि अह कूप परै अविवेकी तासु विचार परेंगे ॥ परम दया हिय भीजि भक्ति बल छिनक माँहि उधरेंगे ॥ माया वारिधि विनु मित ताकौ कायर देखि डरेंगे । हरिदासनि के दास भये जे विनु श्रम सहज तरेंगे ॥ जिन के दरस पाप तुस परवत तनक सुदृष्टि जरेंगे । वृन्दावन हित रूप वंदि पद सब विधि काज सरेंगे ॥३१॥

हरि के संत सचेत हरन जगरोग कौं ।

भक्ति सजीवनि देत विगत करि सोग कौं ॥ हरि हरि हरि आलाप सदा जिन कें रहे । मानौ सुधा समूह कमल मुख ते बहे ॥ जे डरि आए सरनि दुसह संसार तें । ते अपु बल किये पार विकट भव धार तें ॥ भजनानंद महा मन वेपरवाह जू । हरि लीला सर क्रीडत संकैं काहि जू ॥ परहित करुना कुशल भृत्य घिरिधरन कें । वृन्दावन हित रूप मनोरथ भरन कें ॥३२॥

* राग तालरूपक *

जहां हरि संतनि हो सादर करहिं प्रवेश ।

ते घर मरघट हो नाहिंन सुख कौ लेश ॥ दुख विष रूख बढ़ै वन दिन दिन रे मन तजि वह देश ॥ जहां हरि....टेक ॥ वह कुल निन्द सुपच ज्यौं आंडौ धरत न हरि पद भाव । बूडत नर्क नदी वहितरनी विनु गुरु खेवट नाव ॥ जिन संतनि की महिमा बरनी श्रीमुख गोकुल राय । तिनहिं न मूढ पाप मति वंदत जैबौ अगति

सुहाय ॥ संत सु दृष्टि करत जिहि जन तन हरि पद करत तिहिं पान । वृन्दावन हित रूप विदित यश भाषत वेद पुरान ॥३३॥

संत कलप तरु हो, जे हरि भक्ति फले अद्भुत विपुल प्रताप ।

सेय मनां रुचि मांनि निरंतर करि गुन बिशद अलाप ॥ देहिं अचल सुख संपति ऐसी और न दायक कोय । हंसि भेटहिं हरि प्रीतम भुज भरि बहुरि बिछोह न होय ॥ अर्थ धर्म काम मोक्ष बडे फल तिनको जग लालचहि । भक्त सुदत करि जे जन धाये ते नित बेपरवाहि ॥ श्रवित सदा आनंद सकल सुख पावत दासनिदास । वृन्दावन हित रूप वंदि पद धरि मन अधिक हुलास ॥३४॥

मोहि रंचक नाहिं दुराव ऊधौ भक्त सौं ।

भक्त मोहि दृढ़ पन भजै मोहि भक्त भजन कौ चाउ ॥ऊधौ भक्तसो ...टेक॥

भक्त कहै सो सो करौं हौं धरि धरि नाना रूप । भक्त करैं मो भावतो यह कौतिक कथा अनूप ॥ जन्म कर्म मेरे जिते हो तिनहि विपुल धन मान । सादर उरवर कोश सचिवे दिन दिन करहिं बखान ॥ मैं उन उर मंदिर बसौं हो नव नव विधि सचु पाय । बन्ध्यौ प्रेम दृढ़ दाम करि मोहि उन बिन कछु न सुहाय ॥ उन के सुख सौं हौं सुखी हो वे मेरे सुख मांहि । वृन्दावन हित रूप बलि हरिजन यश कहि न अघाहि ॥३५॥

सुदृढ़ जिन मो पद प्रीति करी है ।

सुन उद्धौ मन वच क्रम ताकी मो कौ लाज परी है ॥ त्रिभुवन वैभव तृण सम मो बिनु जा जन ने निदरी है । ताकौ भार निर्वहौं निस दिन मैं यह टेक धरि है ॥ मेरी कथा नाम गुन रसना जासु सुढार ढरी है । प्रेम द्रवित हिय लोचन छिन छिन मति मो रूप अरी है । हौं मैं अजित जीति उन लीयौ नेही रीति खरी है । वृन्दावन हित

रूप श्याम मुख जन महिमा उचरी है ३६.।

* राग सारंग *

जाकी संतनि बांह गही हौ ।

हरि ताकी सब पूरी पारी श्रीशुक टेरि कही हौ ।। नारद दत प्रह्लाद और ध्रुव भक्ति अमोघ लही हौ । जिन हित हरि अद्भुत वपु धारे छांनी नाहिं रही हौ ।। हरिनाकुश उर फार्‍यौ असुरनि की मति पाप दही हौ । व्यास प्रसाद पंडु कुल हरि पद अचल प्रीति निबही हौ ।। दासनिदास भये तिनकौ यश गावन सकल मही हौ । वृन्दावन हित रूप साधु जन निगमनि साखि सही हौ ।।३७।।

कहां लगि भक्त प्रताप बख्यौ हो ।

मुनिको श्राप तनिक नहिं संक्यौ ज्वाला क्रोध कढ्यौ हो ।। चक्र तेज पीडित दुरबासा सब सौं दुख जु रह्यौ हो । त्रिभुवन में रक्षक नहिं कोउ तब हरिलोक चढ्यौ हो ।। हरि पुनि उहिं नृप पास पठायौ उन अस मंत्र पढ्यौ हो । वृन्दावन हित रूप जाऊं बलि मुनि सुख सील मढ्यौ हो ।।३८।।

जब यह संत सुदृष्टि ढरैंगे ।

बहुत दिननिते तपित कमल हिय प्रफुलित सींचि करैंगे ।। जो संपति सुर नर मुनि दुर्लभ सो उर सुभर भरैंगे । प्रभु आलय बसाय निज कर गहि संशै सूल हरैंगे ।। कानन रहसि निगम बितु इतनौं जब मृदु मुख उचरैंगे । वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि तब सब काज सरैंगे ।।३९।।

प्रभुता प्रभु पद ही पति पावै ।

जिन के दास अभय सब युग युग द्रोहिनु दण्ड धरावै ।। सांची प्रभुता प्रभु की जो बहु वपु धरि धरि जु दुरावै । अनत कहूं रंचक

दिन दस में अति उनमाद करावै । संचै पाप कुमति जब वैभव छल बल करि घर आवै । हरि भक्तनि निंदक अपराधी बहुरि नर्क पथ धावै ॥ हरि में अरु हरि के दासनि में दया सील उपजावै । अंबरीष पृथु रंति देव नृप रीति व्यास शुक गावै ॥ पंडु सुवन के यज्ञ राजसू सब नृप जीति बुलावै । जिन के चरन आपु हरि धोयें जूठनि बहुरि उठावै ॥ भक्त अधीन कमलदल लोचन महिमा चितहि चुरावै । बृन्दावन हित रूप श्याम उतकर्ष संत कौ भावै ॥४०॥

देहु हरि उन संतनि कौ संग ।

नाम प्रवाह सुधा जिन रसना छिन छिन रहत उमंग ॥ जिन की प्रीति निरन्तर तुमसों तुम जु ढरे उन ढंग । हौं बलि नेह निपुन दोऊ दिस ज्यौं जल और तरंग ॥ वे अति धनिक जु तुम रस लीला विलसत भीजे रंग । बृन्दावन हित रूप जांऊँ बलि तुम जु पगे उन अंग ॥४१॥

सिर वंदि संत पद रज थली ।

बिरवा भक्ति पोष अति पावै लहकि उठै पल्लव भली ॥ उर वर रुचिर संवारि थांवरो कृपा तोय आवै ढली । सुमति कृत्य करि गहकि बढैगी प्रेम महा फल करि फली ॥ लपटी भाव सहित राधा पति चारु चरन जहां लगि चली । गज वर मत्त साधु अपराधहि डरि न उखारै अति बली ॥ सब विधि रहि भक्तनि सौं अनुगत हरि मिलवे की यहै गली । बृन्दावन हित रूप जांउँ बलि प्रणित मनोरथ जन पली ॥४२॥

कहि साधु संग करि को लज्यौ ।

सत संगति विनु सुनि रे भैया किन हरि पुर वैभव सज्यौ ॥ बिना सुदृष्टि कृपा गुरु संतनि किन जग दुख वारिध तज्यौ । लीला

ललित भेद रस भाइनु किन गोविन्द सुविधि भन्यौ ॥ दासनिद भये जे युग युग तिन को यश आनक बज्यौ । वृन्दावन हित र स्याम सुख दीनैं लोक अभय गज्यौ ॥४३॥

हरि ऋणि भक्त के रहत हैं ।

देह गेह के पालक आपुनु भार कृपा निधि वहत हैं ॥ होत अधी संत संकट में कष्ट आपु तन सहत हैं । भक्त वछल यह विर बढ़ावत जन मुख ओरी चहत हैं ॥ जे अनन्य हरि चरननि तजि के मारग और न गहत है । वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि हरि हरि हरि नित कहत है ॥४४॥

जानत जनको भाउ रीझै भीलिनें के हेत ।

चाखि चाखि चुनि चुनि फल राखे तिनकौं रुचि सो लेत ॥ सींचत कृपा दृष्टि करि पुनि पुनि बैठे जासु निकेत । स्वाद सराहि प्रीति सौं पावत अखिल भाँति सुख देत ॥ यज्ञ भोग विधि रीति समर्पित निगम प्रसंशत नेत । ता तन दृष्टि न भक्त भजन वस ह्वै रहै प्रेम अचेत ॥ देखौ चरित श्याम के कौतुक जन हित करुणा खेत । वृन्दावन हित अपने कौं पन पालत सदा अचेत ॥४५॥

हरि भक्तनि हित अकुलात हैं ।

जैमल के रण आपु अस्व चढि अरि दल मोरन जात हैं ॥ पुर पालक भये श्याम कृपा निधि नख सिख कमनी गात हैं । जिन रनमुख निरखी वह मूरति पुनि पुनि दृग ललचात है ॥ जन कौ बेरद विदित जग कीनौ क्यों हरि संत डरात हैं । वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि प्रभु रक्षक सब बात हैं ॥४६॥

किये भक्तनि हित कौतिक घनें ।

लोचन ग्रह काज दुखी तव आपु वृत्तिया हरि बनें ॥ घर मज्जन

लै सुखित करे प्रभु आपनैं ॥ हां नाहीं न करै मुख कबहूं जेट एक रोटी हनैं । भक्तनि जाय परोसिनि के घर में बातैं तासों भनैं ॥ यह मति जानि जानि मणि सटके कटुक वचन किये है मनैं । वृन्दावन हित रूप स्याम के यह कृत जानत सब जनै ॥४७॥

हरि भक्त टहल बाटैं परी ।

श्रीधर के हित धनुष धरयौ पथ चोरनि ते रच्छा करी ॥ कवि जैदेव रीति रस लिखते जबहि निपट मति अरबरी । रसिक शिखा मणि स्याम आपु कर लिखी रीति अति रस भरी ॥ भवन भक्त की तेग दारु मय वदन सार की उच्चरी । ताही विधि दरसाई जब तब दामिनि सी दमकी खरी ॥ विल्व मंगल लोचन हीनो तब आपनु कर पकरयौ हरि । वृन्दावन हित रूप रावरी कृपा अनौखी उर अरी ॥४८॥

* राग नट *

श्याम तें जब तब यह बनि आई ।

सहि न सकत अपराध भक्त को कोटिनु करत उपाई ॥ अंबर हरत द्रुपद तनया कौं और कछु न बसाई । वसन रूप ह्वै कैं तब बाढे खैंचत सभा जु खिसाई ॥ लाखा ग्रह सुतअंध बनायौ बसे पंडु सुत जाई । दुसह ज्वाल चहुं दिसतें प्रगट्यौ लीने कृष्ण बचाई ॥ दुर्वासा कौ श्राप वज्र सम वन में विपति पठाई । संकट जानि धाये प्रभु आये तिनसों विथा जनाई॥साक पत्र अपने मुख धरिकें त्रिभुवन भूख मिटाई। आशिष पढत भगे मुनि उलटे ऐसी युक्ति बनाई ॥ भीषम को प्रभु पन प्रति पाल्यौ जानी निपट सचाई । अपनी बात न सुझी बूझि भक्त बछल यदुराई ॥ द्रोही जानि पृथा पुत्रनि के नृप कुल छौ जु कराई । इक छत राज धर्म सुत दीनों आपुनु चौंर दुराई । राख्यौ

वंश वीज अर्जुन कौ हरि करि गर्भ सहाइ । जिन हित श्री भागो
विदित जग श्री शुक मुनि मुख गाई ॥ कुंती विदुर विदुर घरनं
मन पूरित भक्ति महाई । वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि जिन बस
कृष्ण सदाई ॥४६॥

नाथ कौं जन बस ह्वै वौ देखौ ।

छात्रति छानि सदन नामां की पावत सुख जु विशेषौ ॥ मन्दिर फेरि धरयौ जन सनमुख यह हित रीति अलेखौ । श्री विग्रह जा कर पय पीयौ पुनि कियौ वीठल भेषौ ॥ हरि भक्तनि की महिमा अद्भुत या में मीन न मेखौ । वृन्दावन हित रूप रावरी कृपा परावधि रेखौ॥५०॥

कौन पै हरि बिनु यह बनि आवै ।

दुखित जानि जन माधौ ताकौ अप कर शौच करावै ॥ सीत लगत रघुनाथदास तन लै सकलात उढावै । छुधित जानि माधविंद पुरी कौं खीर चुराय खुवावै ॥ साखि भरन हित विप्र काज कौं खुरदा संग गिधावै। वेत प्रहार दास तन तिहि छिन को दै पीठि बचावै। निष्किंचिन जन जानि अंत दिन धनिक बनिक ह्वै दिखावै । ऐसौ कौन जु समझि अपनपौ वन में जाय लुटावै ॥ रामदास की प्रीति माहिली समझि उपाय बतावै । पुर डाकौर द्वारिका तें चली जन हित रहिवौ भावै ॥ भक्त काज श्री श्याम कृपा निधि कौतिक विविध बनावै । वृन्दावन हित रूप जाउँ बलि करहि ज्यौं जन सुख पावै ॥५१॥

अजित प्रभु भक्तनि नाच नचायो ।

बलि कौ छलन गये लघु बपु धरि तापै आप बन्धायौ ॥ देवनि के हित गिरि कर ढोयौ पुनि लै पीठि धरायौ । अहि पति मेरु लपेटि आप कर सागर मथन उपायौ ॥ कीयौ कपट मोहिनी ह्वै कै

गवायौ। गज की वार निपट आतुर ह्वै वाहन हूं
न में पैठि ग्राह मुख बेंध्यौ पग गहि ताहि छुटायो।
प जाउँ बलि पर हथ प्रीति बिकायौ ॥५२॥
भक्त जन मानत मंका काहू की।
हर उपदेस्यौ निधरक मति पीपा की ॥ जल
कूद्यौ निज द्वारावति झांकी। लायो प्रभु कर छाप
आवनि जाकी ॥ रसिक मुरारि मत्त अति कुँजर
रे ताकी। जन नरहरियानंद काठ बहु ढुवाये सिर
त कर्म अघ ओघ संत ते डरपत डायनि डांकी।
प जासु की कृष्ण भजन मति बाकी ॥५३॥

* राग गौरी *

भक्त हित साँचौ जानत हैं।
कृतज्ञ स्याम जन नातौ मानत हैं॥ रंक तंदुल
वखानत हैं। इंद्र विभौ दई आपु ताहि मन
हैं॥ असन बसन सनमान अंग श्रक चन्दन बानत
रति चौंर सीस हरि मुख यश गावत है ॥ गुरु
बात मन संशै भानत हैं। वृन्दावन हित रूप
सुख सांनत हैं ॥५४॥
हरि के संतनि की शुभ करनी।
मुनि ताकौं विदित भागवत वरनी॥ दत्त कपिल
रहनि कहनि भव तरनी। प्रियव्रत यदु अरु जनक
लमष हरनी॥ संकर सनकादिक नारद की भक्ति
। श्रुतिदेव बहुलाश्व भक्त की कृष्ण चरन रुचि
श्वर धर्म व्याधि की मिटि जु गई जग जरनी।

वाल्मीक कपिईश विभीषन गही राम पद सरनी ॥ उद्धौ १
सुत हरि महिमा दिन दिन सचि हिय धरनी । वृन्दावन हित
राज मुख विपुल भक्ति विस्तरनी ॥५५॥

सनेही हरिसौं और न कोई ।

भक्तनि समझि लियौ दृढ़ मति करि मिथ्या दुविधा खोई ॥
घर मामेरौ पूरयौ दीनै मांग्यौ सोई । हुंडी दई सिकारि
सांवलिया सांचौ जोई ॥ रुकिमिनि सहित कृष्ण तहां आये
विवाह जब होई । खरच्यौ वित उदारमनि दम्पति मंगल
पच्यौई ॥ पुनि हरि विदित माल दई गर की विमुखनि सभा विग
वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि न्हात जु वारि समोई ॥५६॥

श्याम की विदित बडाई है ।

न कबीर हित टांडो लाद्यौ सब मन भाई है ॥ भक्ति
राग्य उग्र अति गुरु दत्त पाइ है । बानी हिये प्रकास उमगि र
र खाई है ॥ माया कृत परपंच सबै जिन धोय वहाई
के हरि आधीन विदित परचै जग छाई है ॥ सत अरु अ
वेक दृष्टि करि सबहि लखाई है । प्रभु महिमा अगाध आ
थि मैं मति न्हाई है ॥ अनुभव तत्व खोजि जिन दारुन मृ
ाई है । वृन्दावन हित रूप अभै पद पथ दरसाई है ॥५७॥

अपनपौ को लघु मानत हैं निजु करुना निधि श्याम ।

प्र छुरहडी गही सैन हित गये नृप के धाम ॥ मर्दन कियौ सुह
: ताकैं छिन भम बीत्यौ याम । मृदु कर परस होत नृप जान्य
पन सब गुन ग्राम ॥ राम राम आनंद विपुल भयौ रुचि
ो काम । जकि थकि रह्यौ न नृप मुख वोलै कौतिक अ
राम ॥ [illegible] भक्त सुन्यो सैन को [illegible]

भूप महिप पद बंदित नर पुनि भाम ॥५८॥
गुरु दई लम्याय धनां को भक्ति मचाई है।
अज्ञान हिये हरि पद गति पाई है॥ धना के....टेक॥
प्रीति तिन्हें गोधूम गवाई है। उपज्यो गहकि खेत
जाति न गाइ है॥ होनी मिट जाय अनहोनी
। विदित करत परताप संत को गइ मन भाई है॥
सेन स्वामि की यहै बडाई है। वृन्दावन हित रूप
चराई है ॥५६॥
करत हरि भक्तन को चित चीत्यौ।
श्री केशो वाद यमन सों जीत्यौ॥ जसू स्वामि के
रनि चरित दिखायौ। तैसेई प्रगट करे प्रभु तिहि
हू पायौ॥ अल्हि भक्त के हेत लटकि कै आम
ये। जनदेवा परतिज्ञा राखी धौरे कत्र दरसाये॥
शेश बसत जन अंगद नग जल डारयौ। वदन
भु अर्पन जगन्नाथ उर धारयौ॥ कहां कहां की कृपा
भा सब साखी। वृन्दावन हित रूप मनोरथ
मलाषी ॥६०॥
संत हित हरि मन लरजत हैं हो।
भरोसौ प्रभु के जन अति गरजत हैं हो॥ असत
वत्र करिकें अपनें वरजत हैं हो। वृन्दावन हित
रहित सिरजत हैं हो ॥६१॥

* राग कान्हरौ *

प्रीति माहिली सधनां जनकी।
ने माणि रीझे जानत हैं सबही के मन की ऊपर

मद सब भंज्यौ हौं बलि बलि गिरिवर धरन की। यातें भरोसौ भक्तनि प्रभु के रुचि नहि धर्म वरन की। वृन्दावन रूप रावरे बडी चाह रक्षा संतनि की ॥६२॥

हरि धन रंका वंका जान्यौ।

जिनके परम प्रीति हरि चरननि, जग प्रपंच सब खोटो मान्‍ देख्यौ अधिक कष्ट तिनके तन स्याम दया करि यह मत ठा‍ डारयौ बहुत दर्वि मारग मधि, दियौ विहाय गरल पहिचान्‍ समझि दास की भक्ति सुहृद रति हरि कौ हियौ नेह सुख सान्‍ ृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि जगत विदित परिचय नहि छान्यौ॥

रामानंद उधारे बहुजन।

हुत काल अवनी वपु राख्यौ राम चरन चिंतवन सदा म‍ जन के पद परताप उजागर सैना, धना. कवीर विदित थ‍ रहरि सुखानंद जन पीपा अनंतानंद जगत पावन भल ॥ सुम सुरानंद भजन भट पद्मावति, भावानंद गुन निधि। भ‍ सान बजायौ जग में धनि रैदास कुलीन मेटि विधि ॥ मं‍ दी करन बहु परचय इन भक्तनि के गुरु प्रसाद बल। वृन्दा‍ न बंदि चरन रज जो चाहौ हरि भक्ति महाफल ॥६४॥

दृढ़ व्रत एक अनन्य धरयौ है।

ने श्री तुलसीदास सुभग मति राम चरित बहु विधि उचरयौ है‍ कुल तिलक अवधि सुख वरपे तिन पद गाढौ नेह करयौ है‍ ायन भाषा करि गाई जातें सबकौ काज सरयौ है ॥ सीतापति नाम निरन्तर रसना रटन सुभाउ परयौ है। वृन्दावन हि‍ ा उदित रवि कहत सुनत जग तिमिर हरयौ है ॥६५॥

नेह निपुन हरिजन पन पारत ।
मुकुट प्रीति सों कैसें आपु नाय सिर धारत ॥
नोरथ कीनों उभै भक्त कौ काज सँवारत । गऊ
हठ राख्यौ अस प्रभु कृपा विदित विस्तारत ॥
त्र दंडौतनि धायौ हरि तिहिं हेत विचारत । करि
पठायौ आनि मुदारि भूत ओर निहारत ॥ बीच
मधि दुष्ट जाय ताकौं वन मारत । कीनौ आनि
जब अबला कहि राम पुकारत ॥ सत्य प्रतिज्ञ राम
जिवाय विपति सब टारत । वृन्दावन हित रूप
नै कौ छिनहूं न बिसारत ॥६६॥
पद्म नाभि के हरि धन मोटा ।
न रुचि उर धरि खरचत कबहूं परत न टोटा ॥
धाम श्याम कौ जा आगे कियौ सब सुख छोटा ।
रे हरि हरि कहि छांडि दयौ जग फोकट खोटा ॥६७॥
देखौ कृपा श्याम सुन्दर की ।
जै कौरौनि घर भाजी रुचि विदुर के घर की ॥
रानी लाई हरि मुख देति आपु मृदु कर की ।
रति छिलका प्रेम विवस ऐसी मति टरकी ॥ पुनि
त पावत हौं बलि भक्त वछल गिरधर की । हरि
नहिं पावति भक्त घरनि मन प्रीति गहर की ॥
ग सींवां लोचन की गति जामें अरकी । सुधि न
स भूलनि आये विदुर बात जब तरकी ॥ तब
ति विधि सौं, नहिं वह स्वाद गहन यदुवर की ।
अंकनि धीर यह बड़ दया अनुज हलधर की

नातौ नेह दास सौं सांचौ यातें भक्ति धुजा जग फरकी ।
हित रूप जाऊँ बलि ताहि न भजत विषै रति नर की ॥

भक्त पैज राखत मन भावन ।

जन के काज आपु पन भूलत हौं बलि बलि जग विरद बद
कृष्ण कह्यौ आयुध न गहौं कर भीषम कह्यौ धरि टेक ग
रन संग्राम पंडु पुत्रनि कौ दुहूँ दल मध्य सुयश सरसावन
कर्म कियौ आप कृपानिधि विविधि भांति अंधनि समझावन
नी सुनी न सीख दई हत करन लगे छल भेद उपावन ॥
त सारथी ह्वै कै गहि कर डोरी अस्व नचावन । अर्जुन व
ालत यौं ज्यौं कृपन कुटम्बहि पालत दावन ॥ पारथ पै
व कोपे तीछन बान करत अति घावन । जन की गिरा
रिवे कौ चक्र पानि लैं सनमुख धावन ॥ बिथुरी अलक पी
रकनि छवि मन मथन मत्त गज आवन । वदन प्रस्वेद कछु
डिन भूपनि कौ दृग फल दरसावन ॥ पुनि कुंती सुत पन
यौ दुष्ट जैद्रथ सीस हनावन । दल बल मद भंजन यदुन
जोधन निरवंश करावन ॥ गई भूमि थिरु थापि बहुरि कै
ी कौं भुवन बनावन । वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि धा
(छत्र फिरावन ॥६६॥

येइ कृष्ण होहु गति मेरी ।

पुत्र निवेद उपायौ अंत समय आय मम नैरी । सुनि हो
य भक्त मेरो हरि चरितनि की कथा घनेरी । यज्ञ भोगता त्रिभु
पी सो यह करत दूत छन तेरी ॥ जा को सजन सारथी जा
ो गति न निगम हूं हेरी । अर्जुन मित्र श्रवनि पद गहै
ी त्रप जिन सो मति जेरी ॥ सो जु सहाय धनुष धर

नी अनेरी। को जाने इहि भेद भूप सुनि तः
पति की हेरी ॥ वह छवि कुपए गड़ी हिय मेरे र
फेरी। मुख श्रम स्वेद अलक रज मंडित धा
वगेरी ॥ जो जो कहत कमल दल लोचन मो से
री। वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि तजि दै सबै
०॥

जे जन ब्रज रस उदधि परे हैं।
न ज्यौं थिरकरा तिनहिं आन सुख मव बिसरे हैं॥
कावल्लभ देखौ कौतिक चरित करे हैं। जन आदि
ठौर ठौर ब्रज भूमि भरे हैं॥ तिनहि विदित
बहु आचरज रूप धरे हैं। एक एक लीला प्रधान
मन संश हरे हैं॥ तिन पद वंदि कछु गुण वरनौं
अरे हैं। वृन्दावन हित रूप जाऊं बलि जिन
। तरे हैं॥७१॥

* राग हमीर ताल चर्चरी *

त गौरंग जिन प्रगट पद्धति करी।
न अखिल सौभग लता मधुप आसक्त पिसु
री। अस हिये हिलग वन रसिक पुनि रसिकिनी
मित संग सहचरी। केलि कौतिक नई जहां छिन
। हरिवंश परसंश जग विस्तरी॥ इहि भजन
रस संचरयौ भानुजा नंद सुत हरषि बांटै परी।
ादित सब जग दियौ वेद विनु इतौ सोधि सुमति
धिका लाल जिन प्रेम परचित भये कुवँरि करुना
की ढरी। वंदि हित रूप श्री श्यामनंदन सुखद

भव उदधि तरन कौ सुविधि नौका रच्यौ

जयति श्रीव्यासनंदनशुकाचार्य मुनि निकट गति देखि वहु युक्तिनु सच्यौ ॥ राजकुल कथा दृढ़ दार जिन निर्मयौ ज्ञान वे श्रुति सार कीलन खच्यौ । संधि अविरुद्ध सतसंग रोगन चित्रकारी चरित बहुत अपु मत पच्यौ ॥ हरि जनम कर्म वितानौ कियौ कृपा मारुत बहति रंग कौतुक मच्यौ । गुरु हेत खेवट सुगम रीति सौं भक्ति वल्ली ललित पार करत न हच प्रबल परताप सब लोक ग्रस भागवत सराने अनुसरयौ सो गाथा नच्यौ । प्रभु परम धर्म के घात सूधी वली वृन्दावन नन्दि काल दह तें बच्यौ ॥७३॥

किये जन निकट परछांह गिरिवर धरन ।

जयति श्रीवल्लभाचार्यदत जासु कैं भक्ति नवधा सुधन जगत मैं करन ॥ गिरिवर्य्य निकट व्रजनाथ सेवा सुहथ सहित अनुराग व प्रफुल्ल सुख भरन । नंदनंदन रसिकलाल लीला ललित फलित भूमि कौ विमल यश बिस्तरन ॥ पुष्टि मारग कथा गोप्य चरितवल वाल क्रीडा प्रचुर यशोमति रुचि ढरन । वृन्दावन हित प्रेम कर तासु कैं ले भय विदित गोपाल गुण अनुसरन ॥७४॥

ऊनयौ भक्ति वर दैन श्री भट्ट घन ।

र मरित भरं जन अमित सीतल करं नन्दनंदन कुँवरि भानु र भजन ॥ हरिन गुन भगिन अनुराग कल फलित भये त्रिवि ये ताप जब चरन कीनौं नवन । प्रणित चात्रक मोर हरखि ण रटन सुविधि आरति हरन देख तिन सुदृढ पन ॥ नडनि चहूं ओर मारुत वहै सुगन्ध यश गान गंभीर गर्ज

ानंद मत्र भृंग प्रफुलित हियें वृन्दावन हित सुभ
नन ॥७५॥
हा महिमा युगल जासु रसना फुरी ।
कट निपट कमनी भवन मिथुन रस रवन वरनी कल
कुल धीर अति वीर रस भजन पथ जयति हरिदा
नुभव दुरी । हारि सौरभ पुलिन जान विपिनन सर्न
भावना ह्न दुरी ॥ थिकट वैराग अनुराग दंपति
ां कथन रूप रस माधुरी । वृन्दावन हित सकल
अति कृपा सींच्यौ हियो कुँवारि विपनेश्वरी ॥७६॥
का लाल की व्यास महिलिनि अली ।
ो रूप रस युगल कौ असत आलाप इत उत न
ह गुरु पद सुदृढ साधु सेवा सु रुचि महा परसाद
ाली । युगल रस रीति कौ विकट गति आचरण
ा महा माइनि फली ॥ विमुख संगति बुद्धि सुपन
दसधा प्रबल बढ़ी छिन छिन भली । अनन्य व्रत
वनत भये मिथुन रति केलि कै माहिले सुख पली ॥
लाड विस्तरन कौं चाह चित नित नई, सुमति
वृन्दावन हित अचल वास वृन्दाटवी जासु परसाद
र रली ॥७७॥
ति विठलेश व्रज भूमि सुख निर्मये ।
बुद्धि तत्पर भई राग अरु भोग संयुक्त नित नित
प्रगट गिरिधरन पद निकट रितुहि अनुसार बहु
घोष पति सुवन जिन प्रेम बस अस निरखि आपु
भोजन लये गुण उजागर नवै चरन अवनी

पाल वल्लभ सुवन भक्ति विरवा अमित जननि के उर बये ।७

युगल एकान्त रस रीति भेदी भजन ।

रसिक मंडन सभा वास कानन सुहृद जयति वनचंद अति प्र
संसति यजन ॥ केलि कौतिक कुंज पुंज सुख गहर के तहां गह
सुमति विपुल आनंद सजन । विधि अविधि रही जिही रंग भीज
हैये कुशल हित दत विभौ पाय घन ज्यौं गजन ॥ भक्ति भार
ील सुहृद सुभ आचरन उग्र परताप लखि कूर कर्मठ लजन
रनि अनुसरत जन भये जग उद्धरन वृन्दावन हित विदित सुय
ानक बजन ॥७९॥

कृष्ण दयिता चरन प्रीति अति जासु कें ।

म करुनन श्रीव्यासनन्दन तनय हौं जु बलि जाऊँ श्रीकृष्ण हि
स कें ॥ फुरित अनुभव ग्रन्थ विविध रचना करी सुमति सं
कर चरित्त रस रास कें ॥ कुंज थल सुभग श्रीमंत नागर रच
व तिहि मगन हिय अमित हुल्लास कें ॥ भक्त जन मान वर्द्ध
नत रीति सों तिनहि मिलि कथन यश श्रवन रस चास कें
ति वृषभानुजा ओप अतिशय दई वृन्दावन हित भक्ति प्र
ाम कें ॥८०॥

* राग विहागरौ *

श्री हरिव्यास जगत यश छायौ ।

तेज दृढ भजन महाबल भक्ति श्रवन हरिनाम सुनायौ ॥ श्री
परम कृपा कौ भाजन भक्ति दान जिन सबहि छकायौ । तातैं
संत जन अगणित मिलि तिन सौं गोपाल रिझायौ ॥ दया
। उर रहत निरन्तर हरि गाथा पावन रसना गायौ । वृन्दावन

प्रापति कीनौं जो कर धरि अपनायौ ॥८१॥

परसराम हरि चरित विस्तरे ।
हियें रति सांची जिहि प्रताप नर भूप पग परे ॥
कृपा अस वेरषे जिते अपावंन सबै सुचि करै ।
न साधुजन सेये जाते कारज सहज सब सरे ॥
उपकार महीतल प्रभु अज्ञा अनुसार हित ढ़रे ।
त हरि रस लीला गावत नित आनंद उर भरे ॥८२॥
कथी नीकी विधि धनि बिल्वमंगल रसिक महा मन ।
जेनके उत्कंठा दिन दिन बाढी विरह विथा तन ॥
ा नैंन हूं त्यागे विनु देखे न सुहाय स्याम घन ।
कमल दल लोचन समझि पलाय चले जु गिरधरन ॥
रि हिय दृढ़ बांधे भजन रसमई खेत वसे वन ।
रूप जाऊँ बलि राधारवन सार संच्यौ धन ॥८३॥

उद्धारी पूरब विदित मही है ।
कृपा की जिहि थल सरिता उमगी बही है ॥
नाम सदा संकीर्तन रसना द्रवित रही है ।
जासु कर परमत प्रणतनि लवधि लही है ॥
त गोपिका वल्लभ व्रज बसि भजन कही है ।
दरसाय जननि की संशय शूल दही है ॥
। सनातन रूपहिं निपट सुदृष्टि चही है ।
त चरित कथन मति दिन दिन अति उमही है ॥
भक्ति निरबाधित दायक टेक गही है ।
हेत रूप उभय जग पावन बिरद सही है ॥८४॥

महामति रूप सनातन धीर ।
ब्रज रस रसना धारा वरषे कृपा करी बलबीर ॥
नंदनंदन मिलिवे की आसा नैंन द्रवित रहै नीर ।
भक्ति सार संग्रह्यौ सोधि सब संश मिटावन पीर ॥
(श्री) राधा हरि आलय निजु सेयौ सुभ कालिंदी तीर ।
जहां ब्रज वसत गोप कुल वरन्यौ परिकर हरि आभीर ॥
दृढ़ वैराग कुठार धार काट्यौ जग तरु अति वीर ।
वृन्दावन हित दोऊ भैया सकल गुणन गंभीर ॥८५॥

* राग परज *

वंदौ सूर परमानंद ।
उभै भक्त बानी जग पावन निर्मल यश ब्रजचन्द ॥
ब्रजवल्लभ गोपीजनवल्लभ ब्रज दूलह नंद नंद ।
तिनके चरित फुरे जिन उरवर सकल सुखनि को कंद ॥
यशुमति सुत दुलरावत गावत हिय भीजे आनंद ।
तिनके गुण गन सुमिरत जे नर सरस होत मतिमंद ॥
गिरा गंभीर विचारत छूटत जग दारुन दुख फंद ।
वृन्दावन हित पद पद प्रति जिन सच्यौ भजन मकरंद ॥८६॥

* राग सोरठ *

गिरधर कृष्णदास ही रचे ।
द्वै मिलि नाम विदित जगत एकै मणि कुन्दन ज्यौं खचे ॥
सूरसागर संग चरचा करत बानी हचे ।
घटती परन न दई जन की आपु मुख पद सचे ॥
नटी प्रभु के पास भेजी कुमति देखत तचे ।
नाथ परिकर मांहि राखी भक्त पन नहिं लचे ॥
हरि दिस तैं भोग लाग्यौ छैन सो खलचे ।

न्दिर में दिखायौ प्रेम अति परचे ॥
लि चलि लाल गिरधर भक्त बस यों नचे ।
हित प्रीति ग्राही और गुन बिरचे ॥८७॥

राग बिलावल

स्वामी सौं बनी गिरधरन मिताई ।
नी गिरि तरहटी तहां खेलन जाई ॥
दाव दिये बिना घर चले पलाई ।
ईं गोविन्द लगे मन कुपित महाई ॥
हरि सदन में बैठे बदन दुराई ।
। गोविन्द फिरैं तहां कछु न बसाई ॥
ख्वनि जाय कैं तब बुद्धि उपाई ।
मारत कांकरी मन मुदित कन्हाई ॥
जानै नहीं कहै मति बौराई ।
चकौं डाटि कैं बैठे मग आई ॥
ेम सनेह की ता बिनु अकुलाई ।
पायौ नहीं गोस्वामी जताई ॥
द के रूठने मुहि कछु न सुहाई ।
जिमाई कै तब हरि सचु पाई ॥
क्रीडा प्रचुर सो शुक मुनि गाई ।
हेत साथ अस गोविन्द मन भाई ॥८८॥
। सनेही की सुनि बात अलेखे ।
न भये दृष्टि पथ मुख उठते रेखैं ॥
न तन लहलहै धरि नटवर भेषैं ।
नेक मन हरि लियौ भरे विरह विशेषै

लीला गिरधर लाल की बहु भावनि देखैं।
वृन्दावन हित रूह बलि तन दसा न पेपैं ॥८९॥
छीत स्वामि कल्यान के जीवन गिरधारी।
रसना यस सरसति रहै छिन छिन प्रति भारी॥
गुण गरिष्ट अति हिय रुचैं हरि बाल विहारी।
लीला गिरधर लाल की सबही विधि प्यारी॥
श्रीवल्लभ गुरु सुदत करि मति भई सुखारी।
वास सदा गिरि तरहटी अति मंगलकारी॥
इष्ट मिष्ट उर चरित सचि रचि सुपद विचारी।
वृन्दावन हित भाव दृढ़ वन केलि निहारी ॥९०॥
मदन मोहन जन सूर की दृढ़ छाप जटी है।
नाम दोउ एकत भए अस प्रीति पटी है॥
युगल रूप रस गुण चरित रसना जु रटी है।
पद पद प्रति जाकी गिरा विवि नेह गटी है॥
जाकी बुद्धि कृपा वलित वरनत न हटी है।
उभै रसिक रस रीति में हिय लाग डटी है॥
पूरब अलि मन भांवती इहि कलि प्रगटी है।
वृन्दावन हित मिथुन सुख जिहि सुमति अटी है ॥९१॥
हित मारग पहुच्यौ निवटि सेवक अति बांको।
व्रत अनन्य धरि सुभट दृढ़ दियौ परन न भांकौ॥
सकृत रीति मरमी सुविधि गह्यौ गाढौ नांकौ।
श्रीहरिवंश सुनाम रति बज्यौ आनक डांकौ॥
धर्म कसौटी पर लस्यौ कुन्दन विनु टांकौ।
गुरु में हरि पूरन लखै कियौ इहि कलि सांको॥

नाम हरिवंश इक नहि दूजौ आंकौ।
र्यौ मन क्रम वचनवल हित पद धांकौ॥
गगन अंम्बुद उमै झर रूप सुधा कौ।
। हित रूप वलि चात्रकि तहां कौ॥६२॥
मोहनदास के हिय भक्ति मंचाई।
श प्रताप ते दिन दिन अधिकाई॥
म गुरु चरन सौं वढी प्रीति महाई।
तरे सुख मिले रस लवधि जु पाई॥
मोहन जननि मिलि अति कुमति कमाई।
ायौ यवन सौं प्रभु भली बनाई॥
पित ह्वै कैं कह्यौ दै इष्ट दिखाई।
वृंदाटवी उर मुकर लखाई॥
त्त मूर्छित भई गति मति बौराई।
राध छमाय कैं वंदे पद आई॥
संग तज्यौ तहां यद्यपि प्रभुताई।
नि उर नित बसैं यह बात जताई॥
ष्ट को नेम नित दियौ जग दरसाई।
ान त्याग न करयौ समरथ दोऊ भाई॥
वत कलप तरु फवी भाग निकाई।
हित रूप वलि सब आस पुजाई॥६३॥
। निरख्यौ भलौ पूरौ नरवाहन।
प्रसाद तें भरयौ भक्ति उमाहन॥
क जान्यौ विपुल हरि भक्ति जु हीनौ।
हौ दर्वि तब ताकौ हरि लीनौ॥

ग्रह रोक्यौ षट मास पुनि मारन मन कीनौ।
कंठी ता गर बांधि कैं, दासी मत दीनौ॥
अरध निसा बीतें जबैं सोवै नृप आई।
ऊँचैं स्वर गुरु नाम लै उबरै ज्यौं भाई॥
रीति भाँति चेरी कही गुरु भेद बतायौ।
श्रीहरिवंश सुनाम जिन आरति भरि गायौ॥
गुरु पद गाढो नेह अति सुनि नींद गवाई।
हिये प्रेम पूरित भयौ उठ्यौ नृप अकुलाई॥
निकट जाय बूझन लग्यौ तजि मान बडाई।
तू सेवक कहि कौन कौ दै मुहि समुझाई॥
तुलाधार उत्तर दियौ हौं हित पद चेरौ।
नरवाहन तिहि पग परयौ छिमि पाप सुमेरौ॥
तिहि छिन बंदी काटि कैं बहु विधि पहिरायौ।
दर्वि दियौ सब सोधि कैं अपराध छमायौ॥
विनती कीनी दीन ह्वै गुरु सौं जिनि कहियौ।
मेरे खोटे कृत्य के तन भूलि न चहियौ॥
वनिक बचन कहे कपट के चेरी ते जानैं।
नरवाहन गुरु धर्म रति ते सत्य सुमानैं॥
नाम लार बचे प्रान धन यह गति लखि पाई।
वनिक आय हित पग परयौ सब विथा सुनाई॥
गुरु रीझे ता समझ पर अस प्रीति निवाही।
चौरासी मधि युगल पद दिय अपु कृत ताही॥
गौर स्याम रस केलि वन नैंननि दरसाई।
वृन्दावन हित रूप वलि लीनों अपनाई॥९४॥

वृंदावन आप कैं बढी प्रीति न थोरी।
चन्द अवलौकि कें भये आप चकोरी ॥
दरस्यौ रास जब भई गति मति रौरी।
जि अलि यूथनि मिले सुख रासि बटोरी ॥
ल ना भिलना अरि जिन कमगि न छोरी।
गति दुर्लभ सो लही यह सुदन किशोरी ॥
रिवंश कृपा विपुल भई निज जन ओरी।
वन हित विदित जग रही नांहिन चोरी ॥६५॥

* राग सारंग *

कियौ गौड देस पावन सकल।
धारि मन क्रम वच चत्रभुज श्री हरिवंश बल।
बल जिन उपदेशी तारे भूत अनंत थल।
क इष्ट सम सेयौ मुरली धर प्रभु छाप भल ॥
हरि हरिजन महिमा कथ्यौ उधारन महीतल।
मुख किये हरि सन्मुख जिन गंज्यौ पाखंड दल ॥
कृपा कौ भाजन भक्ति तेज कियौ नाम अल।
रूप जाऊँ बलि युगल रहसि पायौ सुफल ॥६६
सुनि रहनि नागरी दास की।
गूदर तन जरि मधुकर वृत्ति पुनि तास की ॥
वैराग लही जिन संपति सस निवास की।

सिंह सर्प जिन के ढिंग खेलैं रंचक संक न तास की
बिना अहार तीन दिन बीते दरसी मणि ब्रज वास की
दियौ प्रसाद तक्र पुनि बोली बोलनि परम हुलास की
मांगि पाय नित ह्यां को तावैं तजि हठि बैठनि आस की
लेत प्रसाद प्रेम अति सरस्यौ भई मति विपुल प्रकास की
जान्यौ चरित्त कुँवरि कौ जब तब बानी भई अकास की
करि बिस्तार जनम लीला सुदि आठैं भादौं मास की।
लली जनम सोहिलो प्रगट भयौ बानी फुरी अनियास की
वृंदावन हित व्यास सुवन दई खोलि लवधि रस खास की।

सुख गहकनि स्वामी लाल की।

बाटैं परी कुंज रस वैभव रसिक कुवँर नव बाल की॥
कहनि रहनि सब ही विधि बांकी समझनि हित के हाल की।
धर्म अनन्य रीति रस मरमी कहा कहौं सुमति विशाल की॥
बोलनि चलनि कहा बकु जानैं जैसे मत्त मराल की।
यौं विषई न भजन रति पावत थोथी कूटनि खाल की॥
सकल वासना मन की जागीं कृन सब जंजाल की।
कथा लाल हिलग मन उरझ्यौ गुन गूंथनि ज्यों माल की॥
जनन दन पाई वन रस संपति श्री हरिवंश कृपाल की।
वृन्दावन हित वरनत बनति न महिमा ताके भाल की॥६

हित दामोदर स्वामी यथा।

... न हित श्री यमुना वढि लहरिनु द्वार चढी कौतिक यथा॥
... था लाल सब भांति पुजाये जे जे किये मनोरथा।

वास नेम कियौ पशु बाहिर न धरयौ तथा
कास कृपा दत्त सूभि परयौ अपनौ पथा
। रूप जाऊँ बलि प्रापति कुंज महल गथा।
गल रस विमल विमल जिन गायौ।
रसिक पद्धति जिन अतिशय ओप चढ़ायौ॥
नैन दंपति दरसन कौं खांन पांन बिसरायौ।
भक्ति रसिक राधा करुनां उपजायौ॥
सरोज सीस पुनि तिन तें यह वर पायौ।
गौप्य रस रसना ना छिन तें सरसायौ॥
प्रसाद फुरी ताकौ प्रताप जग छायौ।
सुकृति अनुरागिनु रहसि भजन मन भायौ॥
चरन अंबुज सौरभ मन मधुप घुमायौ।
रूप जाऊँ बलि महलिनि अलि कहायौ॥१००
वन लगनि प्रबोधानंद की।
माधुरी अलौकिक धाम कथा सुख कंद की॥
न सिंधु झकोरनि सुमति मगं आनंद की।
य पुनि बोलनि गमकनि रसिक नरिंद की॥
नालय मनोगति नहि भय माया फंद की।
न दई करुनां करि दृष्टि खोलि मति मंद की।
न रीति विकट पथ मिटी रहसि युग चंद की
व्यास नंद दत्त गोचर निधि लही छंद की॥१०
न रहसि भुमनि जिन रुचि धरी।
कृपा कौं भाजन नवल दाम समकनि खरी॥
गनि करि मृदु सुमके रस झलकैं झाँकै भरी।

पुनि परिचय दिल्ली पति दीनों अकथ कथा जिन विस्तर
ग्रह रोके बाहिर तारौ दै पुनि बेरीं पायनु भ
ताही छिन आये बन जाकी निरबंधनता प्रभु कर
प्रात खबर पृथ्वी पति लीनीं ज्यौं की त्यौं सांकर ज
देखैं खोलि नवल तहां नांहि अति अचिरज मति अरबरं
दूत भेजिकें बहुरि बुलाये ये निसंक गये तिहि घ
चरन बंदि अपराध छमायो लखि परचै नृप मति डरी
लेहु कछू सुदृष्टि करि मो पैं ये बातैं तिन उच्चरं
बंदि छुड़ाय नवल तब बोले हम सब चाह निरादरी
नृप विमन लखि दया अति भई लई एक जब कामरं
हित प्रसाद बैराग सुदृढ मति यवन सभा पद अनुसरी
श्री हरिवंश जाहि अपनायौ कौन करै तिहि दूसरी
वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि युगल कृपा जा तन ढ़री ।

देखो भक्ति हिये ही की फली ।

हरीदास रस गोप्य उपासी गुरु प्रताप दरसी गली ॥
कुंज रहसि कौं ध्यान निरन्तर अवगाहै तीरथ चली ।
दै निसांन वृन्दावन पायौ जगत विदित गाथा थली ॥
पुनि केहरि ते गऊ छुडाई स्तुति करी नरहरि भली ।
आयु सहित सुत देह समर्पी बुद्धि न ननक चली हली ॥
तब प्रभु रूप चतुरभुज कीनों ये चितवन लगै भुव तली ।
गुरु दत्त ध्यान इष्ट मुरलीधर अटक खटक हीगैं सली ॥
बोले नाथ मोहि आराध्यौ अब क्यों मुख मोरयौ छली ।
रहित काज आर्ध्यौ यह वपु कब मनसा दरस हली ॥
भुज सहित सरिकर मुरलीधर दरसे प्रभु प्रणतनि पली ।

भक्त दृढ़ता लखि टेक नहीं जाकी टली ॥
साद युगल धन पाय मिटी उर कलमली ।
रूप जाऊँ बलि दिन दिन मांनी रंगरली ॥१९
कुल पारथ अचिरज कौन है ।
पर कुल पावन जाके सम को हौंन है ॥
नाभाजी कौं उपमा दई अनेक है ।
देह दत जैसे बलि सम जाकी टेक है ॥
द महा मति सीस दैंन जग देव कलि ।
ृपा तें इहि विधि भक्ति कलपतरु सरस फलि ॥
एक इहि कलि में तिलक दाम धरि पूज पद ।
असमंजम हूं लखि प्रभु मम समझे कृपा हद ॥
परीक्षा लीनी व्रत तें नांहि हल्यो चल्यौ ।
रूप जाऊँ बलि अजित जीति परिकर रल्यौ ॥१०
अनन्य व्रत गोविंद को बांको ।
निर्वाह्यौ कलि में परयौ नहीं झांकौ ॥
तूँवर जग कहियतु दिन दिन भक्ति सँवाई ।
त चलै मुख आगैं सुमति प्रेम निधि न्हाई ॥
धुर बजावै ऐसी उपमा को है ।
हन वंशी जग मोह्यौ ताहू को मन मोहै ॥
यह बात जगत में पृथ्वी पति सुधि धाई ।
लाय कही अब वैसी मुरली देहु सुनाई ॥
र सूर क्षत्रीपन बोल्यौ वचन विचारि ।
ौ प्रभु आगै बाजै तुम आगै तरवारि ॥
गाढी परी अब यह हुकम कियौ पातिसाही ।

कै मुरली की टेर देहु के अंबर चंपू पै वाहि
संक्यौ नहीं इष्ट बल निर्भय वाही त्यौं ही जाय
श्रीहरिवंश प्रताप दास पन दीनौ जग दरसाय।
जन के पन कौं हरि मन लरजत भक्त वत्सल सुखदानी
वृन्दावन हित रूप विदित यह बात नहीं जग छानी॥

यशवंत करी सो को करै।

धनि राठौर वंश जैमल सुल जाकी करनी मन हरै॥
जैसे वेद व्यास के शुक मुनि भक्ति सतगुनी विस्तरै।
ऐसे ही यशवंत पिता की रहनि चरन आगे धरै॥
सुत बधि कियौ भेष हरिजन धरि ताकी तात न अनुसरै।
देख्यौ विमन साधु पुनि ताकौ दै कन्यां पायन परै॥
कातें वनै भक्ति अस तीच्छन कायर देखत ही डरै।
सूर धरि काउ निबटि ठाहरै खेत परै मारै मरै॥
परम धर्म पथ को रन थंभन कहत चरित मति अरबरै।
मन की वृति भावनां तत्पर कुंज केलि कौतिक अरै॥
श्रीहरिवंश अभै कर जा सिर प्रेम मत दृग जल भरै।
वृंदावन हित छिन २ प्रति नित हरि भक्तनि पद आदरै॥१

रुचि अधिक कल्यान की।

राधा वल्लभ अंग सिंगारन नित नव प्रीति सुजान की।
ति केलि चरित अनुरागी वनति न उपमा आंन की॥
भगटी माहिली महली ललक हियें रस गान की॥
ी लगनि इष्ट पद पूजनि पुनि संतनि सनमान की।
ाटवी वास निश्चल मति भई वचन गुरु दान की॥
हरिवंश कृपा तें विसरी जग विधि वेद विधान की

त पूरन दोऊ गरुवे गुननि प्रसंश के ॥
र गुरु आराधे त्रिविध ताप जग नंश के ।
पति सुख नित नव भेदी हिय की गंश के ॥
। प्रहार निरन्तर मो मिर पद अवतंश के ।
। मेथुन केलि सर मनु छौना युग हंश के ॥१०८॥
कहा बरनौं चरित कृपा मई ।
भाग्य पराविध अकथ कथा तिनकी भई ॥
ृष्टता विचारी दूती तिन लारैं दई ।
साधु दरसन मिस लै ताके नेरैं गई ॥
। देखि भई अबला सबल दया प्रभु निर्मई ।
यौं करुना निधि सब विधि रच्छा करि लई ॥
यवन कौ अपनी तब जु बुद्धि औरें ठई ।
अपराध छमायौ भक्ति तेज छाती तई ॥
चरन जिन सादर प्रीति बढ़ाई नित नई ।
विदित लाज जन राखी हरि कीरति छई ॥१०९
रस क्रीड़ा युगल किशोर की ।
। खडगसैन के मिलनि रसिक चित चोर की ॥
कनक कपिश पट मुख विधु मुरली घोर की ।
बनितनि लियें डोलनि वन घन खोरि की ॥
देह जिन त्यागी भाग्य न महिमा ओर की ।
परम गति पाइ उपमा बनत न जोर की ॥
रीति रस भेद मति सुख सिंधु झकोर की

वृन्दावन हित रूप उभै विधु तहां गति भई चकोर का

अति भक्त भजन मति दृढ़ रही।

श्री हरिवंशदास कुल पूरो काइथ भक्ति अचल ल
तिलक दास सौं सांची निष्टा देह अंत जिन नि
ठग हरिजन धरि भेष गरल दियौ प्रभु निरविष कीनौं स
प्रभु हित पाक करायौ तामैं उन विष दै मारन न
सो हरि भोग धर्यौ निर्विष ठग की देह गरल द
वाकौं जाय नर्क इथां दीनौ इथां अचिरज सिमटी म
करुना बढी भक्त मन अति हीं नाथ जिवावौ अब या
आरति सहित नाम लै प्रभु के टेरत हठ गाढी र
अपनौं भक्त दुखित लखि नगर तब सचेत कीनौं व
उठि हरिवंशदास पद वंदे पुनि परलोक कथा क
तुमनि कृपा करि नर्क छुटायौ दास करो मुहि आप ह
ठग को कपट भक्त की दृढता प्रगट भई ज्ञानी न
वृन्दावन हित कुमति नरनि की भक्त चरित देखन ठही ॥

* राग कान्हरौ *

धनि श्री जीव गिरा मन हरनी।

दिन दूलह ब्रज राज लाडिलौ दिन दुलहिनि राधा छवि वर
मन क्रम वच वक्त साधु ब्रत निर्मल जिन की रहनि जगत ज्वर ह
सखा हरि परिवार कथन कौं रसना महा सुधा रस भर
रहनि कहनि दोऊ जग पावन सुमति युगल चरितनि विस्त
श्री वृन्दावन वास अदूषित संतनि संग प्रीति दृढ़ कर
जाया माया ते मति मोरी प्रेम चढ्यौ सेवन वन भ
वृन्दावन हित हिय गंभीर सर भक्ति तोय अमृत सचि भरनी ॥

नंद दास पद बरनै रचि रचि ।
ुल रस आलय दंपति चरित धरे तहां सचि मचि ।
ाम महामणि उर कंचन धर राख्यौ खचि खचि
जु पारखू देखि रहे अनि अचिरज पचि पचि ।
म पहेरौ नीरस निकसन जातें बचि बचि ।
ःसुनि न सुनि उठति कविनु हू की मति नचि नचि ११३
मीरा भक्ति निसांन बजायौ ।
त ज्यौं अचयौं भजन तेज जग में दरमायौ ॥
टला करि करि हारे कुमति कछु न बसायौ ।
ल नहिं बांकौ दिन दिन निर्मल यश जग छायौ ॥
बढी रति सांची लीलामृत रसना अचवायौ ।
कृष्ण विरह भरि परिकर मिलि संत यश गायौ॥११४
ब्रज अवनी सुख भजन परायन ।
लन के जे थल ते जु प्रकासे भट्ट नरायन ॥
क्ति दृढ भाजन भक्त वृन्द मिली रंग बढायन ।
द नंदन की लीला फुरी हिये रस भायन ॥
ा ब्रज मंडल रसनां निर्मल हरि गुन गायन ।
कृष्ण केलि सर गहकि २ भीजें चित चायन ॥११५
भट्ट गदाधर विमल महामति ।
मति बहु भांतिनु राधा रूप सुवन श्री ब्रज पति ॥
। जब उचरत सुनि सुनि बाढति कृष्ण चरन रति ।
क मन हरनि उरभरनि गाढी नेह युगल अति ॥
ास सदा रुचि जहां कुञ्ज थल खेलत दंपति ।
मुनि दुर्लभ पाई सो सुल्लभ जु परम गति ११६

धनि करमैंती जीती इंहि कलि ।
कृष्ण गह्यौ जाकौ चित बरबस लोक लाज डारी ता बल दलि ।
बालक वैस बंधु ग्रह पति तजि आई श्री वृन्दावन पग चलि ।
कियौ अहार फूल फल सूके वन निर्जन बसि धीर रंग रलि ॥
धा रसिक मिलन उतकंठा विरह ताप तन तायो निर्मल ।
ई लवधि मुनिनु जो दुर्लभ भाव भीतरे महा फलनि फलि ॥
गल नेह सौरभ सुख वीथी कमल कोश मंडरित मनौं अलि ।
दावन हित भाग्य परावधि जग असार तजि सार गह्यौ बलि ११

रसिक मुरारि भजन सुख सरसे ।
न तेज गज मत्त नवायौ सादर भक्त वृंद पद परसें ॥
हरि त्यौं हरि दास लडाये स्यामानंद कृपा गुरुवर से ।
वन हित कृष्णचरन बल परचय प्रचुर सकल जग दरसे॥११८

श्री नाभा उर अमल गगन लसि ।
यश ता मांहि प्रकास्यौ कोटि कला युत मनो सरद ससि ॥
उडगन ता आगे जानि न परत निकट यद्यपि बसि ।
किये सुभग सर सरिता पाप कीच डारी हिय तें कसि ॥
रि कुमुदनी जन मन प्रफुलित विपुल सुवास रही गसि ।
न निविड़ जा दरसत समाभ्क न पर्‌यौ गया कत्र करि नसि ॥
सुधा रस भक्ति निरन्तर ताप परसि निर्मूल गई त्रसि ।
हित अग्र कृपा तें अखंड मंडल निसवासर असि ॥११६
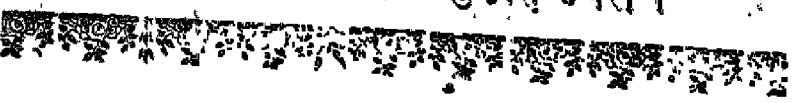
कलि में प्रेम भक्ति चल मान ।
र उपजी हरि ताके वस वनति न उपमा आंन ॥
भुव पति कियौ कौतिक सुनियौ मंत सुजान ।
हरन भयौ मुनि सागर हय चढि कियौ पयान ॥

* राग परज *

जिन माल दांम मों नेह निवाह्यौ है।
बन मत्य उ[illegible]रि जिन प्रेम बढ़ायौ है॥
[illegible] दाह बिनु सरिता स्तनक न्हायौ है।
[illegible] नवा ने ताकौं घर लै आयौ है॥
कहन सिगारि बंधु ज्यौं दाह करायौ है।
[illegible]न बदन भक्ति कौ मरमु न पायौ है॥
न विधि करि विप्र मिलि कुमत कमायौ है।
[illegible]नि नठे जब नव हरि चरित दिखायौ है॥
[illegible]द पा[illegible] उनरं जग सुश छायौ है।
भक्ति प्रताप संत पद सबहि नवायौ है॥
कौनिक कृष्न नाथ कछु परत न पायौ है।
हिन रूप प्रेम हरि हाथ बिकायौ है॥१२१॥

सन्त जन गुरु की गिरा करि।
[illegible]रेशा चलं ता कौं घर आइयौ प्रीति खरी॥
यौ नित ही पद दरसौं आडौं नांहि घरी।
धुनि रूप अपनौ कहि ता मन संश हरी॥
क्यौ ताही विधि सेवन न्हान पान बिसरी।
[illegible]र करैं वह पुनि पुनि सांची टेक धरी॥
[illegible]दन पधारे जब तब सबनि कुमति उचरी।

दास भाव स्वामी नाते की काहू न खबरि परी ॥
गुरु गंगा जल पैठि बुलायै देखत बुद्धि डरी ।
पदम पत्र प्रगटत भये ता छिन जन हित कृपा ढरी ॥
गुरु महिमा परताप दिखायौ गंगा साखि भरी ।
वृन्दावन हित दास आस की बेलि भक्ति फरी ॥१२२॥

विष्णु भक्त कौ थंभ शंकराचार्य विदित मही ।
जिन खंड्यौ पाखंड जैन मत राख्यौ धर्म सही ॥
रवि ज्यौं भयौ उदोत जगत हित विमुखनि कुमति दही ।
भजि गोविंद मूढ मति पुनि पुनि करुना सहित कही ॥
ईश्वर अंश प्रगट भयौ अवनीं छानी नांहि रही ।
परम धर्म मर्जादा थापी देखि मुदित सबही ॥
सब ग्रंथनि कौ सार मथ्यौ यह हरि पद गहनि गही ।
वृन्दावन हित मन क्रम वच जिन पर उपकार चही ॥१२३॥

वंदियै श्रीधर चरन तली ।
भागौत तिलक रचि कीयो यह कृत सब ही फली ॥
शुक व्यास उदधि सम आशै गहरी भांति भली ।
[illegible] थाह लैंन पचि हारे सब की मति दहली ॥
[illegible]खा ह्वै युक्तिनु काढे रतन सुमति कुशली ।
[illegible]र अच्छर अर्थ दिखायौ हरि पद मिलन गली ॥
[illegible] प्रमान श्याम कर अपने सब सिर तिलक बली ।
हरि जन सुनि सुनि रुचि मांनी पावन सकल थली ॥
[illegible]न जाकौं प्रभु कीनौं चाढी रंग रली ।
[illegible]न हित प्रगट देखियत गाथा सुयश चली ॥१२४॥

मोति रतन रची माला पहिरी उर अनुराग ॥
ंस मोती चुगी जाने रमैं मलिन सर काग ।
द विवाद तर्क हठ ज्यों विष उगिलत नाग ॥
ार संग्रह्यौ कृपा कर सुनत उठी मति जाग ।
ं आशा कुरुख तजि गह्यौ कल्प तरु बाग ॥
ल चाख्यौ शुक मुख कौ हियें गहगही लाग ।
हित और सुखनि सौं भयौ उग्र वैराग ॥१२५॥
श्री जै देव युक्ति अभूत ।
थम घोष यश गायौ अक्षर अर्थ अकूत ॥
ध रचे बहु उक्तिनु हरि रसना इक धूत ।
क वचन की रचना को कहि देऊ संयूत ॥
द गति त्रिभुवन में पूरि नेह कौ सूत ।
हित जासु गिरा वस नंद महर को पूत ॥१२६॥

* राग धनाश्री *

भक्ति प्रबल प्रताप सु गाऊं ।
रंचक कहूं आवै ता पद माथौ नांऊ ॥
गोविंद भजन को जगत प्रताप बढ़ायौ ।
ौ विवाद तहां महिषनु पै वेद पढ़ायौ ॥
ौ जानि अवज्ञा सकुचित ज्यौं नृप पावै ।
होनां तरु सौ भयौ सौरभ हरि मन भावै ॥
हिं आचार खींच करमा कौ प्रभु मन भायौ ।
प्रबल प्रीति बस सिल सुत हरि दरसायौ ॥
ा संपति रहि कैं हरि चरितामृत चाख्यौ

ानि चलत दियौ विष सुत कौ इहिं विधि तिन कौ राख्यौ
गत प्रान प्रभु सुतहि जिवायौ जानि सांचिले पन कं
दावन हित विदित सकल जग गाथा यह हरि जन की ॥१

यह फल्यौ भक्ति बिसवास सब जग जानिये ।
भक्त वछल यह विरद कृष्ण कौ ग्रंथनि विदित बखानियें ॥
रंगनाथ मन्दिर करन हो उभै भक्त मन दीन ।
सफल मनोरथ दास के प्रभु सब विधि पूरन कीन ॥
हरि जन वेष बधिक धरयौ हो माला तिलक बनाय ।
हर्ष बंधायौ अपनपौ मति बानें की पति जाय ॥
सुत बधि देख्यौ संत तें हो तदपि न धरयौ कुभाउ ।
दै कन्या आदर कियौ यह हरि मिलिवे कौ दाउ ॥
ग्वाल गंवाई भैंस वन हो कह्यौ दई पलटैं घीय ।
सत्य गिरा जनकी करी घृत सहित चौगुनी दीय ॥
भक्तनि के मन वचन हो फले मनोरथ गूढ ।
वृन्दावन हित हरि तजत क्यौं भजत और क्यौं मूढ ॥१

* राग सोरठ *

भूप दृढ तिलक दाम हित कियौ ।
भांड भेष हरिजन धरि आयौ लखि चरनोदक लियौ ॥
सांचे नेम प्रेम सौं ताकौं असन बसन बहु दियौ ।
गुरु गोविंद समान ताहि गनि वंदि चरन भरयौ हियौ ॥
भांड भेष हांसी हित धारयौ भयो नृवेद कर छियौ ।
वृन्दावन हित भक्त संग विनु को भव तारक बियौ ॥
देखौ नाम प्रबल प्रताप ।
भूप समझी महत महिमा मन ही मन जपै आप ॥

घरनि ताकी भजन सींवा सदा हरि हरि जाप।
पति कौ जानैं भक्ति हीनौं बढै हिय संताप॥
सोवत मुख बरराय हरि हरि नृप कियौ आलाप।
त्रिया सुनि सर्वसु लुटायौ मिटयौ हिय कौ दाप॥
नाम मुख तें कढ्यौ सुनि नृप कियौ अति बिल्लाप।
वृन्दावन हित देह तजि हरि पुर गयौ निहपाप॥१३८

ऐसौ गुरु वचन बिसवास।
स्वामी बात कहन कही रांमती चल्यौ वह दास॥
अब न अवसर बहुरि कहि हौं आय है जब पास।
स्वामी रहे समाय आयौ सिष्य भयौ उदास॥
फेरि भवन विमान लायौ विभु पुजै मन आस।
कियौ उठि उपदेश ता कौं अधिक हिय हुल्लास॥
यह लखायौ भेद गुरु गोविन्द नित्य प्रकास।
वृन्दावन हित रूप वंदौं गुरु यश मंगल रास॥१३१

* राग धनाश्री *

संत गुण सुमिरौ पावन कारी।
जिननि किये गोविंद प्रीति बस ता बल मही उधारी॥
सुमति सुरसरानंद भजन बल ब्रा वाकि छल खाये।
राखि प्रसाद महातम उगले तुलसी सुमन दिखाये॥
घरनि सुरसरानंद महामति वन वसि कै तप कीयौ।
बैठी ही एकान्त भजन रुचि आंनि असुर दुख दीयौ॥
सांची प्रीति इष्ट आराध्यौ हरि हरि मुख तें भाष्यौ।
प्रगट भये करुना निधि तिहिछिन नरहरि ह्वै सतु राख्यौ॥
सुखानंद भय हरन भक्ति बल दायक हरि यश चित के।

सुख सागर की छाप विदित जग पोषक संतनि चित के ॥
तत्वा जीवा जन दच्छिन दिस भुव तल भक्ति प्रकासी।
वृन्दावन हित हरि रस लीला वर्षत जगत सुधा सी ॥१३२॥

* राग कान्हरौ *

धनि धनि सुन्दर दास सुभग मति।
श्री हरिवंश चरन मनक्रम वच दिन दिन बाढ़ी प्रेम ललक रति ॥
श्री वृन्दावन मंदिर रचि कैं दुलराय नीकैं राधा पति।
पगनि घूंघरू बांधि सुनाच्यौ तन त्यागौं पाई दुर्लभ गति ॥
जा कौ भाग्य प्रसंस्यौ रसिकनि इष्ट रिझाये नाना विधि अति।
वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि धरि अलि भाव लही सुख संपति १३३

* राग परज *

कहौं कहा भागमती यश गाय।
कीरति पति पौरी जिन सेई संपति राज विहाय ॥
जाति पाति कुल पति सौं तोरी भक्ति प्रताप दिखाय।
विमुखनि मुख दै छार भजन बल बसी भान पुर आय ॥
राधा जन्म महा मंगल दिन कीनौं सुविधि बनाय।
रच्यौं दर्वि उमंगनि नित नित ब्रज जन प्रेम बढ़ाय ॥
अबला भई प्रेम अति सबला जगत निसान बजाय।
श्री वनचंद कृपा तें त्यागे कलि के सकल कषाय ॥
नवल नागरी दास संग करि भीजी दंपति भाय।
वृन्दावन हित महल माहिली संपति निरखी जाय ॥१३४॥

सनेही जा उर कृष्ण बसै।
तासौं बैर धरै जो सब जग बार न सीस खसै ॥
सुख सम्पति अधिकै दिन दिन प्रति भक्ति प्रताप लसै।

राधा कृष्ण चरित रस वारिध मन गज मत्त धसै ॥
कबहूं रुदित कबहूं तन वेपथ कबहूं गहकि हंसै ।
कबहूं गावत प्रेम मगन ह्वै दंपति विमल जसै ॥
जाकौ मुख देखत औरनि कौ हिय अघ ओघ नसै ।
ताकी तनक सुदृष्टि होत ही हरि प्रीतम दरसै ॥
सादर श्रवन सुनत पावन गुन उर अति प्रेम गसै ।
अजित परम योगेशनि जो हरि ताहि वेगि परसै ॥
माया बंधन हरि बल तोरयौ वहुरि न भूलि फसै ।
भवन पवित्र भक्त वह हरि कौ कृपा रंग बरसै ॥
हरि अस भक्त मिलावौ देखन मो मन नित तरसै ।
सदा बसै आनँद मंदिर रसना हरि नाम रसै ॥
जिनके चारु चरन रज जो यह मो सिर सदा घसै ।
वृन्दावन हित रूप भक्ति निधि इन दत हिय सरसै ॥१३५॥

* राग सारंग *

नित जिन घर हरि जन आवहीं ।
तिन की सदन पौरि रज बंदौ भक्तनि पद सिर नावहीं ॥
प्रभु रुचि मांनि बसत उहि मंदिर जहां साधु सचु पावहीं ।
हरि की अर्चा चरचा तिहिं ठां असत अलाप न भावहीं ॥
वे आलय तीरथ नर पावन हरि अपने मुख गावहीं ।
जे सादर पूजैं मम भक्तनि ते मुंहि कंठ लगावहीं ॥
सम दृष्टि निर्वैर भक्त जे सब हिय मोद बढावहीं ।
मेरो यश विस्तारत जग में दीनानि कौं अपनावहीं ॥
श्रवन कथन मेरे गुन निर्मल अनत न मन उरझावहीं ।
समझि असार तज्यौ सब मो बिनु कबहुं चित न चलावहीं

मोकौ परम प्रान ते प्यारे दासनि दास कहावहीं ।
सब करि चुके मोहि बस कीयौ जे श्रम संत लडावहीं ॥
मरघट भूमि सदन विमुखनि के तिन तन प्रेत सतावहीं ।
जीवत भूत भूत रुचि पूजें मरि प्रम ग्रेह बसावहीं ॥
जो जिहि सेवै सो तिहिं पावै प्रभु करि न्याय दिखावहीं ।
निर्भै पद अनन्य जन बाटै स्यांम तहां पहुँचावहीं ॥
जन के प्रभु के यह जन हैं हिलि मिलि सुख वर्षावहीं ।
भक्ति न होहि स्वामि सेवक विनु भूले तर्क उठावहीं ॥
जे प्रभु कौ दुलरावत रुचि सौं तिन कर रीझि बिकावहीं ।
वृन्दावन हित अपु तें अधिकी जन सेवा जु चितावहीं ॥

* राग गौरी *

युग युग भक्त अभै प्रभु तेरे ।
भीर पड़ी तहां विलंव न कीनौ आये निपट दरेरे ॥
द्रुपद सुता की लज्या कारन अंवर रूप भयेरे ।
अंवरीष की रच्छा कारन चक्र सुदरसन प्रेरे ॥
गरुड छांडि धाये हरि तव जव गजपति ग्राह ग्रसेरे ।
संकर कौ संताप मिटायौ भस्मासुर जव घेरे ॥
ध्रुव वरु दियौ अधिक करुनां करि सुमिरत आये नेरे ।
वार वार प्रह्लाद भुजनि भरि लीनें कष्ट निवेरे ॥
भीषम वचन सत्य प्रभु कीनैं अपने वचन तजे रे ।
दै दै पीठि बचायौ अर्जुन अपु तन बान सहेरे ॥
विपति अनेक टारि कुंती मन वांछित सबै करेरे ।
धर्म पुत्र दै राज छरी लै आगै आपु खरे रे ॥
विदुरानी कर भोजन रुचि सौं अति सुख स्वाद ढरेरे

को कुल जाति भीलनी जूठे मुख लै बेर धरे रे ॥
उग्रसैन यदु आसन थाप्यौ आप चंवर सिर फेरे ।
अखिल अंड नायक सब लायक कौतिक किये घनेरे ॥
साइन बांधि सिला जल तारी दिये लंक पर डेरे ।
सीता लाय कपिहि यश दीयौ दस सिर छेदि बगेरे ॥
दियो भभीषन राज कृपा करि जनक सुता प्रिय ए रे ।
वासी अवध पठाये निज पुर कृपा अवधि वरपे रे ॥
जननी की गति दई पूतनैं औगुन तनक न हेरे ।
गिरि उचाय ब्रज वासी राखे सुरपति सौं उरझे रे ॥
गर्भ परीच्छित जरत उबारयौ लिये गंदा बिचरे रे ।
ब्रज बनितानि अपनपो दीनौं बस ह्वै नाच नचेरे ॥
श्री मुख कह्यौ दास के कारज मेरे बाँट परे रे ।
वृन्दावन हित रूप जाऊँ बलि समरथ स्वामी मेरे ॥१२७॥

* राग मारू *

हरि भक्त वछल यश गायौ जन हित करि आप बिकायौ ।
जहां जहां भीर परी अपने कौ तहां तहां उठि धायौ ॥
शिव वरु दियौ असुर कौ जब वह सिर कर धरिवे धायौ ।
भाजे फिरे लोक चौदह तब प्रभु छलि भस्म करायौ ॥
अवनी बिनु न सृष्टि रचना होय विधिना मन पछितायौ ।
सूकर वपु धरि धसे नीर धसि मही दंत धरि लायौ ॥
आलय देव असुर हरि लीनें आनक जीति बजायौ ।
छल्यौ ताहि बावन वपु धरि कें जननी भलौ मनायौ ॥
सर्वसु छीन लियौ तीजौ पग तापै देत न आयौ ।
कृपा अवधि की अकथ कहानी ता हित आपु बंधायौ

पांच वर्ष कौ राजकुमारा ग्रह तजि वन ग्रह छायौ।
तिन ऐसी निर्मल करी करनी सुनि प्रभु मन अकुलायौ॥
निकट आय सिर पर कर फेरयौ वरु दै कै अपुनायौ।
छिति कौ राज कराय बहुत दिन पुनि अपु पास बुलायौ॥
धन्य धन्य प्रह्लाद सुमति जिन अजित पुरुष परचायौ।
असुर उपाय किये मारन बहु भुज बल कृष्ण बचायौ॥
हरिनाकुश कोप्यौ अति आतुर तैं कुल दाग लगायौ।
रच्छिक कौन बताय कहत यौं मारन खर्ग उचायौ॥
खंभ ओर देखत जु महा मति पुनि तहां तात बतायौ।
भक्त गिरा प्रभु सांची कीनी नर हरि वपु दरसायौ॥
उदर विदारि खेल सौं कीनौं सिसु प्रभु कंठ लगायौ।
बरषत कुसुम देव मन हरषत राज इन्द्र ने पायौ॥
चंद्रहास मृतु मुख तैं राख्यौ दोषी दोष जरायौ।
विष कौं देत दई प्रभु विषया त्रिपुल प्रताप बढायौ॥
मोरध्वज प्रभु लई परीक्षा आरा सीस चलायौ।
धन्य धन्य हरिदास विरद बाँकौ जग माँह बुलायौ॥
तप्त तेल डारयौ जु सुधन्वा अग्नि जु तन न तपायौ।
हरि बल धर्म रह्यौ भक्तनि कौ विषखनि कौ उर तायौ॥
ताम्रध्वज हरि जीति लै गयौ अर्जुन चरित दिखायौ।
भक्त अघनि कमल दल लोचन करत जननि मन भायौ॥
अम्बरीष कौं क्रोध वज्र दुर्वासा प्रेरि पठायौ।
तब प्रभु चक्र करी जन रक्षा उलटो मुनि जु कंपायौ॥
भाज्यौ फिरयौ लोक सब ही में किन हूं न आँनि छुडायौ।
भक्त वछल सांचौ राख्यौ ब्रह्मण्य विरद बिसरायौ

जनक विदेही नौ योगेश्वर जग निर्वेद उपायौ ।
भगवत धर्म तुंग तरु कौ फल सोधि अमी अचवायौ ॥
नारद सनकादिक जु आदि मुनि विरवा भक्ति लगायौ ।
पोष्यौ कपिल व्यास शुक्र चौंपनि सुकृतिनु मन विरमायौ ॥
हरि रस महा सुधा सागर में वनितनि चित्त न्हायौ ।
वृन्दावन हित रूप स्याम कौ बरवस तिननि नचायौ ॥१३८॥

* राग कान्हरौ *

कृष्ण कृपा तें कहा न होई ।
निबल होई बलवांन छिनक में ताकौ गंजि सकै नहिं कोई ॥
कहा पराक्रम उग्र सैंन मैं यदु आसन बैठारयौ सोई ।
छरीदार आपुन भये ताके लै अज्ञा कारज करें जोई ॥
कहा कुल विदुर तहां कियौ भोजन कुल मांननि की सभा विगोई ।
कुबिजा देखि कंस की दासी रूप अपुनपौ तिहि दयोई ॥
विष देतें जननी गति दीनीं कुमति पूतना की सब धोई ।
भक्ति सुधन माली कौं दीनौं अपीं माल फूल की पोई ॥
कौंन रूप कपिराज सख्यता दीनीं प्रभु नहीं जाति टटोई ।
रंक सुदांमां कौं दई वैभव जनम जनम दारिद्रता खोई ॥
यज्ञ सँवारि पंडु पुत्रनि कौ जरासंधि कियौ टूक जु दोई ।
बसन बढाय लाज तब राखी हा ! कहि नाथ ! द्रौपदी रोई ॥
जूंठ उठाय दूत भये रथ चढि कौरौनि सैना दृष्टि बिलोई ।
धर्म पुत्र सिर छत्र फिरायो जरजोधन की मृत्य बिगोई ॥
नांमां हित हरि मन्दिर फेरयौ वराधि हित कबीर कें ढोई ।
वृन्दावन हित रूप स्याम भजि न्हात वारि नरसी जु समोई १३९

जिन पै श्री गुरु कृपा करी है।
तन की सुमति भजन हरि बढि है गुरु सेवन जिहिं जानि परी है
ांति भांति तिहि मंदिर मंगल जिनके गुरु पद प्रीति खरी है
ृन्दावन हित रूप वंदि गुरु जिन दत बेली भक्ति फरी है ॥१४

भक्तनि पारयौ सबकौ पूरौ।
हो कुल असुर कृपा नारद मुनि भयौ प्रह्लाद साधु मत सूरौ ॥
ध्रुव बालक ता सिर कर राख्यौ तिन कीनौं मधुवन तप रूरौ।
गुरु प्रसाद गोविंद बुलाये सब अंग सांचौ नांहि अधूरौ ॥
चंदन विटप साधु त्यौं प्रभु के सुधरत संग और तरु कूरौ।
व्यास कृपा ते पंडु सुवन कौ रथ हांक्यौ हरि तजी गरूरौ ॥
दासी सुत घरु रुचि हरि जैंयौं अंध सुवन कियौ कुल मदचूरौ।
भय पतिहार धर्म नंदन के ताकौ लोक बज्यौं धमतूरौ ॥
जननी जनि तौ सुत हरि भक्ता नँहि रहि बाझ विगोय न नूरौ।
शुक मुनि संग परीक्षत उधरयौ जो पहुंच्यौ हरिधाम हजूरौ ॥
अलभि लाभ होय साधुनि सेवत विफल जानि जरा सेवन घूरौ।
हरिजन भक्ति कल्पतरु तजि कें रुचत विमुख तरु निपट कटूरौ ॥
साधु सुमति तुलसी कौ विरवा तजि सेवत हैं भांग भंगूरौ।
भक्त सुदृष्ट नींच होय उत्तम ज्यौं रवि करैं रैन तम दूरौ ॥
वही काठ लै अग्नि जारियै वाहीं कौं रचि करैं तमूरौ।
वृन्दावन हित रूप साधु यौं संगति सुधरै लहि फल भूरौ ॥१४

भक्तनि भक्ति निसांन बजायौ।
सील सत्ता की सैना जोरी सबल प्रेम कौ धुज फहिरायौ ॥
आयुध दृढ हरि नाम हाथ गहि पेटी लै संतोष बंधायौ।
नांनां चरित स्याम सुन्दर के ताकौ विदित पंवारौ गायौ ॥

नरतन कोटि छांडि कै विचर्यौ देखि प्राप कौ दल भहरायौ ॥
काम क्रोध तसकर बस कीनें लोभ मोह सिर दगड धरायौ ।
तृष्णा को तोर्यौ जु मवासौ सदाचार सिक्का जु चलायौ ॥
कीनें प्रणत समान आपने परम धर्म आमल बैठायौ ।
अन्य कर्म हरि के हद थापे मारग चलतौ सब कौ भायौ ॥
प्रभु प्रताप की डौंडी बाजी तिलक दाम करि छाप छपायौ ।
राग द्वेष बटपार दुरि गये कटुक बचन हिंसा जु छुटायौ ॥
परजा बढी सुमति सद्धा की निस्प्रह देश अकर सचु पायौ ।
दृढ विसवास बैठि सिंहासन भक्त भूप आनंद बढायौ ॥
हरि परिचर्या कृत भयौ सोभित ताकौ सकल सृष्टि सिर नायौ ।
वृन्दावन हित रूप वंदि पद जिन हरि अजित हिये विरमायौ १४

भक्तनि वंदन हरि भज मरि हैं ।
बिढतौ बडौ चेति मानुष तन अब कै भूलैं भ्रमि भ्रमि मरि है ॥
जो संतनि मिलि हरिपद यजि है तौ भव निधि बिनु श्रम ही तरि है।
प्रभु के भृत्य अभय पद दायक इनकों विसरि अधोगति परि है ॥
सीतल ठौर साधु की संगति दृढ करि गहि न अनल दुख जरि है ।
श्रीगुरु युक्ति बताई ऐसें करि विचार इहि विधि जु उबरि है ॥
जनम जनम यम द्वारौ झांक्यौ निलज न अजहूं हरि सुधि करि है ।
वृन्दावन हित रूप संत गुरु इन समरथ बिनु को उद्धरि है ॥१४

भक्तनि के हरि सदा बाँह बल ।
जहां तहां फिरत प्रणत जन वल्लभ पावन किये अपावन जे थल ॥
साधु संग तें हरि उर दरसत दूरि होत पाखंड दंभ छल ।
धन्य धन्य हरिदासनि महिमा सुधरे जिनके परस कुमति खल

धनि नर सुमति संत पद सेवत धन्य जनम जीवन जिन भुव तल ।
डसे सर्प संसार जगत जन निर्विष किये उतारि हलाहल ॥
ये सद्वैद्य भृत्य गिरधर के इन पद वंदौ निस वासर मल ।
वृन्दावन हित रूप राधिका पतिहि मिलावैं करि उर निर्मल १४४

सुधरे बहुत साधु संगति करि ।
संत वचन विसवास कियौ जिन तिनके काज किये आपुन हरि ॥
कृपा दृष्टि भक्तनि की जा तन प्रबल पाप गये तिन के जरि ।
कागद कर्म किये रद प्रभु नें दास भये अनन्य व्रत जे धरि ॥
राधा कृष्ण नाम रुचि मानी भूरि ताकी को है सरवरि ।
जग प्रपंच सब धोय बहायौ युगल चरित राखे जु हियें भरि ॥
मन मराल रमैं अमी सरोवर तन जीरन रहैं कुंज कौंन परि ।
वृन्दावन हित रूप महामति ऐसे रसिकनि पद रज अनुसरि १४५

हरि भक्तनि अपनाये जे जन ।
ते भये परम पूज्य या जग में उतपति होहु कहुं काहे न तन ॥
तुलसी विरवा घूरैं उपज्यौ ताकौ दोष न गनत सुमति मन ।
चन्दन वन की करि भयौ चन्दन तासौं चरचत हैं हरि अंगनि ॥
यौं हरिदास देह अति पावन माला तिलक धरे जिन अंकनि ।
कृष्ण नाम उचरत निस बांसर ताकें दास जरें पातिक गन ॥
गुरु प्रसाद सुर नर मुनि वंदत जिन लीयौ प्रभु पद अनन्य प्रन ।
सब सुखकरता जग ज्वर हरता अंग तिनुकौं गति भृत्य गिरि धरन ॥
धनि कुल देश धन्य वह जननी जाकें सुत दियौ चित हरि चरननि ।
वृन्दावन हित रूप धन्य भयौ सेवा रुचि बढी गौर स्याम घन १४६

धनि हरिदास जु हरि यश गावैं ।
जाकें भजन अजित हरि स्वामी लरजत जन संकट उठि धावैं

दास चलै स्वामी की रुचि लै स्वामी सेवक मन जु बढावै।
लायक दास जानिये ताकौं करै सोई जो स्वामी भावै॥
ये गुन हरि हरिदासनि मांहीं ऐसें वेद पुरान बतावैं।
और देव अनुचर स्वारथ रति संकट परै न कामहि आवैं॥
लियें रहत आयुध हरि कर वर जिन कोऊ मेरे भक्त दुखावैं।
अर्धनाम सुनि कै उठि धावत भक्तवछल प्रभु न्याय कहावै॥
दास बिना स्वामी की महिमा को रुचि ग्रन्थ लोक फैलावै।
करुनां आलय कृष्ण बिना को दीन बन्धुता विरद बुलावै॥
रजनी तिमिर न कबहूं जाई जो कोऊ कोटक ऊक बरावै।
हरि दिन मणि उद्दोत होत ही तन मन कौ तम सहज नसावै॥
प्रभु डोलत भक्तिन संग लागे भक्तनि चित हरिबिनु अकुलावैं।
भक्त और भगवंत प्रीति कौ का वपुरा कहि पारहि पावै॥
जो जन चाहत सो हरि चाहत विमुखनि चाह्यौ उलटि बनावै।
वृन्दावन हित रूप दुहुं दिस प्रेम सचाई कहा न करावै॥१४७।

* राग धनाश्री *

कृष्ण सनेही ज्यौं मिलै तू तौ लगि रे संतनि पद लार।
इन संग खेवौ उतरि है कहा भटकै भव निधि संसार॥
रतन मिलै घर जौहरिनु अरु कांच जु कचहेरे पास।
साधुनि संग यौं हरि मिलैं अरु विमुखनि संग नर्क निवास॥
मावस जो चंदा उगै अरु आधी निसि ऊगै भान।
वरु हौंहि तौ ह्वै सकैं बिन भक्त न मिलि हैं भगवान॥
कज्जल तजिहि न स्यामता अरु चंदन नहिं तजत सुवास।

भक्त न हरि पन तें डरैं हरि छांडै न अपने दास ।
सती न अपनौ सत तजै अरु खेत न छांडै रन सूर ।
भक्त न तजहिं अनन्य व्रत नन त्रासैं जु कायर कूर ॥
सर सूखे हंसा तजै अरु सूखे तरु तजहिं विहँग ।
यौं निर्धन जग जन तजैं हरि लागै संकट जन संग ॥
हरि कृपाल जापै भये ताके बांचे नँहि कर्म लिलाट ।
गनिका नाम प्रताप बल अरु गवनी हरि पुर की बाट ॥
धर्म बरन आशरम जे बहु सोधे करि गाढी प्रीति ।
हरि दरसे नहिं सुपन हू अरु छांडि नहिं मन विपरीति ॥
वंदौं पद हित रूप गुरु अरु वंदौं पद पावन संत ।
वृन्दावन हित विदित जग हरि सनमुख जन किये अनंत ॥

कुमति मवासौ तोरिये तेरी लागैं हरिजन गोहार ।
सैंना लै संग सुमति की अरु गहिरे हरि नाम हथ्यार ॥
नवधा भक्ति महारथी अरु सर्द्धा गज वर लै संग ।
पैदलि गुन जु सुसीलता अरु चढि रें मन तरल तुरंग ॥
जत सत धुजा जु फरहरैं अरु बाजैं उर हरष निसांन ।
हरबल प्रेम बली करौ अरु छाडौ गुरु वचन जु बान ॥
तिलक दाम तन कवच सजि अरु गुदरी केशरिया धारि ।
काम क्रोध अरु मोह मद तू तौ लोभ जु अरि सबल पछारि ॥
निस्प्रेह देश अभै बसै अरु परजा बाढै सुख छेम ।
राधापति तब रीझि हैं करि इहिं विधि रिपु जीतन नेंम ॥
सारासार विचार कौं तुम राखौ मंत्री जु विवेक ।
इंद्री दुर्जन अति बली बन्दि इन सौ धरि धीरज टेक ॥
हरि सुदृष्टि सिर छत्रधरि सिंहासन करि दृढ विस्वास ।

पति के कोट कौं अरु पारचो जिन हरि सौं भेद ॥
हित संचो सुधन अरु अरि दल गंजे नहिं कोय।
न संतोष बसि तब आनंद नित सिद्धि जु होय ॥
हि इँहि नीति चलि अरु बंदो हरि संत विचारि।
हित रूप लखि तेरी कबहू नहिं आवै हारि ॥१४६।

* रागै गौरी *

ज्ञा लै हरि के जन चलैं ज्यौं सत्तवंती भाम।
गायौ हो मारग भक्ति कौ मांनत नांहि सकाम ॥
रीझै हो जाके चलनि सौं सो न सुहागिनि होय।
ुख दा है हो पति के रूठनैं सील बडाई खोय ॥
विमुखनि हो ऐसे जानिये वृथा वहत जग भार।
जान्यौ हो दायक देह नर प्रभु समरथ करतार ॥
बूडत हो सागर सोक कैं उत इत लहत न पार।
नौका हो तजि गुरु संतपद परचौ दहकाल मंझार ॥
डसत हैं हो खग माथो हनैं अरि निंदक बलावन।
न पीडा हो साथी संग के दूरि करत मद मान ॥
ग्रामी हो यह पछिम चले बीते कलप अनंत।
क लगि हो पुनि यम सदन लगि भ्रमत न पावत अंत ॥
मारग हो सूधे संत जन गुरु वचननि आरूढ।
से भेटे हो पायौ परम पद निगम कह्यौ जो गूढ ॥
ारग हो गयो चिताय कै साधु अनाथनि बन्धु।
पुकारत हो कृष्ण मिलाप कौ नांहि विचारत अंध ॥

संत सुबुद्धिन हो सार जु मथि लयौ प्रभु मिलिबे के घाट ।
थूक बिलोवत हो जग सुख अज्ञ जन जामें दुख जु निराट ॥
पुनि पुनि वंदौ हो पद हित रूप गुरु जिननि लगायौ ढंग ।
वृन्दावन हित हो श्यामा श्याम भजि लागि रसिकजन संग ॥
रसिक निबाहू प्रीतम धाम धुर लागि मनां तिन लार ।
उलटि चलै है हो हरि पद विमुख जे भटकत बन संसार ॥
बिलंबु न कीजै हो पूरे संग मिलि पुनि यह अवसर नांहि ।
और मतन करि हो कबहूं न पहुंचि हैं बिनु संतनि बलि बांहि॥
विष को तरुवर हो ताके फल भखे सर्वस कीनौं हानि ।
भरि भरि जनमें हो या ही कृत्य करि भूल्यौ प्रभु पहिचांनि ॥
गाढ़ी हितगनि हो जिन सौं तैं करी ते ठग लागे संग ।
ठग्यौ बटोही हो पुनि तू गयौ अजहू न चेततु अंग ॥
यह विष हरता हो इहि जग गुरु बडे जानत मंत्र उपाय ।
तु हित सूझै हो भैया अपनपौ जो उन सन्मुख जाय ॥
और निवाहू हो साथ बताय हैं जो सिष सुनि है कान ।
गौर स्याम पद हो मिलन उमाह मन कियौ जिन चलन पयान॥
जो विष उतरयौ हो गुरु के वचन सुनि तौ राधापति गाय ।
पाछैं लगि चलि हो हरि प्यारेनु कैं जग ज्वर रोग मिटाय ॥
ग्रन्थनि बरनी हो सूधी बाट यह तू भूल्यौ मति हीन ।
समरथ स्वामी हो ताकौं छाडि कैं द्वार द्वार भयौ दीन ॥
कपि ज्यौं नाच्यौहो सुत दारानि बस लह्यौ न सुख को लेश।
बनिज कमायौ हो पूँजि खोय कैं बिसरि धनी कौं देश ॥
सुमति प्रकासी हो साधु चितावनी गुरु हित रूप सुदृष्टि ।
वृन्दावन हित हो रसिक समाज मिलि पहुँच्यौ निजपुर इष्ट

हरि रुचि मांनत हो पूजन भक्त कैं भक्तनि रुचि हरि सेव ॥
हरि नँहि रंचक हो समभक्त भक्त बिनु यद्यपि त्रिभुवन नाथ ।
भक्तिन जान्यौ हो जगत असार सब सारु लग्यौ हरि हाथ ॥
हरि नै धारे हो रूप अनेक जग गुपत प्रगट मित नाँहि ।
असुर संहारे हो जन रच्छा करी अपनी ही बल बाँहिं ॥
करता भरता हो सबही विश्व के जीव सबै जिन अंश ।
ऐपै परचत हो नांतै भक्ति कैं साखि पुरान प्रसंश ॥
हरि जल मीन जु हो प्यारे संतजन संत वारि हरि मीन ।
ये उन जीवन हो वे इन प्रान हैं एक प्रेम दोऊ लीन ॥
हरि वारिज अलि हो प्यारे भक्तजन भक्त कमल अलि स्यांम ।
भोग भोगता हो दोऊ परस्पै बंधे प्रीति की दांम ॥
भक्त प्रशंसत हो हरि के नाम कौं हरि गावत जन प्रीति ।
हरि अमोल नग हो कुंदन भक्तजन मिलि सोभित इहि रीति ॥
हरि उठि धावत हो संतनि सांकरे गनत न सांझ सबेर ।
दास भरोसैं हो गरजत रावरे तज्यौ जगत अरुझेर ॥
आगे पाछै हो भक्तनि हरि फिरैं जिन हरि विरद की लाज ।
घटती परन न हो जन की देत हैं रुचि लै करता काज ॥
भक्तनि यश मैं हो हरि यश विस्तरयौ जैसे कुसुम सुवास ।
यह हित रूपी हो गाथा गाय कैं वलि बृन्दावन दास ॥१५२

* राग मलार *

जन कैं भीर परैं प्रभु आये ।
प्रान अंत गज की आरत सुनि गरुड छांडि उठि धाये ॥
संकट मांह द्रुपद तनया के अंबर अदे बढाये

भीषम कौ प्रन राखन कारन आयुध आप उठाये।
कीयौ कपट अंध सुत रचि पचि लाखा भवन बनाये।
प्रभु प्रताप बल आँच न लागी पांडव जरन न पाये॥
करुनामय हरि नाम सत्य कियौ सुनत वचन अकुलाये।
उदर बैठि वैराट सुता कैं परीक्षत जरत बचाये॥
सभा मांझ जादौं पति पैठे दूत संदेश सुनाये।
जरासंध छल बधि कीयौ नृप सब बंदि छुटाये॥
अंबरीष रिषि कोप न शंक्यौ पतन अनेक उपाये।
भक्त वछल यह नाम सत्य कियौ चक्र तेज मुनि ताये॥
असुर ही बरु दै शिव संकट परे पुनि पाछे पछिताये।
बने बाल ब्रह्मचारी तब प्रभु अरि बधि करि मुस्काये॥
पिता त्रास दीनी प्रह्लादहिं पाहन मांझ बताये।
खंभ फारि हरिनाकुश मार्यौ असुरनि यूथ भगाये॥
विषधर पवन ज्वाल सुर पति तें भुज बल स्यांम रखाये।
नातौ मांनि सकल ब्रज जन सों निधि से नाच नचाये॥
भक्तिन हित युग युग किये साके वेद पुराननि गाये।
वृन्दावन हित रूप भक्ति बस प्रेमिनु हाथ बिकाये॥१

जन कें सदा सहायक स्याम।
कहां कहां की कृपा बखानौं हैं करुना कौ धाम॥
भक्त वछल जाकौं विरद निरन्तर भाषत वेद पुरान।
जिन सुमिरे जिहिं छिन मन वच क्रम प्रगट भये तहां आन॥
परम दयाल सांकरे साथी काटत दुख के फन्द।
वृन्दाबन हित प्रान जीवन जन श्री वृन्दावन चन्द।१

उकामी भटकत तिन की करी कृष्ण चरननि रति ॥
दुखित जे युग युग ते सनाथ किये दै उत्तम गति ।
तृष्णा आस छुटाई प्रभु दरसाये सबल कृपा अति ॥
गाऊँ साधु उपकारी परहित करुना जिन उर दरसति ।
हित रूप वेगि ही जिन सुदृष्टि लरजैं राधापति ॥१५५॥
धन्य सुमति जिनकी मति हरि पद ।
न भयत जे प्रभु को तिनहु किये विधि अंक लिखे रद ॥
प पवित्र संत जन काढत तिनहि जे बूडे जग नद ।
उर सूल मिटावन कृष्ण सजीवन देत वैद सद ॥
नेरंकुश विचरत गौर स्याम रस रसिक जु उनमद ।
त रूप सेय नित युगल रहसि दायक जु कृपा हद ॥१५६॥
हरि विनु चित न धुरै कर्म दैयै ।
ते न अमी जु पावै तौ कहा जानि बूझि विष खैयै ॥
साधुनि कौ निर्मल धर्म अनन्य सदा सुख पैयै ।
त सांकरे साथी ता प्रभु कौं कबहूं न विसरैयै ॥
तुति करत पराई अपनै तन क्यौं दाग लगैयै ।
ाप हानि सुकृतनि की ऐसो दुस्कृत क्यौं जु कमैयै ॥
ढतौ सब कोऊ चाहै धृक वह समझ जु मूल गवैयै ।
हत रूप राधिका पति भजि ज्यौं न बहुरि पछितैयै ॥१५७॥

* राग विहागरो *

ख जेवंतु हौं रुचि सौं भक्तिन पूजन हौं सचु पाऊँ ।
ै हौं भक्तिन को भक्त मनोरथ हौं जु पुजाऊँ ॥

भक्त कहै मो हौ चित राखौ जहां बुलावै तहां उठि धाऊँ ।
मेरौ कह्यौ भक्त सिर धारैं मोहि यजै ज्यौं हौं जु सिखाऊँ ॥
भक्तनि प्रीति मोहि बैस जानौ भक्तनि संकट सुनि अकुलाऊँ ।
काम परै भक्तनि कौ जैसो तैसोई हौं रूप बनाऊँ ॥
जा रुचि सौं मुहि भक्त अराधैं हौं ताही बिधि भलौ मनाऊँ ।
भक्त सदा गावै मेरौ यश हौं भक्तनि के यश कौ गाऊँ ॥
भक्त प्रेम रस मेरे भीजें हौं भक्तनि के प्रेम बिकाऊँ ।
मो कौं भक्त लडावत चायनु हौं भक्तनि मन करि जु लडाऊँ ॥
भक्तनि लियौ मोहि मन पलटै हौं मन भक्तनि हाथ गहाऊँ ।
भक्त रूप मेरौ जु बतावैं हौं भक्तनि कौं प्रेम प्रेम बताऊँ ॥
भक्तनि नाते जगत जे भौतिन याको पलटौ कहा सुनाऊँ ।
धन्य धन्य भक्तनि की करनी या लेखैं हौं ऋनि कहाऊँ ॥
कैसे उऋनि होंहु भक्तनि सौं पर उपकारी यौं ठहराऊँ ।
प्रान सुधन प्रेमी जन भक्तनि रुख लै चलौं तबही मन भाऊँ ॥
मन क्रम वचन भक्त अपनें कौं जिहि विधि रीझै त्यौं जु रिझाऊँ ।
मो विनु भक्त असार गनत सब हौं भक्तनि विनु चित न चलाऊँ ॥
नातौ एक भक्त सौं मेरौ ताकौ सांचौ करि जु दिखाऊँ ।
यद्यपि जग उतपति मोही सौं नाते बिनु सब धोय बहाऊँ ॥
हौं भक्तनि कौं भार निर्बहौं अपने कारज सब बिसराऊँ ।
जनम कर्म मेरे रुचि मानैं भक्त न तकैं दूसरौ ठाऊँ ॥
हौं भक्तनि कैं पाछैं डौलौं हित रूपी दांम सौं बंधाऊँ ।
भक्तनि हित न कहा मैं कीयौ सहौं कष्ट दै पीठि बचाऊँ ॥
विमुखनि कौं डारौं दुख सागर भक्तनि कौं दुख सिंधु सुखाऊँ ।
वृन्दावन हित सत्य कहत प्रभु भक्त काज कबहूं न अलसाऊँ १५

सांची प्रीति भक्त सौं मेरी ।
ऐसी बनैं और कहि का सौं जग जन तजैं न मेरी तेरी ॥
हौं जानौं सोई जन जानैं गुंगे की सी अकह पहेरी ।
भक्त कहैं हरि की संपत्ति सब मै संपति करि भक्तनि चेरी ॥
भक्तनि मोहि अपनपौ दीयौ मैं प्रभुता हित भक्त बगेरी ।
जाकि भक्त बाँह पकरावैं ताकी मोकौं लाज घनेरी ॥
हौं रुचि एक भक्त सौं मानौं . जानौं नहीं दाहिनी डेरी ।
भक्त प्रीति कौ हौं निन भूखौ और न रुचै कहत हौं टेरी ॥
फल दल जल सादर लेउँ जनकौ विमुख पाक की रुचै न ढेरी ।
सुमति नहीं सुरभी पय तजि है तजि हौं नहीं युगल थन छेरी ॥
मेरे मन की भक्त सु जानत मैं भक्तनि के हिय की हेरी ।
त्रिभुवन वैभव मो विन फीकी जानी यौं चित वृत्ति सकेरी ॥
जन तन करौं आप रस वारी मन करौं सुखित प्रेम कौं प्रेरी ।
काटौं मोह दाम जित तित तें अपनी सरनी लेउ रुख फेरी ॥
मेरी संपति अपनी मानत विमुखनि प्रभुता लोक बिखेरी ।
तिनि अधमनिसौं किहि विधि परचौं मो दिस कीनी पाप अंधेरी
तन मन धन अरु धाम समर्प्यौं जाति पाति भक्तनि निखेरी ।
ऐसे जननि बिसारौं कैसे सब नाते मति मामौं मेरी ॥
बलि हित रूप कही हरि श्रीमुख हौं नित रहौं दास के नेरी ।
वृन्दावन हित न्याय भक्त कैं प्रबल प्रेम मेरी मति घेरी ॥ १५८६।

* राग धनाश्री *

हरि जन करि मन पाहरू तू तौ इनहीं के पहरैं सोय ।
राखि बटोही गांठि गथ अरु नांतरु सब बैठे खोय ॥
आगे आगे विकट वन तू तौ रहि रे चौकस सब अंग ।
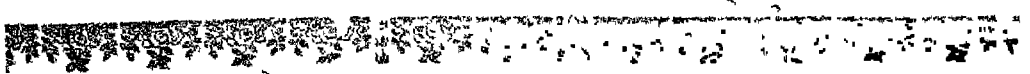
साधुनि मिलि धुर पहुंचि है अरु तेरौ यह काचौ संग ॥
चोर बसत हैं लार तौ अरु तिन की सुधि तो हूं नांहि ।
सुमति पारखू जन लखैं अरु बचि हैं तिन की बल बांहि ॥
हरि विद्या कोविद बड़े देखि हरि के ये दासनि दास ।
जौ निर्भय चाहै रह्यौ तौ भूलै जिनि इन कौ पास ॥
विकट पंथ दिन दिन कटै अरु पहुँचै नियरें प्रभु धाम ।
काम क्रोध नद नाखि कैं अरु, देखौ प्रीतम कौ गांम ॥
धरि पग अवनि विवेक के अरु श्रीगुरु ज्यौं कह्यौं विचारि ।
निकसि न साधुनि सरनि तजि ठग दै हैं दुखसागर डारि ॥
जब लगि भेटे चरनप्रभु अरु तब लगि डरि अरि बटपार ।
वृन्दावन हित रूप बलि तेरे हरि जन रच्छक निरधार ॥

जो हरि प्रापति चाहियै तौ वंदौ हरिदासनि दास ।
अलभि लाभ इन तें मिले जिन कीनौं हरि धर्म प्रकास ॥
तिमिर हरन कौं रवि कियौ ससि कियौ तन हरन जु ताप ।
जग ज्वर हरन जु संत जन अघ हरि है मुख कृष्ण अलाप ॥
तन पीडा औषधि हरै अरु हिय कौ दुख हरि हैं साधु ।
सुमति बीच संगति हरै अरु सुकृत नासैं अपराध ॥
अंग मलिनता जल हरैं उर निर्मल हरि पूजन होय ।
सोक हरैं गुरु ज्ञान करि अरु दुविधा सत संगति खोय ॥
सरिता अपनैं रुख बहै त्यौं अपनें रुख जग की रीति ।
साधु उलटि चलैं मीन गति भई जिन की हरिपद दृढप्रीति ॥
ऋतु ही पै तरुवर फलैं अरु ऋतु पै होय कुसुम प्रकास ।
हरि सरूप फल करि फलै ये प्रभु के जन बारह मास ॥
ऐसे संतनि सेइयै अरु कीजे मन दृढ करि नेह

* राग मारू करखा छंद *

मना ! बंदि पद भक्त भुव लोक जेते

कृपा के धाम्र करौ कृपा तेते ॥टेक॥

अजित प्रभु प्रेम परचाय किये आप रुख धन्य हरिदास जग सिंधु नौका । काम अरु क्रोध मद लोभ अरि मोह से गिरि वचाय न दियौ लगन झोका ॥ बाट कौ टाट कर धौय कागद रचै हरि चरित नाम लिखि सीस नावैं । वरन कुल हीन अति दीन अपु सरनि लै करैं जग पूज्य प्रभु कौं मिलावैं ॥ अनाथनि नाथ करुना उदधि साधु जन इन विना कहां काहू जु पायौ । काच अरु लाख की हाट चाहे रतन विमुख सठसंग इहि विधि ठगायौ ॥ महत महिमा जु गोविंद की साधु उर वदन है वही रस उमडि झरि है । विषै दूषित हिये जानि विष को थरा सर्प सम वचन विष वमन करि है ॥ साधु जन संग सो होहि दर्पन हियौ राधिका प्रान पति तहां दरसैं । धन्य हरि भृत्य जिन कृत्य पावन भये कृपा की दृष्टि जा ओर बरसैं ॥ जगत परपंच छल छिद्र सुपनौ कियौ अगह फल हाथ वौंना गहावैं । वृन्दावन हित रूप सेय अस संत पद हेत पर कुशल इहि विधि कहावैं ॥१६२॥

भैया ! क्यौं न नर देह धरि भक्ति साधै ।

कृष्ण के मिलन किनि फेंट बांधै ॥टेक॥

बार हूं बार इहि भरत के खंड में देखि नँहि मानुषी जनम पावै । महा दुर्लभ रतन हाथ मरकट परयौ जानियैं नहीं कित कौ बगावै ॥ अलप सी आयु उदिम अधिक तें रच्यौ जातु दीपक बरयौ तेल बाती । कोटि करि यतन पै पतन तन होहिगौ खाय

लै मात दिन द्वै बराती ॥ भ्रमत दिखि भ्रमत कै लच्छ योनि गईं तहां इक मिली नर देह फेरी। सोऊ गति स्वान सूकर जु खोवत निलज भयौ थां विषै वन कौं ग्रहेरी ॥ यही मन यही तन यहीं इन्द्रीनु गन काम नँहि लगै सतसंग हीनौं। बहन्यौ खर भार अरु छार लोटयौ विषै कौन व्यौपार धृक मूढ कीनौं ॥ गुरु कृपा जलद की बूंद परसी नहीं भक्त जन बंधु सादर न भेटैं। जे पठावैं जुंवर जोर यम सदन कौं मानि नाते जु सबतें समेटैं ॥ भजन बल फेरि यह सुमत प्रभु चरन दिस जौं मिलैं साधु उपकार करता। वृन्दावन हित रूप वेगि रुचि सरन परि उदित रवि गुरु जु अज्ञान हरता ॥१६३॥

भैया ! विलसि रे भक्ति मोटे सुधन कौं।
देहिगौ धनी लै ओल मन कौं ।।टेक॥

अचल संपति भरी कोश नौ हरि मिलन देत अरु लेत नहिं टोटो परि है। चोर ठग बहुत लारैं जु तेरे रहत साहु करि धनि तोहि न बिसरि है ॥ भाँवते को रुचत साधि नौंहूं जु विधि सबै अभिलाष पूरन जु करि है। मिटैगी टोट अरु खोट बहु जनम की एक जो सत्य ब्रत हिये धरि है ॥ बडौ परताप ये पौरि नौ सेथ कैं कृष्ण पुर जाय सब्र ने बसायौ। इहां अरु उहां तिन विमल यश गाईये कृत्य इहि रीझि प्रभु उर लगायौ ॥ प्रेम परधान जा कोश तें कर गहै राधिका पति कृपा तहां वरषै। शृष्टि पावन करैं दृष्टि वा भक्त की पग धरत धरा सब अंग हरषै ॥ कहा कहौं अधिक महिमा जु हरिदास की जिननु पट पीतधर सुबस कीयौ। धृक जनम विमुख जननी जु जग क्यौं जन्यौ जिन दियौ जनम ताहि मन न दीयौ अधिक प्रभुता कृपा सुधि न करी नाथ की

आदरी न भक्ति अति महारानी । नर्क के छीतरा भीतरा मन दियौ बूडि मर्यौ मूढ जहां नांहि पानी ॥ वेद अरु तन्त्र आगम पुराननि कही भक्ति प्रथ भक्त सूरा दिखावै । वृन्दावन हित रूप राधिका लाल के मिलन उत्साह धनि सौं कहावै ॥१६४॥

* राग सोरठ *

हौं अति सुखित जन कें भाय ।
जो जन अर्पै मोहि ताकौं लेऊं भुजनि उचाय ॥
जो जन मेरे चरित गावै मनौं श्रवन लगाय ।
मोहि जानौं भक्त के वस कहत सौंह जु खाय ॥
करुना वानी भक्त की सुनि मो हियौ अकुलाय ।
मन में आतुर होऊँ अति पहुचौं छिनक में जाय ॥
भक्त भीर अधीर ह्वै कै चलौं वेगौ धाय ।
आपने तन पीर सहि कैं करौं भक्त सहाय ॥
दास की राखौं वडाई आपनी बिसराय ।
भक्तनि बांटे हौं पर्यौ में भक्त लिये अपनाय ॥
दास सर्वसु मोहि दीयौ कछु धर्यौ न दुराय ।
हौं जन पहरौ देउ कोउ सकै नांहि दुखाय ॥
भक्त महिमा हौं कहौं जन जियें मो यश गाय ।
वृन्दावन हित रूप हरि जन प्रीति रहे त्रिकाय ॥१६५॥

मो कौं दास ते लहनौं ।
दास रसना नाथ मेरौ ह्वै रह्यौ गहनौं ॥
निरालस उच्चरै सरिता धार ज्यौं वहनौं ।
मुहि न भूलै विपति संपति परै सब सहनौं ॥
मेरे नामाभास परवत पाप तुस दहनौं

मेरे सुख में ये सुखी मुहि इनके सुख रहिनौं ॥
भक्त द्रोहिनु अगति डारौं सोक ही डहनौं ।
मेरौ ह्वै औरै यजै चढ़ि परम पद ढ़हनौं ॥
दास मेरौ यश त्रहैं मुहि दास यश चहनौं ।
वृन्दावन हित रूप हरि यौं सत्य मुख कहनौं ॥

नारद सत्य कहौं समझाय ।

नहीं करत दुराउ तो सौं आतमा मम आय ॥
बसत हौं वैकुण्ठ में यै अधिक नँहि सचु पाय ।
सूनौं देखि न होहि संभ्रम सो सुनों चित लाय ॥
हियें आसन रचत योगी भोग मुक्ति उपाय ।
तहां थापत रूप मेरौ चित वृत्ति ठहराय ॥
ज्ञानी मेरे रूप गुन विनु स्वाद नीरस भाय ।
जहां मोहि न खोजियौ कबहू न झांकौ जाय ॥
कहौ प्रभु तुम हौ कहां यह भेद देहु बताय ।
साधु प्रिय करी कृपा मन संदेह सहज मिटाय ॥
रसिक भक्त जु मोहि गावैं जहां प्रेम बढाय ।
तजौं नहिं वह ठौर मन क्रम वचन सुनि मुनि राय ॥
प्रेम मेरे प्रान थाति जा उर उपज्यौ आय ।
बन्ध्यौ हिय की दाम आगै धरि सकौं नहिं पाय ॥
लागि पाछैं चलौं वच्छा संग जैसे गाय ।
वृन्दावन हित रूप भक्तनि बिनु न मोह सुहाय ॥

* राग कान्हरौ *

प्रभु नँहि होत भक्ति विनु राजी ।
भयौ बहुत भांति वघारी कीजैं कहा लौन विनु भा

ें सोभा पावै दूलह बिना बरात जु भाजी।
कृष्ण भजन बिनु परी भार जननी जग लाजी॥१६८॥
रे की भक्ति बिनु जनम ठगायौ।
रुप तन आकृति जननी क्यौं न महा पसु जायौ॥
न बाँह बल छक्यौ राज मद हरि बिसरायौ।
न भस्म होहि तन मृत्यु पाहुनौ अति इतरायौ॥
भर्यौ कोथरा ता ऊपर जु चाम चपकायौ।
भयौ कबहूं किहि बिधि सिरजन हार बनायौ॥
। पति पावै जब तब नृप सूरी जु चढ़ायौ।
ै यौं कर्मनि त्रिन भागे हरि को अपनायौ॥
भक्ति प्रसंशत और धर्म व्यौहार चलायौ।
ट जु बात हरि काकें सदन भक्ति बिनु आयौ॥
ाथ करुनामय अजामेल पातकी छुटायौ।
र्म श्रति करता तनक चूक घिरघिट तन पायौ॥
रे प्रभु की दासनि ही यह मरम जतायौ।
प राधिका पति यह बिरद पुराननि गायौ॥१६९॥
भक्तनि सबै निबार्यौ झगरौ।
और पीठि दै इननि गह्यौ हरि सनमुख दगरौ॥
ात निसि बासर इनकें सदा भक्ति रति पगरौ।
र रासि बटोरी उननि टटोर्यौ जग सुख भगरौ॥
जीव जन्तु के इनतै निर्भय भयौ जग सगरौ।
ारैं त्रिभुवन में उनसौं रहै सदा यम रगरौ॥

इननि सदन छायौ हरि चरननि उननि छवायौ पापनि नगरौ।
समझत नहीं मूढ समझाये तोरैं डाढ दूत यम धगरौ॥
भक्तिन रुचत चरित हरि सागर विमुखैं रुचत जग सुख विष गगरौ।
वृन्दावन हित रूप राधिका पति पद दास्य सबनिते अगरौ॥१७०॥

हरि की रीझ भक्त जन जानैं।
बाजीगर विद्या सब मोहैं चटिया मोहन रंचक मानैं॥
प्रभु के मन की दास लखत गति.दासनि की रुचि हरि पहिचानैं।
सगर्व विमुख दास निहगर्व जु बाद विवाद करत अलसानैं॥
हरि रुख लै विचरत हैं जग में हरष सोक भ्रम मनहिं न आनैं।
यथा लाभ संतोष स्वामि के लीला चरित प्रीति सौं गानैं॥
प्रणितनि करैं कृष्ण पद सनमुख जज्ञासी मन संसै भानैं।
हरि यश सुनन अज्ञ भये वहिरे तिनके कूकि जगावत कानैं॥
ज्यौं पसु खाय न गुर की भेली हित करता जु सिखावन खानैं।
यौं विमुखनि कौं हरि यश प्यावत धनि प्रभु साधु कृपा जु निधानैं॥
मनुष जनम हरि गुरु न अराधे मारयौ पाऊँ कुठारी तानैं।
वृन्दावन हित रूप राधिका पति रति ते जन धन्य बखानैं॥१७१॥

धन्य साधु हरि धन के धनिका।
धन्य धन्य संतनि जे सेवत कियौ उधार साखि बहुतनि का॥
नातौ नाम अधिक प्रभु मानत देखि विमान चढ़ाई गनिका।
वृन्दावन हित रूप रतन हरि लै दै पलटि काच तन मनिका॥१७२॥

साधु पाहरू गाढे मन कौ।
इत उत डिगन न देत विषय वन कूरम रीति समेटत तन कौ॥
ताकत रहत चरन हरि ओरी तजत न नेक भीतरे पन कौ।
जैसैं बनिक चोर ठग डरपत ऐसे डरपत इद्रिनु गन कौ॥

॥ ३० ।

ानिध चंदन नँहि त्यागै त्यौं बिसरत नँहि कृष्ण भजन कौं ॥
बचन धर्यौ अनन्य ब्रत ज्यौं चात्रक रुचि सेवत घन कौं ।
न हित रूप रसिक नन सदा वढावत भक्ति सुधन कौं ॥१७३

संतनि कौं पन हरि सौं सांचौ ।

से अपावन जग जन सो बचि चलत कर्म को खांचौ ॥
ट करि भक्त निवाजै हरि हरि कहि गावौ पुनि नाचौ ।
यौ परम पद दासनि ताहि न भजत निलज मन टांचौ ॥
ी विद्या जु पाप की तिन में पाकौ हरि हित कांचौ ।
हेत रूप राधिका पति भजि मना ! होहि जिन लाचौ ॥१७४॥

※ राग मारू ※

कृपा जलद रासेश्वरी रस जु बरषै ।
व्यास नंदन भक्ति दान हरषै ॥टेक॥

ीश्वर कह्यौ तापसिनु नँहि लह्यौ कर्म जड भेद
ायौ । ज्ञान करि दग्ध तिन देस परस्यौ न वह विषै
चित चलायौ ॥ अखिल ब्रह्मांड कौ नाथ रसमय जु बपु
परम अहलाद दानी । सकल धांमनि सिखा धाम
ाति स्याम नृप राधिका पट्ट रानी ॥ रुचि लिये वृन्द
गनित सखी कुंज कौतिक रचैं जहां दोऊ । यही रस
ा जु मुनि देव नर को कहै लोक भेदी न कोऊ ॥ दुहुंनि
की रहसि मरमीं अली कुवँरि गौरंग रुचि ल जु
ाट करुना भरी दई अज्ञा अली केलि कांनन ललित
॥ भक्ति भाजन सुमति गुननि संपन्न श्रीव्यास कुल
। चडाई । मंत्र हित छाप परताप दै स्वामिनी आपने

हेत की रीति बरनी। लोक अरु वेद की ओर देख्यौ नही प्रणित रस पोष मन संश हरनी .. उन्न श्रुति धर्म चृत अनन्य सादर गह्यौ महत महिमा न मुख परत गाई। जयति. तारा तनय मिथुन रस सिंधु में नीरसनि बुद्धि अपु बल न्हवाई ।। राधिका लाल कौ लाड छिन छिन नयौ सुहथ कियौ आप बानी बखान्यौं। वृन्दावन हित रूप वंदि हरिवंश प्रभु अगह फल दियौ सुकृतीनु जान्यौ ।।१७५।।

भजौ राधिका लाल कानन विहारी।

उभय रस रसिक कोविद जु भारी ।।टेक।।

ललित लीला रचन चाह छिन छिन वढै होति रस वृध्दि तट रवि दुलारी। चाय करि भाय करि वृति चित लाय करि लाल रुचि लै चलत प्रान प्यारी ।। राधिका रवन सुख भवन आनँद द्रवन कवन महिमा कहौं एक रसना। संग नवरंग गौरंग अति छवि छक्यौ अंग लखि मकरधुज गर्व खसना ।। तरनिजा तीर सुख भीर गंभीर गुन सजल घन सम न दीजै सरीरे। कुँवरि नव नागरी रूप गुन आगरी सम न बड़ भाग धरैं नील चीरैं ।। पीत पट धरन सुख भरन मुरली धरन केलि विस्तरन कुंजैं कमनीं। रुचि भली रँग रली सुविधि सेवत अली देह छाया जु सम संग गमनी ।। हँसत हैं लसत हैं रंग सर धसत हैं तलय ग्रह बसत हैं प्रेम पूरे। वदन विधु चहत हैं वचन मृदु कहत हैं लवधि रस लहत रन सुरति सूरे ।। ध्याई इँहि विधि मनां ! यही अपनौ धनां राखि सांचौ पना जीति जै है। प्रीति रचि अंग नचि और सब सौं विरचि युगल हिय हिलग खचि अलभि पै है ।। सेय राधा वनां लै गये सुख घनां रसिक भये जे.जनां सुनि पहेरी। कहि गये आउ रे युगल

यौ परचाउ होहु चरन चेरी ॥ लेह रे भौंवरे प्रेम
र भाव विवि रूप हित मैं । वृन्दावन हित अह
लाह जीवन लहा राखि चित में ॥१७६॥

के मिलन कौ, द्वै जु बात बल मान ।
जन हरि हरि जननि, प्रीति अंग परधान ॥
चूनौं देखिये, सैंत पिरौंहौं अंग ।
मिलि कै बढतु है, अहा कहा धौं रंग ॥
हरि हरि जंन कथा, पावन करता सृष्ट ।
हित गावतें, सुनत सबनि कौं मिष्ट ॥
लोक परलोक में, जा रुचि बढी कुकर्म ।
जहां घास बन, साधु बढैं जहाँ धर्म ॥
ो वरषै न घन, परै अन्न तृन टोट ।
रि जन यश विमुख, होई परलोक जु खोट ॥
क्त प्रसाद यह, गुरु हित रूप प्रताप ।
मति प्रकास ज्यौं, त्यौं मैं कियौ अलाप ॥
रै पर जानियौं, वर्तमान नौ त्रष ।
पौष जु त्रोदसी, कह्यौ भक्त उतकर्ष ॥
सुदत कहे, पावन भक्त चरित्र ।
हित रूप नित, रमौ मना तहां मित्र ॥१७७॥

क्त प्रसाद बेली पद बंध श्रीवृन्दावनदास जी कृत सम्पूर्ण ॥

अथ विज्ञान गीता

प्रभु यह जीव प्रगट किहि भांती । दुखितत्रिविधतचिउरविनशांती ॥
शिश्न उदर हित सुख लखि माया । धरत तजत हँसि रुदत सुकाया ।
कहु यह सुखित होत किहि भांती । उपजत नांहि सुने बिन शांती ॥
अति प्रसन्न बोले सुख पाई । तो बुधि अधिक मोर मन भाई ।
श्री भागौत कहौं अनुसारा । माया जीव विविध निर्धारा ॥
वेदव्यास निज हरि अवतारा । तिन करि मनन सु कीन्ह विचारा ।

पृथोदक तट सरस्वती, तहाँ व्यास अस्थान ।
धर्म अर्थ कर्मादि कृत, सप्तादश पौरान ॥१॥

ता मधि अखिल अर्थ इतिहासा । कर्म धर्म रत स्वर्ग निवासा ॥
होम यज्ञ युत देव उपासा । व्रत संयम यम नैम प्रकासा ।
राजनीति विधि विविध निषेदा । साम दाम छल दण्ड सुभेदा ॥
वर्णाश्रम गुण दोष सु धर्मा । श्रुति युत कहे पृथक सब कर्मा ।
उरकी जरनि मिटति कहुँ नाहीं । अति उदास मन वदन दिखाहीं ॥
विचरत नारद मुनि तँह आये । निरखि व्यास मुनि हर्षि सिहाये ।
मुनिवर लखि मुख मलिन उदासा । पूँछत भये कुशल करि हासा ॥
तुम सुख सींव सबन सुखदाई । लखी परति मुख विदित रुखाई ॥

नारदमुनि के बचन सुनि, वदत भये इमि व्यास ।
उरते जरनि न मिटत तउ, कीन्ह पुराण प्रकास ॥२॥

सुनि बोले नारद मुनि ऐसे । ज्यौं गुरु वदत सुनत शिष जैसे ॥
सब पुराण कीन्हे तुम व्यासा । लघुसर कण्ठ काग निवासा ॥
हंस न रमत भक्त विज्ञानी । हरि रति मानसरोवर मानी ॥
विमल भाव मुक्ता फल चुगि हैं । अश्वत्थ फल मल कर्म न लागि हैं

ल की यह रीती। हरि गुरुपद रति अनत न प्रीती
त इनकी करणी। खण्डि कर्म नहिं सो तुम वरणी॥
रु कृष्ण प्रधाना। या विधि कियो न विमल पुराना।
यज्ञादिक गाये। जीव जन्म धरि पार न पाये॥
मुख हरिते प्रथम, फिरि तुम कमंठ कीन।
भक्ति वैराग बिन, ज्ञान हीन दिन दीन॥३॥
था अब गावो। या विधि उर सन्देह नशावो॥
सुनो उपदेशा। नारायण मुख वचन सुवेशा॥
मिलि सुनि पाये। चतुरानन मुखते मुनि गाये॥
रि विमल विचारा। परमहंस गाथा निर्धारा॥
चले मुनि स्वामी। अच्युत कुल मल रहित अकामी॥
ने पद नमि व्यासा। करि समाधि लखि ब्रह्म प्रकासा॥
त्रैगुण ते न्यारा। सत्त चित्त आनन्द अपारा॥
सुब्रह्म अनूपा। स्वयं प्रकाश भक्ति हितरूपा॥
सन्मुख नृत्य करि, हरि हित रत अनुकूल।
प्रगट प्रभुते निरखि, ताकौ बदन प्रफूल॥४॥
हीं प्रभुते पीठी। माया प्रथम दृगनि ते दीठी॥
कृष्ण तन शोभा। जीव निरखि माया मुख लोभा॥
हि तासु तनमाया। जीव अमल बल निरखि लुभाया॥
लखत नहिं वाको। ज्यों नहिं जानत पूत पिताको॥
चिदानन्द समुन्दा। यह जल कणवत अणुमति कुन्दा॥
न्धु त्यौंहि कन नीरा। जाति वर्ण मिलि एक शरीरा॥
या विधि ते एका। बिन्दु सिन्धु वत समझि विवेका॥
दुमधि सिन्धु न मावै। सिन्धु समान बिन्दु मिलि जावै॥

तत्त्व एक ऐश्वर्य भिन, यह मत द्वैताद्वैत ।
जगलगि बिन्दु न सिन्धुमधि, तबलगि भक्ति प्रतीत ॥५॥
देवदत्त बोलत भयो बैना । सुनि सिद्धान्त मोर उर चैना ॥
इमि बिगरयो यह जीव अनादी । मिलि उपाधि ते भरम विषादी ।
पाँच तत्त्व तन कथों करि धारयो । किमितन तज्यो कौन निस्तारयो ॥
किहि विधि बँध्यो छुटयो सो तैसे । माया कहु अपनायो कैसे ।
आसधीर सुठि बदत सुबानी । वत्स कथा यह इहि विधि जानी ॥
निर्तत माया हरिहि रिझावै । अखिल कलानौ तन नित लावै ।
रीझत हरि न लगी या ठौरी । चितवत कृष्ण जीव सुत ओरी ॥
माया जानि लई यह रीती । प्रभु को पुत्र जीव ते प्रीती ।
माया पुर निरमाण करि, भेंट कृष्ण की कीन ।
लखि रचना बहु विधि अमित, हरि रिझाय सुख लीन ॥६॥
लखि प्रभुता पुर को सब साजा । बिकट विदित सुठि नवदरबाजा ॥
असीचारि चहुँदिशि बड़ कोटा । बात पित्त कफ तिनकी ओटा ।
इक घटि सहस नदी फिरि आई । सरस्वति गङ्गयमुन मिलि धाई ॥
सप्त समुद्र रतन मन माहीं । उठि२लहरि अमित मिटिजाहीं ।
तामधि अखिल और पुर न्यारे । तिनके पन्थ विकट अति भारे ॥
पर्वत विविध सुमेरु अधारा । भवन चतुर्दश विशद बिचारा ।
वन-उपवन रचना बहु भारी । अग्निब्यारिमिलिबसतमँझारी ॥
सन्तत बजत विविध विधि बाजा । पुर सुन्दर निरख्यो बिनु राजा ।
लखि प्रसन्न हरि कहत मुख, वरमूहि मन मानि ।
माया वदति सुनगर मधि, रहौ आप प्रभु आनि ॥७॥
ब्रह्म प्रसन्न वदत मृदु बानी । जीव मोर सुत मो सम जानी ॥
मोसुत जीव नगर को राजा । याते सरत तोर सब काजा ॥

: वचन ब्रह्म के माया। जीव पुत्र को अर्पी काया॥
ष्ट सुष्ट दल कञ्जा। रहत उर्द्ध मुख सौरभ मञ्जा॥
पर जीव सुराजी। आनँद मत चेतन सुख माजा॥
ति बुधि सुधि वामा। ता सँग सन्तन रहत सकामा॥
हिव परम विवेका। सेनापति करकरि अभिषेका॥
गर सुबैठक दीन्हीं। हरिपद प्रीति धुजा सँग कीन्ही॥
हासन विज्ञान घन, बल अपार बैराग।
भा प्रेम निर्गुण चमर, रहनि छत्र भव त्याग॥८॥
तासु को धामा। श्रद्धा शुभग रहत सँग वामा॥
तिनके सुनु नामा। निर्भय सत्त शील शुभ ठामा॥
सन्तोष सुनवनी। कपट पाप चोरन हत भवनी॥
ुल आदि अन्याई। तिनहि मारि अतिअदल चलाई।
र सैनापति बेटी। क्षमा दया सति क्रिया समेटी॥
न्तन की सुखदाई। नरक परत को लेत बचाई॥
अनुरागहि जानो। निर्भय सुत को मन्त्री मानौ॥
ो दई दिवानी। तप खवास श्रुति कीरति गानी॥
ज्ञान धीरज धरणि, सुष्ट कर्म अस्नान।
। वचन मृदु सत भट, यह उमराव समान॥६॥
क्ति निशान सुराजै। सुमिरण बानो सब भट साजै॥
ढिग जुर उमराऊ। विचरि नगर नृप करत सहाऊ॥
मद मत्सर लोभा। शोकडिम्भ मिलिमे अतिक्षोभा॥
: उठ्यो अकुलाई। कुबुधि ईर्षा तीन सहाई॥
ये त्रास युत भारा। वदत परस्पर करत विचारा॥
त रहन नहिं पावैं। अहङ्कार पुर सुखित बसावैं

पुरमधि गये सुनानि अनीता लखि हङ्कार डरत भय भीता ॥
भय युत कहत भयो यह वैना । तुम विवेक की निरखी सैना ॥
सुनत वचन सबं वदत इमि, हमं तुम शरणे आय ।
या विवेक के राज मधि, रहन कौन विधि पाय ॥१०॥
अहङ्कार यह रीति दृढाई । मिलि माया की लेहु सहाई ॥
बोली कुबुधि सराहत बाता । हम सब के रक्षक तुम ताता ॥
मिलिकै चली हुती तहँ माया । दुख युत मुखते वचन सुनाया ॥
हम तुम बाँह बसत पुर माहीं । अब विवेक पै बसन न पाहीं ॥
पुर के मध्य कियो तुम राजा । ताते बिगरत हमरे काजा ॥
हम नशि हैं तब तुम कहँ रहिहौ । तिनके सबविधि तुमदुखसहिहौ ॥
सुनि इमि वचन डरति भइ माया । कहि मृदु वचन तिन्हैं समुझाया ॥
मोर पुत्र मन अति बलवाना । निज नृप मानि करौं सन्माना ॥
मन सुत मोह प्रबल अचल, याको दै युवराज ।
काम क्रोध मद लोभ के, तब सरिहैं सबकाज ॥११॥
जय जय शब्द वचन सुनि कीन्हो । मन युवराज मोह कहँ दीन्हो ॥
आलस महल देश अज्ञाना । अहँकार सिंहासन नाना ॥
दुविधा छत्र गहे छल डाँड़ी । फिरत रहत फिरफिर करि माँड़ी ॥
वाम अङ्ग आसा पटरानी । हिंसा सुता भयानक जानी ॥
अति कठोर ता दूजी बेटी । जिन मिलि मैंड़ दया की मेटी ॥
निलंज रोग शोग भै भीता । संशय द्रोह सुद्वन्द अनीता ॥
सभा पापकी अनरथ शोभा । मसलति करत सबै सठ क्षोभा ॥
फरहरात अभिमान पताका । अज्ञाना धर्म गहे थर ताका ॥
सखा कुमति लौंडा निलज, लालच परम प्रधान ।
दुख मोदी बाजत बिकट, निशदिन कलह निसान ॥१२॥

मित्र पाखण्डा । कपट दिमान प्रचण्ड उदण्डा ॥
भोजन राजा । ताते रहत अचल राजि साजा ॥
उमराव सुनामा । काम क्रोध हंकार सकामा ॥
ी अलि अधिकाई । भोग कामना विविध उपाई ॥
निरखि हँसि माया । फिरि दृढ करि तिन को समुझाया॥
र प्रबल तुम राजा । मो मम्मलति सुनि करियो काजा॥
त आतम जानो । तिन युवराज विवेक बखानो ॥
ताकी बडि भारी । ता मधि ज्ञान भक्ति अधिकारी॥
ोध मद लोभ भट्ट, सबै अचानक जाय ।
खडग सों मारिकै, देहु विवेक गिराय ॥१३॥
तहँ रहन न पावै । भक्ति ज्ञान ताछिन नशि जावै ॥
तासु मधि वीरा । लोभ मारि कै करै अधीरा ॥
सत्य तप दाना । लगि हैं तिनहि काम के बाना॥
त सबै भगि जैहैं । तुम सन्मुख उनमें को ऐहैं ॥
हुँ दिशि फिरि जैयो । दृष्टिबन्ध ताको करि रहियो ॥
रहन नहिं पावै । काम क्रोध मद मत्सर छावै ॥
र सवाद चखाई । ताको तुम मिलि लेह लगाई ॥
न तबै पुर माहीं । मैं सदैव तुम सङ्ग सहाई ॥
मुख के मन्त्र सुनि, सब मिलि करी प्रतीति ।
सु लै नृप मोह मन, चले जासु जो रीति ॥१४॥
क्रोध अरु कामा । मद दक्षिण भुज मत्सर वामा ॥
प पीठि चण्डोला । चोबदार अभिमान ठठोला ॥
ढ गज बाजिहि धाये । विकट वासना चलनि सुचाये ॥
सुभट धनुष टङ्कारा मारु मारु इमि करत उचारा ।

अपयश गरद उडत चहुँ ओरा । निलज शनाह पहरि करि जोरा॥
कटुक वचन तरकस के तीरा । त्रिविधि ताप सो चलत समीरा॥
खड्ग शक्ति फरसा दुख दाता । पर' अकाज निन्दा मदमाता ॥
मनसा पाप मलिन हलकारे । नृपति करन लगि रहत न न्यारे॥

भरम अरज निशिदिन करत, मिथ्या ताहि विचार ।
कुबुद्धि मन्त्र ताविधि डरत, मो नृप उर निर्धार ॥१५॥

मोह नृपति इमि वदत सुबानी । सुनियो सब भट मोर कहानी ॥
तुमको मन्त्र दयो जिमि माया । ता विधि हमरी करौ सहाया ॥
लेहु अचानक तिनको मारी । शत्रु प्रबल सुनियत अति भारी॥
सुनि नृप वचन वदत उमरावा । युद्ध करन हित हम उर चावा ॥
कायर निवल अचानक परि है । हमते कौन युद्ध मधि जुरि है ॥
सुनि इमि कहति आस पटरानी । तुम बल नृप सुनि चाहत जानी॥
प्रथम कहत अपनो बल कामा । अति सुन्दर रति ताकी वामा ॥
ऋतु बसन्त ताको शृङ्गारा । बोलनि हँसनि चलनि तन चारा॥

पंचबान कर धनुष धरि, सहज निरखि ता ठाम ।
देव दैत्य नर नाग तजि, गर्भ नम्र वार वाम ॥१६॥

निरखि मोहनी दनुज नवायो । शिव तजि सती तासु सँग धायो ॥
खण्ड अलावृत में अरुझाये । भृङ्गी ऋषि से मारि उड़ाये ॥
भष्म माहि पुनि विष्णु लुटाये । शुम्भ निशुंभ अम्ब विनशाये ॥
रावण पुर कुल को करि नाशा । ब्रह्मा शीश कट्यो युत त्रासा ॥
जालन्धर को मैं विनशायो । पराशर को ज्ञान उडायो ॥
सौभरि ऋषि परनी बहु घरनी । तिय मो छाप चलत सुधि हरनी ॥
मानत छाप मोर कर केरी । नर मो दास त्रिया मो चेरी ॥
सेवक नर तिय सेवक करि हैं । मोते अभै मानि पुर फिरि हैं ।

र नित ने विमुख, रहत न मोते भीत।
को मैं शत्रु जनि, करिहौं विविध फजीत ॥१७॥
शि पर केशा। भस्म अङ्ग धरि करें कुवेशा॥
तन तपवाऊं। रथ गज बाजि न ताहि चढ़ाऊं॥
नहीं पग नाहीं। पुरते निकसि रहत बन माहीं॥
बदन दृग मूँदा। शीत उष्ण महि जलधर बूँदा॥
करन अहारा। वसन चर्म बिनु अशन सुसारा॥
कमण्डल दण्डा। कटि कोपीन छीन तन गंडा॥
ताहि भुगताऊं। फिरि ता उर मधि तीर चलाऊं॥
उच्चाटन नाना। वशीकरण मारण मो बाना॥
र उर में सहत, मोर आप नहि मानि।
तन चितवत न फिरि, तजौंमहा जड़ जानि ॥१८॥
मो मैं सुनु राजा। करिहौं मैं तुमरे सब काजा॥
प यह निर्धारा। मो सँग कुबुधि क्रूर हंकारा॥
बोले हंकारा। मिलि चारों यह करैं विचारा॥
नैन करि राते। अशुभ वचन कहत तन ताते॥
करैं अपघाता। हो किनि मात पिता गुरु भ्राता॥
त विश्व को नाशा। रुद्र होत हमको लै पाशा॥
करौं क्षण माहीं। यदुकुल हत्यो बेर नहिं लाई॥
पांडुसुत सैना। सगर पुत्र मारे करि चैना॥
असंख्य मारे प्रबल, रावण राम लड़ाय।
न्द्र हिरणाक्ष हति, हिरणकशिप विनशाय ॥१९॥
न गुणी बैरागी। षट दर्शन उर बरत सुआगी॥
करत मिलि बोधा। पढ़त बोध उपजत उर क्रोधा॥

पढ़ि वेदान्त न्याय नृप नीती। षट ऋषि वचन पुरान विनीती ॥
काव्य कठिन व्याकरण शृङ्गारा। अलंकार ज्योतिष निर्धारा ॥
वैदिक बिधि पकरत कर नारी। वर्णाश्रम क्रम करि फल धारी ॥
कठिन कर्म करि फल उपजावैं। क्रोध छिनक में ताहि छिनावैं ॥
भूख प्यास इन्द्री सब जीती। क्रोध करत छिन मांहि फजीती॥
मो सम शूर नृपति तो संगा। मैं बड़ कै बलवान अनंगा ॥

दो भट हम तो संग नृप, बड़ प्रताप बलवान।
हमते जीत न पावहीं, भक्ति ज्ञान तप दान ॥२०॥

क्रोध वचन सुनि कहत सुलोभा। सब बीरन की मोते शोभा ॥
मो सँग पाप बसत सब काला। मो सुभाव अति प्रबल कराला ॥
पंडित गुणी चतुर परतापी। थापन उथप उथप जिन थापी ॥
नर नरन्द्र ऋषि मुनि त्रयदेवा। मो वश रहत करत मम सेवा ॥
सब अनर्थ को मैं उपजाऊं। रज सत तमको शीश नवाऊं ॥
श्वपच यमन की द्विज सिवकाई। मो हित लागि फिरत सँगधाई ॥
योगी जपी तपी संन्यासी। मेरे हित पुर तजि वनवासी ॥
पिता मातु गुरु हित सुत चेला। मो हित वैर मोर हित मेला ॥

लोभ काज लरि लरि मरत, लोभ काज उर दाह।
लोभ करत अप कीरती, द्विज सन्तन परवाह ॥२१॥

मोते कृपण करत अति प्रीती। तिनकी सुनौ कहौं मैं रीती ॥
रुपया जुरत कृपण के पासा। बीश पचास होन की आसा ॥
सौ हजार लखकी मन मांहीं। करै अर्ब फिरि खर्ब उपाहीं ॥
एक खंड नवखंड अहीसा। सप्त द्वीप को चाहत ईसा ॥
इन्द्र ब्रह्म पद ते न अघाहीं। ल्याव ल्याव करि करत न नाहीं॥
सठ बहु फिरत रसायन काजा लोभ काज सिखवत गुण साजा।

सत्य शील तजि सह अपमाना लोभ काज पढ़ि वेद पुराना ।
मुंडित जटिल गृही रु गुमानी । फीके परे लोभ बुधि सानी ॥
सुष्ठु जननको दुष्ट करि, कीन्हे भ्रष्ट कुलीन ।
लज्जा युत निरलज्ज कृत, हित अनहित रत कीन ॥२२॥
मोसे भट सेवक तुम संगा । शिर धरि तव पद रहत उतंगा ॥
भक्ति विराग ज्ञान विज्ञाना । सहि न सकत मो करके बाना ॥
गर्व गुमान छदम पाखण्डा । वदत चारि मिलि वचन प्रचण्डा ॥
धरि कर कन्ध मरोरत मोछैं । खात पान निज तन लखि पोछैं ॥
परमुख निरखि वदन दृग मोरैं । भरि मद बकत दिखावत जोरैं ॥
शठ वत कुटिल पकरि पर हाथा । ऐंठत गात हलावत माथा ॥
लटकत चलत निरखि निज छाया । लखि पर रूप निरखि निज काया ॥
बंक पाग पीवत मद नाना । लोचन लाल सुनत खल ताना ॥
वचन वदत उन्मत्त वत, निज मुख करत बखान ।
काम क्रोध लोभादि मधि, मो सम को बलवान ॥२३॥
मो बल युद्ध करौ मम ईशा । गर्जौ इमि जिमि घन मृगधीशा ॥
मोसे वीर नृपति तो संगा । सुख युत राज करौ अनभंगा ॥
मो प्रताप अति उग्र प्रचंडा । मेरे धन गज बाजि अखंडा ॥
मेरे पुत्र प्रबल बलवाना । मो सँग त्रिया रमति सुख नाना ॥
सप्तद्वीप मधि मो सम नाहीं । नर नरेन्द्र मो मुख तन चाहीं ॥
मैं बलवान निबल तनधारी । मैं धनवान सुविश्व भिखारी ॥
मैं अति चतुर और अज्ञाना । मैं पण्डित सब मूरख जाना ॥
मैं महन्त सेवक सब मेरे । साधु सन्त सब मो पद चेरे ॥
कर करुवा गूदर गरे, पनही तेल न तूल ।
भक्ति ज्ञान वैराग्य युत, मो पद रत अनुकूल २४

मब निष्प्रेह मोर पद दासा । मैं भोजन दै राखत पासा ॥
नवत नरेन्द्र मानि म्वहि ईशा । मैं कर धरत तासु के सीसा ॥
कौन इन्द्र को है त्रिपुरारी । को चतुरानन कौन मुरारी ॥
को फर्णान्द्र को धरणि अकासा । को जल पवन अनल आभासा ॥
को है मुक्ति कौन है काला । को है चन्द्र सूर ग्रहचाला ॥
हम मम सुखित कौन जगमाहीं । रहत तियन सो दै गलबाहीं ॥
हमरे पुत्र और के नाहीं । हम कुलीन हम बड़ कुलमाहीं ॥
अब पाखंड छदम यों बोलै । सब अपयस गुण निजमुख खोलै ॥

मोह नृपति सुनि मो कथा, हम बिनु सरै न काज ।
हम बिनु अरि नहिं मरि सकै, हम बिनु जमै न राज ॥२५॥

मो मसलति मैं राजा चलि है । तौ विवेक नृप तौ आमिलि है ।
अब राजा सुनि मोर उपावा । मो में अधिक सकल विधि दावा ॥
मोरि दृष्टि में ज्ञान विवेका । सबको फोरि करौं नृप एका ॥
जटा भस्मि धरि ह्वै सन्यासी । धारि दिगम्बर तन बनवासी ॥
करि व्रत मौन असन फल सागा । आसन दृढ़ मुख वद वैरागा ॥
लखि मो दसा नृपति ढिंग आवै । सुनि मो बचन प्रतीति बढ़ावै ॥
तब एकान्त रहै मो संगा । मो मुख निरखत सुखित उमंगा ॥
मोते सुत मांगत धन धामा । फिरि चाहत गज बाजि सुवामा ॥

अरि जीतन तन बल करन, अवनि अनंग विलास ।
असन अधिक भख मख करन, विचर न मध्य सहास ॥२६॥

नृप ह्वै नम्र चहत मो पासा । देन कहत पुनि रहत उदासा ॥
बढ़त ललक नरवर मन माहीं । अति विश्वास सहित नित आहीं ॥
मैं प्रसन्न ह्वै कहत उपाई । ता विधि या उर में दृढ आई ॥
ता मधि जीवन को बहु त्रासा । दीन द्विजन को करौं विनासा ॥

ो खोऊं बासा। तहँ वैराग न होय निवासा॥
नृपति को राजा। आज्ञा करत सकल विधि काजा।
ह मत्सर लोभा। सुख युत वास करत अति शोभा॥
न के रूप धरि, नर नरेन्द्र मन भाय।
ान वैराग तप, या विधि देहुँ नशाय॥२७॥
ीति ते बाता। उर में अधिक विविध विधि घाता॥
भक्ति बखानौं। ताके पुत्र ज्ञान को मानौं॥
ैराग्य स्वरूपा। करत त्याग करि वेष अनूपा॥
। वद मृदु बानी। सात्त्विक मन्द मिष्टता सानी॥
ण वचन सुनाऊं। फिरि अनईश्वरवाद मिलाऊं॥
धर्म औतारा। मैं हौं ब्रह्म करौं निर्धारा॥
ं होय प्रवेशा। ताकी घरनि रहत मो पेशा॥
ीति उपजाऊं। यन्त्र मन्त्र बहु तन्त्र सिखाऊं॥
कौं बालक तकौं, तकौं सुष्ठु पट दाम।
ुदइ संसार के, प्रगट रहत निष्काम॥२८॥
जानि म्बहि पावै। गुरु सन्तन ते भाव मिटावै॥
नि ते निज नेहा। तब यह साधु तजै ता गेहा॥
मन्द परि जावै। वाम धाम धन पुत्र सुहावै॥
की होय चढ़ाई। काम क्रोध मद लोभ बढ़ाई॥
ार्य धरि आवै। दै श्रुति ओट भर्म उपजावै॥
धर्म धरि वेशा। साजि बाजि मत कर उपदेशा॥
कनफटा योगी। मदिरा आमिष के उपभोगी॥
ी सेवरा होवै। सब उर बीज कुबुधि के बोवै॥

कबहुँक ह्वै षट् कर्म रत, बनै विप्र को वेश।
और वर्ण को शिष्य गनि, करै धर्म उपदेश ॥२६॥
और दिखाय रचै द्विज धर्मा। जाति ओट दै करै कुकर्मा ॥
करि अपमान सतावैं साधा। क्षुद्रदेव को करि आराधा ॥
फिरि बहु जीव हतै मख माहीं। पाप कर्म करि अधिक सिहाहीं ॥
सो उपदेश सिखावै औरै। हम बूड़े औरन को बोरै ॥
भक्ति भाव उर में नहिं धारै। सो सब रीति युक्ति विस्तारै ॥
हम अति चतुर प्रबल नृप ऐसे। अज्ञा होय करैं अब तैसे ॥
सुनि पाखण्ड छद्म के बैना। मोह नृपति हरष्यो युत सैना ॥
अति प्रसन्न बोले इमि बानी। तुम अति प्रबल मोर उर आनी ॥
शस्त्र सकल विधि ते सजो, गजौ मेघ ज्यों बीर।
ज्यों मृग पर मृगपति प्रबल, त्यों तुम सब रणधीर ॥३०॥
यह मसलति अनुभव सुनि पाई। सो विवेक को आनि सुनाई ॥
प्रथम कही माया की मिलनी। मोह नृपति सँग सैना चलनी ॥
फिरि माया इनको समझाये। सो सब विधिवत वचन सुनाये ॥
पुनि वद राज सौंज की रीती। सुनि बीरन के वचन प्रतीती ॥
काम कोध लोभादिक बानी। मोह नृपति की कही सिहानी ॥
युद्ध करन की अति दृढ़ताई। सो अनुभव नृप को समझाई ॥
सुनि विवेक अनभै की कहनी। ता छिन बोलि लई ढिग रहनी ॥
फिरि बुलाय श्रद्धा निज बामा। पुत्री पुत्र संग निष्कामा ॥
भक्ति ज्ञान विज्ञान प्रण, मित्र साँच अनुराग।
वर्तमान दीमान तप, निर्भय भट वैराग ॥३१॥
धीरज धर्म लये भट बोली। सुष्ठु कर्म अस्नान अबोली ॥
दान मिष्टता आदि सुबीरा। सब उमराव बड़े रणधीरा

सुनौ सुभट तुम रक्षक मेरे । मैं तुम सँग तुम मो तन नेरे ॥
तुम सब मिलि मोको नृप मान्यो । मैं तुमको मो तन सम जान्यो ॥
मैं तुम सँग तुम मो सँग ऐसे । शशि शीतल छाया तन जैसे ॥
ज्यों रवि घाम नैन ढिग ज्योती । अनल ताप दीपक मणि मोती ॥
सन्तत सब विधि हम तुम सङ्गी । तुमको लखि मैं सुखित अभङ्गी ॥

मोह नृपति सँग प्रबल दल, आयो करन विवाद ।
काम क्रोध मद लोभ खल, करत युद्ध हित नाद ॥२२॥

विधि वत अनभय ते सुनि पाई । अब कहु ताकी कौन उपाई ॥
मोते तुम बल की कहु बाता । नीति निपुण तुम सब बड़ ज्ञाता ॥
बोले नमि नृप तन शुठि बानी । हम बल तुम सब चाहत जानी ॥
हम मुख हमरी करैं बड़ाई । हम बल तेज तुरत नशि जाई ॥
पतित अधम वर्ण यश अपनों । तिन की कहनि रैनि को स्वप्नों ॥
तुम प्रताप सब शिर पर धरिहैं । तव बल अरि ते निधरक लड़िहैं ॥
अभाग बल जीतत राजा । लड़िहैं कहा सुभट गज बाजा ॥
सेवक ताको यह निज धर्मा । नृप आज्ञा युत करिये कर्मा ॥

मानि सेव्य आयसु सुखित, सेवक ता तन धाय ।
ता सेवक की शक्र शिव, दिग्पति करैं सहाय ॥२३॥

सेवक निज मुख वदत बड़ाई । तासु वचन फल प्रगट घटाई ॥
जो तुमरे उर यह दृढ़ताई । ताकी हमते सुनौ उपाई ॥
अनुभव सुष्ठु विचार प्रतीती । इनते सुनहु हमारी रीती ॥
राजा कीनि दृष्टि इन ओरी । तब विचार लीने करजोरी ॥
नृप विचार प्रति आयसु दीनी । इनकी कथा कहौ रस भीनी ॥
राजन सुनो कथा इन केरी । किञ्चित भणौं यथा मति मेरी

प्रथम ज्ञान भट प्रबल प्रतापी । थापन उथप उथप सब थापी ॥
मोह नृपति ताको बल माया । ताते बनी अचर चर काया ॥
अखिल विश्व पाताल मूर्ति, ब्रह्मलोक ब्रह्मण्ड ।
माया कृत रचना सबै, पञ्चावर्ण सुअण्ड ॥३४॥
अवनि आवरण प्रथम सु जानों । ताते द्विगुण नीर को मानों ॥
जल ते त्रिगुण अनल आवरना । अग्नि चतुर गुण पवन सु फिरना ॥
सुक्षम पञ्च गुण स्वच्छ अकासा । तिन २ प्रति शुठ धाम निवासा ॥
तिनको ज्ञान नाशवत देखै । माया तृणवत ताके लेखै ॥
तिन दृग करि माया लघु देखी । मोह लोभ की कैसी शेखी ॥
या ते अधिक प्रबल विज्ञाना । मोह निशा नाशन को भाना ॥
जा नर उर विज्ञान सहाई । सो वह जीवन मुक्ति कहाई ॥
ताके उर विज्ञान प्रकाशा । मुक्ति नरक की आश न त्रासा ॥
जाके उर भाषत सबै, अखिल विश्व की रीति ।
हस्तामल लों निरखि वद, सो विज्ञान प्रतीति ॥३५॥
शब्द ब्रह्म मति अति गम्भीरा । ताको हृदय स्रोतवत नीरा ॥
श्रुति स्मृति के हद को जानै । परते परे ताहि उनमानै ॥
मर्म स्वरूप जानि जिन माया । काम क्रोध मद लोभ उड़ाया ॥
तब फिरि मोह कहा बल करिहैं । अपनी अग्नि आपही जरिहैं ॥
फिरि वैराग्य सङ्ग अनुकूला । दुख नाशक सब सुख को मूला ॥
कोटि सुभट सम इक वैरागा । ता विनु सुर नर दुखित अभागा ॥
ताके चरण शरण जे आये । ब्रह्म होय आनन्द समाये ॥
सनत सनन्दन सनतकुमारा । कीन सनातन सब निर्धारा ॥
सनकादिक हरिद्वार मिलि, करि आनन्द विचार ।
परते पर वैराग सुख, यहै हदं तत्तसार ३६॥

वी गृही है ऐसो । द्रव्यवान सब ते बड़ पैसो ॥
हित वाम अनुकूला । रिपु नहिं रोग शोक दुख शूला ॥
त आज्ञा अनुसारी । पण्डित चतुर प्रबल सुखकारी ॥
लंकृत भूषण बसना । लेत न देत मिष्ट वद रसना ॥
इ राखत मर्यादा । यश युत सकल न करि अपवादा ॥
ते कुल के बड़ मानै । सब पितुमात भ्रात वत जानैं ॥
ज सबन के काजा । पूँछि करत कुल पुरनर राजा ॥
य अवसान बिचारा । समझत सब विधि सार असारा ॥
गुरु पद सेवन करत, मद मत्सर उर नाहिं ।
गृहस्थ सब ते सुखित, और दुखित जग माहिं ॥३७॥
त खण्ड मँडलीशा । ताते अधिक पुरी को ईशा ॥
धिक खण्ड पति जानौं । दीप धीश सुख सब पर मानौं ॥
भूमि को राजा । ताते सुरपति के सुख साजा ॥
ताते बड़ भारी । तिन ते सुखित मुक्ति अधिकारी ॥
सार मुक्ति को रूपा । ताते बड़ वैराग स्वरूपा ॥
दैव ताकी शरणाई । विष्णु वदत ताकी प्रभुताई ॥
ल ता बल अवधूता । ऋषभ सुक्ति ता बल भवपूता ॥
ासु रूप नहिं जानैं । सनकादिक ता बल भ्रम भानैं ॥
रद मुनि वैराग बल, प्रबल महा बड़ धीर ।
य चूड़ामणि शुक सुखित, भानि नृपति मन भीर ॥३८॥
विश्व याते बड़ नाहीं । ऋषि मुनि सबल रहत ता बाहीं ॥
अणु तृण ते लघुताई । अति बड़ होइ याहि शरणाई ॥
द्विज हो सब विधि ऊनो । करि वैराग मुनिन ते दूनो ॥
ढग तृसरेणु सुलोभा । मोह नृपति उर पारत रोभा ॥

सो यह नृप तुम ते अनुकूला । दुष्ट दमन सब सुख को मूला
क्षमा सुता तुमरी अति कवनी । लज्जित नम्र मधुर अरि दवनी ॥
सो कृपाल मन्तन सुखदाई । ऋषि मुनि जन ताकी शरणाई ॥
वदत वेद ताकी प्रभुताई । क्रोध प्रबल को देत नशाई ॥

कोपत क्रोध सुबोध बड़, अहङ्कार पाखण्ड ।
क्षमा मुसकि चितवनि करति, तव वश होत उद्दण्ड ॥३९॥

सुनि तप बीर तासु की रीती । तप बल सकल विश्व को जीती ॥
तप बल होत कृपण धनवाना । तप बल अगुण होत गुण नाना ॥
तप बल प्रबल होत अवनीशा । तप बल सकल नवावत शीशा ॥
तप बल बढ़त प्रताप अपारा । तप बल सब सारन को सारा ॥
नर नरेन्द्र ऋषि मुनि तप धारी । तप बल डरत इन्द्र अति भारी ॥
तप सो शस्त्र जासु कर माहीं । ताके शत्रु सहज नशि जाहीं ॥
तप सो द्रव्य जासु के पासा । मुदित रैनि दिन उदित प्रकासा ॥
तप मूरति नारायण स्वामी । बद्रीनाथ परम निष्कामी ॥

सात्विक तपते विष्णु पद, राजस ते विधि पाय ।
तामस तप ते शिव शरण, तप बल परम उपाय ॥४०॥

तप ते काम मूल नशि आवै । निरखि रुद्र मन्मथ जरि जावै ॥
लोभ कौन तप धन के आगे । तप को निरखि मोह मद भागे ॥
नृप सो तप तुमते अनुकूला । सो यह तप सब सुख को मूला ॥
शुद्धि सुबुद्धि आतम की रानी । ता को मातु सबन मिलि मानी ॥
ता अनुकूल ज्ञान वैरागा । ताते नम्र होत तप त्यागा ॥
पण्डित चतुर परम बलवाना । निर्तत मधुर करत कल गाना ॥
वचन बिलास उक्ति युत युक्ती । ये सब तन कुबुद्धि की शक्ती ॥
बुधि बल राजनीति को जानैं । बुधि ते अधिक न्यून उनमानैं ॥

ात्मिक गति अर्थ सक, चित गाड़ि बुद्धि विचार।
ार उठि चलत तन, दृढ़ता धरि निर्धार ॥४१॥
नर तन के धारी। शूकर श्वान खरनि ते ख्वारी॥
ा पावै क्यों चैना। दुखित अन्ध वत चत युग नैना॥
रि बुद्धि बल होवै। करि सतसङ्ग सकल मल धोवै॥
की ले शरणाई। ता बल ते भ्रम तम नशि जाई॥
शुद्ध इष्ट को पावै। आवागमन बहुरि नहिं आवै॥
इमि कीन विचारा। बिना बुद्धि दुख सहत अपारा॥
बुद्धि हीन की रीती। आप आपनी कीन फजीती॥
चिन्तामणि पाई। विषय तनक खरिका जग माई॥
हीन की यह दशा, सकल सार को त्यागि।
ाचार विचार कर, छस्त भर्म भुस लागि ॥४२॥
ेति विचारत नाहीं। करि करि क्रिया फेरि पछिताहीं॥
ारत अपनो काजा। श्रम भरि फिरत बँधत नहि पाजा॥
र लघु ते मित्राई। अधम असद गुण की चतुराई॥
व्यापत छिन छिन में। तजत सुकर्म भर्म श्रम मन में॥
ाड़ जानि निहोरा। तिन हित करत कर्म खल घोरा॥
ोठि दीठि यमलोका। ताते डरत खरचि भरि शोका॥
ोक बिगारे दोई। नर तन धरि शठ सब विधि खोई॥
करि बुद्धि न चाहीं। ताते फिरत पशू की नाहीं॥
त विश्व मधि पृथक् विधि, अखिल वर्ण विस्तार।
लाभ पर अपर को, करत बुद्धि निर्धार ॥४३॥
सुनि बुधि की रीती। कीनी अधिक मातुनत प्रीती॥
ाद विचार ते बाता। अब सब कहौं भक्ति विधि ताता॥

सुनि सुप्रश्न नमि वदत विचारा। अति बहु कठिन भक्ति निर्धारा॥
तिनके पुत्र ज्ञान वैरागा। सेवत चरण कर्म तप त्यागा॥
निरभै क्षमा अहं विज्ञाना। छिन छिन धरत भक्ति को ध्याना॥
धीरज बुद्धि शील सन्तोषा। करति भक्ति तिनको नित पोषा॥
बिन बल भक्ति निबल सब सैना। सब जग अन्ध भक्ति बिनु नैना॥
भक्ति पन्थ अतिशय सुखदाई। निष्कंटक दृग मूंदि सुधाई॥

पण्डित चतुर कुलीन भट, विकट वस्तु गति जान।
इनते हरि वश होत ना, एकै भक्ति प्रधान॥४४॥

पर ते परे ब्रह्म अनुरूपा। भक्ति हेत वपु धरत अनूपा॥
कर गहि भक्ति जाहि अपनावै। ताकी कथा कहत नहिं आवै॥
सो यह भक्त भक्ति के दासा। करत कृष्ण तिनको विश्वासा॥
भव लक्ष्मी विधि पार न पावैं। भक्ति काज हरि हाँथ बँधावैं॥
श्रुति सम्मृति तन्त्रनि मत साधै। तासु मन्त्र ते हरि आराधै॥
वेधि निषेध करि भोग लगावैं। भक्ति हेतु सिवरी फल पावैं॥
त्स हरण चतुरानन कीनों। ताको कीन्ह छिनक में हीनों॥
हरि अस्तुति जवाब नहिं पायो। भक्ति छाँछ दै नाच नचायो॥

रति पति गति वाणी थकित, मन बुधि होत अपङ्ग।
ता प्रभु को करि भक्ति वश, लिये ग्वाल निज सङ्ग॥४५॥

भक्ति काज शूकर वपु धार्यो। नरमृगपति बनि असुर सँहार्यो॥
भक्ति काज कूरम अवतारा। वामन मीन फरस कर धारा॥
रघुपति राम असुर कुल मारा। कीन्हों कृष्ण दूरि भू भारा॥
बुद्ध भक्ति हित भये प्रकाशा। कल्की किये यमन को नाशा॥
कृष्ण भक्ति हित धरि अवतारा। क्रीड़त करत भक्ति विस्तारा॥
जो कोइ करत भक्त अपराधा। कृष्ण चक्र ते जरत असाधा॥

[illegible]

(वंश निज अंश भनि, कीनो प्रबल प्रमाद ।
क हेत दनु मारि हरि, अमल करन प्रह्लाद ॥४६॥
रय देव श्रुति गावै । विप्र शाप ते कुलहि नशावै ॥
म उग्र दुर्वासा । अम्बरीष को दीनी त्रासा ॥
ते को करि द्विज दोषा । कृष्ण कियो तापर अति रोषा ॥
य दयो तन तापा । भूलि गयो द्विज देन सरापा ॥
रि हरि के ढिंग आयो । ब्रह्मण्यदेव यह बचन सुनायो ॥
त मैं भक्त अधीना । उन पै जाउ दोष तुम कीना ॥
रे अम्बरीष पै आये । चक्र ताप ते तिनहिं बचाये ॥
ती सुत जाय सताये । हरि आये सुनि चले खिसाये ॥
क पच्छ प्रभु के प्रगट, जाति न वर्ण विचार ।
क्त हेत अव्यक्त ते, व्यक्त धरत अवतार ॥४७॥
क नृप भक्ति प्रभावा । प्रेम प्रसङ्ग सुनन चित चावा ॥
वेक विचार सुभ्राता । कहौ प्रेम की विधिवत बाता ॥
न नमि सुष्ठु विचारा । प्रेम स्वरूप सबन को सारा ॥
भीर अतोल अपारा । को करि सकत तासु निर्धारा ॥
को फल भक्ति सुभावा । भक्ति भाव फल प्रेम प्रभाव्रा ॥
ाणा भाव सु भक्ती । ता मधि मिली शुद्ध आशक्ती ॥
रूप कौन अस गावै । शेष महेश पार नहिं पावै ॥
ेम प्रेम की रीती । करत प्रेम ते प्रेम प्रतीती ॥
नत नित्य किशोर विधि, प्रेम लच्छणा रूप ।
जानति सहचरि सुघर, रसिक मुकुट मणि भूप ४८

तिनकी रीति विचार न जानै । प्रगट प्रकाश कछू उनमानैं ॥
जहँ विचार तहँ प्रेम न आवै । प्रेम प्रेम प्रति प्रेमहि गावै ॥
कहत प्रेम को प्रेम कहानी । प्रेम रीति प्रेमिनि ही जानी ॥
नेम न जानि प्रेम की रीती । नेम प्रेम मिलि परम फजीती ॥
प्रेम गारि प्रेमिनि इमि चाहीं । कोटि मुक्ति सुख ता सम नाहीं ॥
प्रेम गारि प्रेमिनि सुधि आवैं । जैसे रङ्क सुखित निधि पावै ॥
शूर सती यह प्रेम न जानैं । मोह क्रोध वश निज तनु भानैं ॥
चन्द्र चकोर केकि घन नेहा । पावस पिक मृग सुर तजि देहा ॥

शशि चकोर पिक केकि घन, मृग सुर दीप पतङ्ग ।
ये सब स्वारथ रत विदित, प्रेम न परसत अङ्ग ॥४९॥

निज सुख सुखित ते न जन प्रेमी । सो सकाम कामिनि मधि नेमी ॥
निज तन ज्ञान गनत मो देहा । सो यह प्रेम न शुद्ध सनेहा ॥
तहँ वह शुद्ध प्रेम को देशा । तन सुख तिनके नाहिन लेशा ॥
मस्तक चरण नाहि विधि हाथा । प्रेम प्रेम बिनु सङ्ग न साथा ॥
प्रेमहि पिता प्रेम ही माता । प्रेम वाम सुत प्रेमहि भ्राता ॥
प्रेमहि क्रिया प्रेम ही नेमा । प्रेमहि पट भूषण गुण क्षेमा ॥
प्रेमहि अशन पान व्योहारा । करत प्रेम मिलि प्रेम विचारा ॥
प्रेमहि जप तप संयम योगा । प्रेमहि हर्ष प्रेम ही सोगा ॥

प्रेम प्रबल सब सुभट मणि, जुरत युद्ध सजि साज ।
सकल शत्रु मोहादि हति, जमत अकंटक राज ॥५०॥

अद्भुत एक प्रेम की रीती । मानत हारि प्रेम की जीती ॥
अखिल वचन मधि अति करुआई । प्रेम गनत ताको गरुवाई ॥
प्रेमहि लगत बात यह मीठी । उक्ति युक्ति चतुरन की सीठी ॥
सुघर चातुरी सब को भावै । प्रेम निरखि ता सन पछितावै ॥

लाभ को हानी । वदत परस्पर हानि कहानी ।
नि सबन की रीती । प्रेम मीन वत उलटि प्रतीती ॥
प्रेमिनि की बानी । नैना श्रवण श्रवण दृग मानी ॥
ति अस्तुति निन्दा । मिलन बीछुरन बिछुरि मिलिन्दा ॥
भक्त गम्भीर भट, मूलि निमित्त सुहाल ।
ल मीन सुमित्र दृढ़, चलत उलटि हठि चाल ॥५१॥
गि वेद कुल लोपी । कीनी प्रेम सबन पर गोपी ॥
रति भई मथुरनी । व्यास सुवन निज मुख ते वरनी ॥
विचार की बानी । निज सैना अति प्रबल पिछानी ॥
आज्ञा सब पाई । युद्ध करन हित करत चढ़ाई ॥
गुण सजे गज बाजा । सब उमराव चढ़े सँग राजा ॥
न सहित सँग साजा । चमू अमित जिमि सर बिनु पाजा ॥
व वदत बड़ नादा । बढ़ियो बीर मोह ते बादा ॥
सिंहासन शोभा । लखि नृप मुदित उदित उर गोभा ॥
प्रबल रण में अचल, बीर ज्ञान वैराग ।
रोल तिन सङ्ग भट, योग युक्ति तप त्याग ॥५२॥
वाम भुज ओरा । क्षमा उग्रता ता सँग जोरा ॥
ज विज्ञान सुदाना । ता सँग अनुभव धीरज नाना ॥
र भक्ति चण्डोला । ता सँग दया स्वधर्म अडोला ॥
रण कीर्तन सङ्गा । मनन नम्रता प्रण सु उमङ्गा ॥
र्चन वन्दन दासा । ध्यान निवेदन दृढ़ विश्वासा ॥
त सम सख्य सुबीरा । वात्सलि रस शृङ्गार सुधीरा ॥
ल भक्ति सँग योधा । निरखि डरत मद मोह रु क्रोधा ॥
वेक गज राजेशा । बुद्धि रहति सँग सुघर सुदेशा ।

अति ऐंडाइल प्रेम भट, रहत नृपति के सङ्ग।
लगन मानसी लक्षणा, अननि भावरस रङ्ग ॥५३॥
यह सब प्रेम वीर की सैना। नृपति सङ्ग चौकस दिन रैना
बकशी शुद्ध सुधर्म सुकीनो। सन्त सङ्ग ताके सँग दीनो
सब सैना जन सुभट सुवीरा। अचल प्रबल रण करन सुधीरा।
वदत सुधर्म सुनौ सब योधा। उनमें प्रबल काग मद कोधा।
अनर मोह नृप छल अज्ञाना। मिथ्या सङ्ग लिये भट नाना।
माया चरित करत सँग तिनकी। सत्र हढ़ सौंज कीन जिन रनकी॥
तिनके जीतन की गति ऐसे। कनक कशिप कायाधव जैसे॥
ज्यों उरवशी काम मिलि आये। नारायण पै शस्त्र चलाये॥
काम बाम हरि निरखि कै, हँसि चितये तिन ओर।
क्रोध मारि मूर्च्छित भये, हारि मानि कर जोर ॥५४॥
इनके जीतन की यह रीती। करियो मो मुख वचन प्रतीती॥
सुनि सुधर्म बकशी की बानी। चली चमू रण रङ्ग चुचानी॥
मनसा भूमि सैन चलि आई। उतते उनहूँ दई दिखाई॥
शूर वीर दुहुँ दिशि ते गाढ़े। मनसा अवनि मध्य भे ठाढ़े॥
बाजन लगे रङ्ग रण तूरा। कोपे करन युद्ध सब शूरा॥
क्रिया शस्त्र दुहुँ दिशि ते छूटे। धाय धाय भट गजवत जूटे॥
मल्ल मल्ल प्रति करत जु दावा। परत प्रहार होत तन घावा॥
नृप प्रति नृप के चालत बाना। शक्ति प्रहार डारि विधि नाना॥
चमू चलत डगमग मिलत, भिलत जात दुहुँ ओर।
विक्रम प्रबल प्रचण्ड भट, करत युद्ध अति घोर ॥५५॥
ोह नृपति सैना के वीरा। निरखि विवेक समर मधि धीरा॥
ापनी सैना लखि गुने ऊनी। इनते मोहधीश की दूनी॥

नृप के प्रेरे आये तहाँ प्रथम है डेरे
बीर इक ठौरे। सुठि सनेह मधि मृदु वद बोरे
सुनो सब योधा। शत्रु प्रबल फिरि अति बड़ बोधा
न्यून लखि पावै। तौ तुमते शत गुण बढ़ि जावै
देखि दृग ऊनी। उन उन्मान लई उर दूनी
मोते मुख भाखौ। मो शिर शपथ गुप्त मति राखौ।
सब मिलि कीन दृढ़, वदत सुधर्म सुबीर।
गुरु बिन बल अबल, रण मधि होत अधीर ॥५६।
लखत निशि नाहीं। रवि सहाय ते चहुँ दिशि धाहीं।
। रहत जिमि दीना। त्यों सतगुरु बिनु हम बल हीना।
सतगुरु आराधा। मोह प्रबल करि है अति बाधा।
करन को कवनी। मङ्गल तुमहि मोह मद दवनी।
ुरु चरण प्रकाशा। काम क्रोध तम मत्सर नाशा।
नृपति सुख पाई। हमहूँ जानत गुरु अधिकाई।
। नाहिं वश मोहा। करि है समर अनर भरि छोहा।
उनपै पठवावो। प्रेम भक्ति को सङ्ग खिनावो।
य शिर धरि चरण, कहियो वचन प्रवीन।
िवेक सेना सहित, तुम बिनु अति बल हीन ॥५७॥
आयसु नृप पाई। गुरु मिलिबे की कीन उपाई।
करन लगे आराधा। प्रगटे निरखि मिटी सब बाधा।
न सुठि अवरेखा। मुख प्रसन्न मृदु वचन अरेखा।
ुग चरण खराऊँ। अति ऐश्वर्य मधुर लखि चाऊँ।
कमल दल जैसे। भृकुटी धनुष बंक सम तैसे।
ल तिलक कल बाना। त्रिविध ताप नासत खल नाना।

शीश सचिक्कन कर्ण विशाला। गोल कपोल अधर अरुनाला।
नासा शुक मुख दशन प्रकाशा। निरखि प्रणत जन करत हुलासा॥
चिबुक चारु दर कण्ठ उर, बड़ विशाल युग बाहु।
उदर नाभि त्रिवली अमल, रोम रेख बिनु थाहु॥५८॥
जंघ रम्भ पिंडुरी अति कवनी। यज्ञोपवीत माल अघ दवनी॥
कण्ठी युगल सुभग उपरैना। सतगुरु सर्वोपर लखि नैना॥
नम्र भये चरणन शिर दीन्हे। श्रीगुरु निज तन भूषण कीन्हे॥
इन नृप वचन कहे तिन माने। करि प्रसन्न राजा ढिग आने॥
निवृति रूप आचारज वेशा। बन्धन सौंज नहीं लवलेशा॥
नृप विवेक तिन को लखि पाये। सबको लै सँग सन्मुख धाये॥
चरण परशि शिर नृप कर जोरे। सब मिलि अति बड़ मान निहोरे॥
छत्र सिंहासन नृप हित साजे। तापर श्रीगुरु आनि बिराजे॥
निज निज सम्पति सङ्ग लै, सकल बीर उमराव।
लखि श्रीगुरु मुख प्रबल भट, युद्ध करन चित चाव॥५६॥
नृप बैठारि लियो निज सङ्गा। निरखि वीर गुरु परम उमङ्गा॥
आचारज आज्ञा सब पाई। चढ़ी सैन अरि करन लड़ाई॥
उतते मोह नृपति चलि आयो। अरस परस संग्राम मचायो॥
गरजि गरजि दुहुँ दिशि ते योधा। लरत करत उर परम विरोधा॥
मोह नृपति भट काम बुलायो। लै सँग सैन आनि शिर नायो॥
राजन् कहत काम प्रति वाता। अब विवेक ते करि इक घाता॥
व्यापत काम जासु तन माहीं। नृप विवेक ता छिन नशि जाहीं॥
तुम सँग सैन सबै सजि जावो। शत्रु फौज को ओज नशावो॥
चढ़्यो काम अति प्रबल भट, अटक न मानत आन।
निर्लज ढीठ निशंक हठ, लिये सङ्ग सुलतान ६०

बरन लगी चहुँदिशि ते आगी । उठि बल्ली लपिटन तरु लागी ॥
सरित समुद्र मिलन को दौरी । पति पत्नी रति मानि निहोरी ॥
घन बिनु कुसम हरित भइ अवनी । उष्ण शीत मिलि सम ऋतु कवनी ॥
विटप प्रसून फलन फल लागे । खग अरु खगनि मृगनि मृग पागे ॥
विभ्रम विकल भये नर नारी । निर्ज्जर नर मुनि नाग दुखारी ॥
नृप विवेक सुनिकै यह रीती । रति पति लई विश्व सब जीती ॥
राजा समझि ज्ञान भट बोल्यो । ताके ढिग अन्तर सब खोल्यो ॥
करन समर आवत लखि कामा । ताको बल कुसुमाकर वामा ॥

रूप राग सौरभ कुसुम, दृग कटाक्ष मृदु वैन ।
तिय हरोल तन साजि सब, चढ़ी काम की सैन ॥६१॥

ताते युद्ध करन तुम जावो । काम कुटिल को मारि भगावो ॥
चल्यो ज्ञान आयसु नृप पाई । धीरज शील सुसङ्ग सहाई ॥
मनसा भूमि मध्य युग ठाढ़े । वीर प्रबल युग रण मधि गाढ़े ॥
प्रथम वाण मनसिज के छूटे । ज्ञान बान ते शत गुण टूटे ॥
काम कहत सुन्दरि यह नीकी । ज्ञान कहत विष वत हत जीकी ॥
काम कहै याके सँग जाई । ज्ञान कहै यह साँपिनि खाई ॥
काम कहै यह मोर लुगाई । ज्ञान कहै यह मेरी माई ॥

उरज उतङ्ग कठोर सुठि, चारु कपोल सुहाँस ।
दृग कुरङ्ग वड़ भाल भल, चिकनित चिकुर सुवास ॥६२॥

अधर बिम्ब नाशा शुक पैनी । तन सुवास सँग षटपद श्रेनी ॥
कम्बु कराठ तिल थोथरि दाढ़ी । अहिवत भुज भूषण रति बाढ़ी ॥
कटि नितम्ब सुन्दर जिमि रम्भा । जंघ युगल कदली वत खम्भा ॥
नूपुर चरण रुणित कलनादा । समझत कर्ण तासु को स्वादा ॥
हाटक वर्ण बसन तन झीने । चमकत अङ्ग रहत दृग भीने ॥

गजगति चलनि हलनि अँगअङ्गा। वदत मत्तवत वचन उतङ्गा
भूषण बजत होत झुनकारा। तजि समाधि सुख लेत अपारा ॥
अति लावण्य निपुण युत प्रीती। पुंस रहित नमि सहित प्रतीती ॥

कोक कला गुण राग निधि, वचन वदत रस सानि।
तासु संग सुख स्वर्ग सम, कहत काम रति मानि ॥६३॥

ज्ञान कहत तू वदत सुवामा। सो यह रुधिर हाड़ सम चामा ॥
पंच तत्त्व एकत बनि देहा। अन्त समै विष्ठा कृमि खेहा ॥
झरत द्वार नव विविध विकारा। ताको गनत अधम सुखसारा ॥
सुन्दर मोर सुहावनि वानी। भखत उरग अति अधिक गलानी ॥
त्यों यह वाम विधानहि जानौ। तम को द्वार तासु को मानौ ॥
सुनु शठ कौन पुरुष को नारी। पंच तत्त्व के सबै विकारी ॥
तासे अधम देह अभिमानी। तिन यह नारि सार करि जानी ॥
कनक कलश उरजनि को गाये। मांस ग्रन्थि चर्मनि लिपटाये ॥

वदन कमल मधि लार परि, नासा शुक तहँ रेंट।
जंघ रम्भ तहँ मूत्र मल, मूत्र मूत्र मिलि भेंट ॥६४॥

पंच तत्त्व के सकल विकारा। ऐसे ज्ञान कीन निर्धारा ॥
शब्द शरण हृद बेधन लागे। निर्लज ढीठि छाँड़ि रण भागे ॥
दृढ़-निशंकता दई गिराई। काम सैन दीन्हीं विचलाई ॥
काट्यो खड्ग धनुष सब बाना। निलज सनाह छेदि विधि नाना ॥
ध्वज रथ काटि अवनि पर डारयो। फिरि ऋतुराज सारथी मारयो ॥
तब डरि काम युद्ध तजि भाग्यो। निरखि मोह चिन्ता रस पाग्यो ॥
निर्लज काम मोह ते भाखी। मेरी ज्ञान कछू नहिं राखी ॥
मारी सैन सबै भट भागे। फिरे फेरि लरि लरि तन त्यागे

धनुष बाण रथ काटि कै, लियो सारथी मारि।
तब राजा मैं प्राण लै, भाग्यो अङ्ग उघारि ॥६५॥
अब ततकाल पठावौ क्रोधा। ताको निरखि भगैं भट बोधा ॥
नृप आज्ञा करि क्रोध बुलायो। काम ज्ञन वृत्तान्त सुनायो ॥
युद्ध करन की आज्ञा दीनी। ताकी चमू तासु सँग कीनी ॥
पाप प्रबल ताके सँग योधा। हिंसा निर्दय चले विरोधा ॥
जिद्द जहोद जरण ता साथा। चढ्यो क्रोध सब को बनि नाथा॥
कलह कुबुद्धि कल्पना संगा। तासु जोर ते बकत उतंगा ॥
तामस रथ चढ़ि ता छिन धायौ। करि प्रवेश काया मधि छ्यौ ॥
रक्त नैन भौहैं चढ़ि आई। त्रिवली भाल नाक वक्राई ॥
दाबि दशन फरकत अधर, कम्पत करधर पाव।
मुख प्रचण्ड वाणी वदत, मारि मरण नित चाव ॥६६॥
ज्ञान दूत नृप के ढिग आयो। काम विजय को वचन सुनायो॥
सुनि विवेक अतिशय सुख पायो। बेर बेर गुरु पद शिर नाय ॥
दूजे दूत कही सु बिनीती। क्रोध चढ़न की सब विधि रीति॥
नृप विचार मिलि मतो उपायो। ज्ञान बीर तहँहीं रखवायो ॥
नृप की सुता क्षमा बड़ योधा। ताते डरत निडर शठ क्रोधा ॥
आज्ञा ताहि विवेक सुकीनी। सबर शीलता ता सँग दीनी ॥
क्षमा सैन रण में चलि आई। सात्विक रथ गज बाजि चढ़ाई॥
निरखी क्रोध क्षमा की फौजा। सन्मुख आनि दिखावत ओजा ॥
क्रोध बाण छूटे विकट, मानत अटक न कानि।
पिता मात गुरु भ्रात की, ताछिन तजी पिछानि ॥६७॥
बदत बिकल बत वचन कराला। सुनि सब क्षमा सहे तिहि काला॥
मारण उठ्यो क्रोध दै गारी। क्षमा निरखि मुसकाय उचारी

क्रोध कादि अपगुण ता केरे। करि अपमान क्षमा को टेरे ॥
मधुर वचन वद कहत सुभाही। सबते अधिक दोष हम माही ॥
शीतल वचन क्षमा के बाना। ताते हते क्रोध भट नाना ॥
क्रोध अग्नि सम बाण चलायो। नीर बाण तिहि क्षमा बुझायो॥
निन्दा भई क्रोध की भारी। कायर भयो मानि मन हारी ॥
होत क्षमा की बड़ी बड़ाई। धन्य धन्य भल क्षमा कहाई ॥

क्रोध चमू भागत भई, और संग के बीर।
कायर ज्यों कम्पत भये, क्रोध धरत नहिं धीर ॥६८॥

छूटन लगे क्षमा के बाना। मारे बीर क्रोध के नाना ॥
क्रोध सुभट बड़हुतो प्रचण्डा। क्षमा किये ताके शत खण्डा ॥
हिंसा निर्दय पीठि दिखाई। पाप संग लै चले पलाई ॥
क्षमा चक्र ततकाल चलायो। जिद्द जहोद मारि बिचरायो ॥
क्षमा शक्ति ऐसी कछु डारी। कलह कुबुद्धि कल्पना मारी ॥
तामस रथ काट्यो ततकाला। हत्यो सारथी रूप कराला ॥
सनाह छेद काटे शर चापा। शस्त्र टूटि सब विविध शिरापा॥
क्षमा शस्त्र ते लेत न क्रोधा। भाग्यो विकल गति संग न योधा॥

लखी मोहगति क्रोध की, अंग भंग तन नंग।
नृप विह्वल लज्जित डरत, लखि सुनि सकल प्रसंग ॥६९॥

अति उदास डरप्यो मन मोहा। दीनें डारि करन ते लोहा ॥
निरखत रहत कहत नहिं बानी। लोभ निलज नृप की गति जानी॥
लोभ वदत राजा तुम सूनो। चिन्ता वदन मलिन उनमूनो ॥
याको कारण मोहि बताई। मैं तुव सेवक करौं उपाई ॥
मोसे सुभग तुम्हारे संगा। हम सब करैं सुक हौ प्रसंगा ॥
हर्ष शोक बोल्यो. नृप बानी। लोभ सुभट सुनि मोरि कहानी।

काम क्रोध मेरे बड़ बीरा। क्षमा ज्ञान मिलि कीन अधीरा॥
भगे युद्ध मधि कामरु क्रोधा। इनते अधिक कौन बड़ योधा॥
सजि विवेक सैना प्रबल, गर्जत है सब फौज।
भजत आत हमरे सुभट, बोधरु क्रोध मनोज॥७०॥
क्षमा ज्ञान मारे हम बीरा। हरै कौन तो बिनु मम पीरा॥
सैन विवेक सहित भट मारै। तौ तू हमरो राज उबारै॥
सुनि नृप वचन लोभ वद बानी। तुम उर रीति सकल विधि जानी॥
जो तुमरो सेवक मैं लोभा। मारि विवेक करौं सब शोभा॥
काम क्रोधकी सैन जिवाऊं। भक्ति ज्ञान वैराग भगाऊं॥
हनौं विवेक जमैं तब राजू। कीन्हो यह दृढ़ प्रण हम आजू॥
लोभ मोह की आज्ञा पाई। चढ्यो फौज लै करन लड़ाई॥
प्रथम पाप लीन्हो निज सङ्गा। ताको मुख लखि रहत उमङ्गा॥
असद कर्म चिन्ता लई, रहत सङ्ग उरशूल।
आस त्रास उसत्रास शठ, लबधि तृष्ण अनुकूल॥७१॥
इत ते चले लोभ सँग योधा। उत विवेक प्रति वद विधि बोधा॥
ज्ञान विवेक मन्त्र इमि कीनो। सुत सन्तोष बिदा करि दीनो॥
भक्ति ज्ञान सँग दये सहाई। बड़ वैराग्य सैन चढ़ि धाई॥
निर्गुण रथ रथवान अचाही। बढ़त वीर चढ़ि सहित अदाही॥
मनसा भूमि जुरे युग योधा। बढ़त परस्पर विविध विरोधा॥
दुहुँ दिशि बजन लगे रण बाजे। युद्ध काज मृगपति वत गाजे॥
लालच बाण लोभ के छूटे। सन्तोष शक्ति ते बीचहि टूटे॥
चिन्ता शक्ति लोभ लै मारी। ज्ञान शक्ति सन्तोष सम्हारी॥
दुख्य पाशि कर लोभते, आत लखी सन्तोष।
उग्र ज्ञान नारॉच ते, काटि दिये दुख. दोष ७२

लोभ खड्ग सन्ताप उठायो। राज पुत्र की ओर चलायो ॥
तब सन्तोष सुहृद लै सायक। कट सन्ताप लोभ करि घायक ॥
लोभ कृपण सञ्चन लै चापा। छाँड़ि बाण तास ते पापा ॥
त्याग शक्ति सन्तोष चलाई। धनुष त्राण काटे दुख पाई ॥
धीरज धनुष नृपतिसुत गह्यो। विराग बाण उर में तब दह्यो ॥
मूर्च्छित लोभ धरणि में पर्यो। बिचरी सैन ताहि परिहर्यो ॥
लोभ फेरि उठि रथ पर चाढयो। दारुण कोप तासु को बाढयो ॥
तब सन्तोष काटि रथ डार्यो। ताकों छदम सारथी मार्यो ॥

त्रास आस उस्सास शठ, तृष्णा लब्धि उदास।
हर्ष शोक चिन्ता असद, भगे मानि शर त्रास ॥७३॥

अंग भंग कीने सब वीरा। भग्यो लोभ रण त्यागि अधीरा ॥
अति उदास निर्लजता धारी। मोह नृपति ढिग गयो बिकारी ॥
वदत लोभ राजा सुनि रीती। हम सन्तोष लियो हो जीती ॥
पाप अचानक मारि गिरायो। तब सन्तोष बढयो छवि छायो ॥
वीर विवेक कहत सब घोरा। हम अब लख्यो नेक नहिं जोरा ॥
सब विवेक की करत बड़ाई। तुमते तरे तासु ठकुराई ॥
वह अति निबल प्रबल तुम योधा। काम क्रोध ढिग अणु वत बोधा ॥
तुम शर चाप गहत कर राजा। शर विवेक की फूटत पाजा ॥

मोह नृपति की फांसि मधि, बँध्यो सकल संसार।
छूट न पावत प्रवृति भट, कहत न करत बिचार ॥७४॥

जब तुम चढ़ो नृपति उन ओरी। तब रिपु सैन शरणि शरवोरी ॥
मो सेवक के लखियो हाथा। सब भट प्रबल आपके साथा ॥
ताते चढ़ो नृपति ततकाला। सङ्ग शूर सब सैन विशाला ॥
जम्बुक गहन चढत तब राजा। सजत सकल मृग पतिको साजा ॥

यह अज्ञान देश बड़ भारी । तामधि सकल प्रबल नर नारी ॥
सब चलि हैं मिलि तुम सँग ईशा । करि विवेक तुमरी किमि रीशा ॥
सुनि नृप मोह लोभ के बैना । अति प्रसन्न मुख प्रफुलित नैना ॥
आयसु दै उमराव बुलाये । सब भट समिटि भूप ढिंग आये ॥

मोह नृपति आज्ञा करी, सुनो सुभट मम प्रान ।
अब विवेक को मारि हों, मन माया की आन ॥७५॥

सुनि नृप वचन मुदित सब शूरा । वर्षन लग्यो वदन पर नूरा ॥
भूप वचन शिर ऊपर धारी । पृथक पृथक विधि कीन तयारी ॥
रथ गज बाजि बनाइ विताना । खड्ग चमर बरछी धनु बाना ॥
खर खच्चर ऊँटनि भरि भारा । सब गुण तम रज को विस्तारा ॥
वर्ण वर्ण रथ रथ पर केता । बड़ते कीन न्यून संकेता ॥
बनिक बनिज हित चले अपारा । महिषी सुवन वृषभ धरि भारा ॥
पण्डित चतुर प्रतापी सङ्गा । ते सब लखि मुख मोह उमङ्गा ॥
कहत सुनत ना जात विचारी । तिनहूँ ता सँग करी तयारी ॥

मोह नृपति सैना सजी, लै सँग सब उमराव ।
नृप विवेक बड़ बीर ते, युद्ध करन चित चाव ॥७६॥

उलटी मोह नृपति की सैना । सकल वर्ण षट दर्शन चैना ॥
भूषण वसन सजे नृप नाना । असद कर्म सँग विसद दिवाना ॥
लइ सौंज मोदी दुख सगरी । सब अज्ञान पुरी सँग डगरी ॥
गर्व क्रोध भट काम हरोला । लोभ पाप बड़ वीर चँडोला ॥
मिथ्या मलिन ईर्षा घोरा । यह जु नृपति के दक्षिण ओरा ॥
हर्ष शोक मानरु अपमाना । यह भट वाम भाग बलवाना ॥
नृप सिंहासन आनि विराजे । छत्र चमर नाना विधि साजे ॥
बजत बिकट गति कलह निशाना कविजन बिरद बदत बिधि नाना

चढ़ति भई सैना प्रबल, भुवन चतुर्दश छाय।
करि प्रवेश काया नगर, मनसा भूमि समाय ॥७७॥
नृपति विवेक खबरि सब पाई। अरि जीतन की करत उपाई ॥
भक्ति आदि उमराव बुलाये। तिनको विधिवत वचन सुनाये ॥
मोह नृपति आपुन चलि आयो। सब उमराव समिटि सँग लायो॥
सकल फौज रण अवनी आई। कहो करैं किमि तासु उपाई ॥
बदत बिचार सुनत नृप बानी। आप कृपा ते सब हम जानी ॥
तुम वपु प्रबल प्रताप अपारा। करंत कौन तुमरो निर्धारा ॥
मोह अनेक जन्म धरि पावै। तुमरो रूप न ता उर आवै ॥
लघु सेवक तुमरो इक जावै। मोह सैन सब मारि भगावै ॥
तौ हूँ अब इमि कीजिये, राज नीति की रीति।
नृप आये भूपति चढ़ै, सब मन अधिक प्रतीति ॥७८॥
भूपति सुनि विचार के बैना। आज्ञा दई सजौ सब सैना ॥
सब उमराव यथा विधि रीति। निज सेवक निज सेव्य प्रतीती ॥
रथ गज बृषभ ऊंट बड़ बाजा। नौतन तिन हित सजि सब साजा॥
अनल बाण शर चाप त्रिशूला। खड्ग चर्म्म धरि बदन प्रफूला ॥
गदा चक्र फरसा कर लीने। सकल समान नांहि कोउ हीने ॥
सिंहासन सुन्दर सुखदाई। नृप विवेक बैठे तहँ आई ॥
चम्र-छत्र लीने जन हाथा। वेद पुराण बदत सुठि गाथा ॥
बाजत नव विधि भक्ति निशाना। सकल सन्त गावत गुण गाना॥
निर्मल देश सुवेश मधि, भक्ति जिते नर नारि।
सब मिलि चले विवेक सँग, प्रगट प्रेम प्रण धारि ॥७९॥
साहूकार विमल विज्ञानी। यह परलोक रीति जिन जानी ॥
धन अटूट अनभै सतसङ्गा ता बल ते चित रहत उतङ्गा

भवन देश निर्मल पुर वासी अगुण सगुण,गुण द्रव्य प्रकासी
कोठी प्रणत जनन उर आही। जिज्ञासा धन धरि ता माही
तत्त्व उपदेश तास व्योहारा। जमा खर्च सुविचार सुसारा॥
आरज पथ को भरत सु माला। करत सङ्ग सब होत निहाला॥
गनि विवेक श्रीगुरु निज नाथा। भरि बहु माल चले सब साथा॥
रहत हरोल ज्ञान बैराग। भक्ति चंडोल वाम तप त्यागा॥

दक्षिण भुज विज्ञान घन, प्रीति ध्वजा फहराति।
श्रीगुरु सबके सेव्य को, पूछि सुनत शिरनाति॥८०॥

चली चमू भूपति की भारी। धरि अज्ञान पुरी सब जारी॥
आलस महल करे खँड खण्डा। दुख मोदी करि कैद प्रचण्डा॥
यह सब खबरि मोह सुनि पाई। क्रोध सहित तिहि लई लड़ाई॥
भर्म ज्ञान ते भई भिराई। क्रूर कपट दोनों निठुराई॥
चल्यो काम पर शील सुवीरा। धीरज धर्म दये उर तीरा॥
पुष्प चाप काटे सब बाना। मूर्च्छित कीन हते भट नाना॥
भूपति सुत सन्तोष सुवीरा। मारि लोभ खल कीन अधीरा॥
क्षमा क्रोध दोनों बड़ योधा। लरत परस्पर बोध बिरोधा॥

महा प्रबल लालच निलज, रुप्यो सामुहे आय।
त्याग शक्ति उर में दई, मूर्छित दियो गिराय॥८१॥

अहङ्कार पर चल्यो विचारा। अनल बाण को कीन्ह प्रहारा॥
सङ्ग सुभट मारे क्षण माहीं। हारि मानि खल चल्यो नशाहीं॥
दुविधा सन्मुख चक्र चलायो। जतसत हेम मारि बिचरायो॥
उठि परमारथ शक्ति उठाई। दुविधा मूर्छित भूमि गिराई॥
करि कुसङ्ग भ्रम बाण प्रकाशा। विचरे रहनि भाव विश्वासा॥
उलटि खड्ग दृढ़ता कर लीनो भ्रम कुसङ्ग के तन महँ दीनो

काटे चरण और भुज बाहीं । अङ्ग भंग करि भूमि गिराहीं ॥
बल करि उठ्यो महा, विज्ञाना । गर्व गुमान भग्यो अज्ञाना ॥

शोक और संशय लिये, आनि भिरयो अभिमान ।
तत्त्व ज्ञानशर संन्धि कै, दिथे प्रबल विज्ञान ॥८२॥

चिन्ता मिथ्या तृष्णा धाई । मनी कुबुद्धि सङ्ग करि लाई ॥
लबधि कल्पना मलिन बड़ाई । हिंसा असद असुय्या आई ॥
असपर्धा रु ईर्षा नेरी । इन सब समिटि भक्ति को घेरी ॥
चितई भक्ति भई तन तापा । क्षमा दया धारे शरचापा ॥
छूटन लगे नम्रता बाना । श्रवण कीर्तन हरि गुण गाना ॥
सतसंगति रथ पर चढ़ि धाई । दृढ़ता अननि सारथी लाई ॥
चक्र अचाह छांडि तत काला । चिन्ता लबधि हती युग बाला ॥
भैंते विगत शक्ति उपजाई । मिथ्या मनी कुबुद्धि भगाई ॥

हरि गुरु सेवा खड्ग कर, लियो भक्ति दृढ़ धार ।
कलह कल्पना मलिनता, लई छिनक में मारि ॥८३॥

भक्ति लई फिरि दया कटारी । हिंसा अधम असुय्या मारी ॥
असपर्धा रु ईर्षा भागी । भक्ति मानसी रस में पागी ॥
महा मोह कोप्यो तब भारी । युद्ध करन की कीन तयारी ॥
इत विवेक राजा उठि धायो । मनसा भूमि आनि छवि छायो ॥
बेसुध्धि शक्ति मोह उपजाई । चेतनि शक्ति विवेक चलाई ॥
गर्व खड्ग लै ता छिन आयो । तप खवास ने भूमि गिरायो ॥
डरयो गर्व भय रस में पाग्यो । ततक्षण भग्यो महारण त्याग्यो ॥

गर्व हारि भाग्यो सुन्यो, उठ्यो मोह अकुलाय ।
ज्यों काली ,फण कृष्ण को, शतफण करि समुहाय ८४

बोल्यो विकट कठिन शठ बानी रे विवेक तोको मै जानी ॥
छल करि हते हमारे योधा। लोभ महावर्त कामरु क्रोधा
महा मोह राजा मम नामा। देश अज्ञान आश मम वामा ॥
सहत कौन मा करके तीरा। महा प्रबल भट होत अधीरा ॥
तौ विवेक जानौं तुहि सूरा। मो संग्राम रहत मुख नूरा ॥
हँसि विवेक बोल्यो मृदु बानी। मैं तो रीति सबै उनमानी ॥
शूर सुयश मुख ते नहिं गावैं। क्रियामान कृत करि दिखरावैं ॥
सुनि तव मोह लगी उर आगी। ममता शक्ति लई कर त्यागी ॥

नृप विवेक लखि शक्ति को, धनुष लयो कर धारि।
तानि विचारि सुबाण को, छेदि शक्ति धर डारि ॥८५॥

आलस शक्ति मोह उपजाई। आनँद शक्ति विवेक चलाई ॥
विभ्रम चक्र मोह को चाल्यो। विचार चक्र तें बीचहि टाल्यो ॥
अनरथ खड्ग मोह कर धार्यो। अर्थ खड्ग ते ताहि निवार्यो ॥
निद्रा शक्ति मोह उपजाई। जगृत शक्ति विवेक चलाई ॥
मोह फाँसि माया फैलाई। लखि विवेक छिन माहि डराई ॥
अन्धकार मोहै उपजायो। ताहि विवेक निरखि मुसकायो ॥
हाँसि सहित बोले नृप बानी। याही बल ते भयो गुमानी ॥
लै विवेक कर बाण प्रकाशा। अन्धकार को कीनो नाशा ॥

नृप विवेक कर धनुष ते चल्यो सत्यता बान।
असत खवास सुमोह को, मारि कियो हैरान ॥८६॥

उपज्यो छोह मोह उर भारी। उठि करि खड्ग चरम कर धारी॥
नृप विवेक के सन्मुख आयो। ज्ञान बाण उर मारि गिरायो ॥
मूर्छित मोह भयो भ्रम भारी। आशा नाम ताकी नृप मारी ॥
मोह सम्हारि फेरि उठि धायो। दण्ड सुबाण विवेक उठायो ॥

अहङ्कार ताको रथ छेद्यो। काट्यो केत सारथी भेद्यो ॥
फिरि शरचाप मोह कर धारयो। नृप विवेक सो काटि निवारयो ॥
काट्यो खड्ग शक्ति करि खण्डा। सर्व बाण फिरि चले प्रचण्डा ॥
निलज सनाह तासु ते छेद्यो। पाखँड सचिव त्रास युत खेद्यो ॥

फिरि विवेक रथ ते उतरि, गदा लई निरखेद।
दई शीस नृप मोह के, उपजी उर अति खेद ॥८७॥

तृष्णा आश वदत इमि बानी। मोह नृपति सुनि मोरि कहानी ॥
भूप समान तोर उमरावा। तिनको परत नांहि अब दावा ॥
सब सुत सचिव भगे रण योधा। लोभ अधिक भट कामरु क्रोधा ॥
सो अब त्यागि गये तुम देहा। अब तुम लरत कौन करि नेहा॥
देश अज्ञान दियौ अरि जारी। तुम बिनु दुखित फिरत नर नारी॥
आलस महल फोरि सब डारे। ताके रक्षक मारि बिडारे ॥
कहे कहा दारुण दुख गाथा। अछत नाथ हत सकल अनाथा॥
उलटी समै काल बिपरीती। या छिन तजौ युद्ध ते प्रीती ॥

आसा तृष्णा के वचन, सुनि अति भई उमङ्ग।
मोह नृपति रण त्यागि कै, भग्यो तास के सङ्ग ॥८८॥

बाजन लगे जीत के बाजा। नृप विवेक सुख सहित समाजा ॥
सम्पति सहित गुनन पै आये। पृथक पृथक युग पद शिर नाये॥
वदत विवेक जोरि कर बानी। तुम कृत बिजे सकल अभिमानी॥
तुमरे पद पङ्कज बल बाढी। जीते अरि लघु तृण की नाहीं ॥
तुम पद सकल सभा की प्रीती। अब कह करैं कौन विधि रीती॥
श्रीगुरु वदत मित्रवत बानी। तुम उर मध्य मोरि बुध सानी ॥
मो मुख वचन और मन लावौ। अरि के सङ्ग सैन लै धावौ ॥
सुनि गुरु वचन सबन शिरनाये। लै सँग सैन मोह पै आये

लई शरण सब सुभट मिलि, माया गुनि प्रतिपाल ॥८९॥
सिमिटी सकल सैन अरि दवनी। लगी जाय माया की अवनी ॥
माया निडर डरत गुरु वैना। फिरि विवेक की उलटी सैना ॥
नम्र होय श्रीगुरु पै आई। चरण परसि अतिशय सुख पाई॥
युगकर जोरि वदत इमि वानी। तुमरो रूप परत नहिं जानी ॥
करिकै कृपा ताहि दर्शावो। हरिकर ताकी बाँह गहावो ॥
जो नर नवत तोर पद शीशा। विदित निविघ्न पावत जगदीशा॥
अब म्वहि मानि लेहु निज दासी। अब ते तुम पद युगल उपासी ॥
अखिल जन्म धरि करत विचारा। करि न सकत तुम वपु निर्धारा॥
निगम अगम श्रीगुरु चरण, सहज दरश वलि दीन।
तुम कृतज्ञ करि कै दया, अमल कीन मल हीन ॥९०॥
वदत प्रसन्न मिष्ट गुरुबानी। वरम्ब हि तेरे मनमानी ॥
गदगद पुलक कीन दण्डौता। परशे पद भव सागर पोता ॥
सन्मुख जोरि युगल कर ठाढी। कहै वचन अति हित रुचि बाढी॥
अब कृपाल ऐसो वर पाऊँ। हरि पद परशि प्रीति उपजाऊँ॥
फिरि यह सुवन मोर मन मोहा। नृप विवेक सँग रहो अद्रोहा ॥
मोह आदि सेवक अनुकूला। नृप विवेक रक्षक सुख मूला ॥
मै विवेक तुमरी निज दासी। श्रीसतगुरु हरि चरण उपासी ॥
सतगुरु परम कृतज्ञ कृपाला। सुनत वचन अति भये दयाला ॥
गुरु माया कर ग्रहण करि, हरि चरणन ढिग जाय।
अलङ्कार ताको करी, भूषण वसन बनाय ॥९१॥
सब विधि सतगुरु भये सहाई। माया हरि चरणन लिपटाई ॥
जीव लखत माया अब नाहीं। व्याकुल अति छिन छिन अकुलाहीं ॥

श्रीगुरुते पूँछति कहँ माया। आनन्दित वपु मोर सहाया ॥
श्रीगुरु पृष्ठि तासु की फेरी। निरखी अजा कृष्ण की चेरी ॥
अद्भुत वपु निरख्यो हरि केरो। माया त्यागि भयो हरि चेरो ॥
प्रभु हँसि पुत्र मानि लियो गोदी। मायक आस तजी लखि बोदी॥
जानि विवेक रूप तव माया। भक्ति भाव निज कीन सहाया ॥
सुत मन मोह तासु ढिग लाई। भक्ति विवेक चरण शिरनाई ॥

माया वदत विवेक प्रति, मो. सुत तुम शरणाय।
क्षमा करत अवगुण अखिल, नमत शत्रु शिर आय ॥६२॥

पूंछि विवेक गुरुन ते रीती। नृपति अरिन की कौन प्रतीती ॥
गुरु सुनि आज्ञा या विधि कीनी। अवनि अज्ञान याहि को दीनी ॥
चँवर छत्र सिंहासन नाहीं। बसौ विवेक भक्ति की बाहीं ॥
इनकी आज्ञा धरि निज शीशा। तुम सेवक ये तुमरे ईशा ॥
अरस परस कर दीन गहाई। चमू विवेक अमलपुर आई ॥
निर्भय भये सकल नर नारी। जिन विवेक सैना उर धारी ॥
तिनके वश निशि दिन मद मोहा। जिनके शत्रु मित्र नहिं छोहा ॥
होत विवेकी ता वश नांही। भक्ति भक्त की करत सहाही ॥

वर्ष मास युग पक्ष दिन, पहर घरी पल रीति।
समय जानि ताते करत, भक्ति विवेक प्रतीति ॥६३॥

निर्मल देश अलंकृत कीनौ। रहन न दई ताप तहँ तीनौ ॥
भक्ति भक्त हरि गुरु सुख पाई। मूरतिवन्त विराजे आई ॥
आरज पन्थ चले दिन रैना। रक्षक फिरत भूप की सेना ॥
असद् कर्म तहँ रहन न पावै। निर्भय सन्त कृष्ण गुण गावै ॥
आस धीर बोलत हँसि बानी। देवदत्त तेरे मन मानी ॥
या विधि जीव प्रगट इमि मायक। ऐसे पञ्च तत्त्व धरि काया ॥

सत गुरु प्रगट मिलव विवि रीती। मोह मलिन की कही फजीती ॥
माया गुरु नमि हरि मिलन, ब्रह्म जीव संयोग।
मोह राज तजि घर बसन, नृप विवेक पुर भोग ॥
सो आशङ्का तो मन माहीं। करो प्रश्न जिनि सकुचि लजाहीं॥
देवदत्त बोल्यो कर जोरी। कहनि अपार मोरि मति थोरी ॥
अब मैं लख्यो तुम्हारो रूपा। भक्ति विवेक ज्ञान के भूपा ॥
अखिल कल्प माया नचवाई। चितये नांहि कृष्ण समुहाई ॥
जीव विवश माया मुख हेरै। अखिल कल्प गति पीठि न फेरै॥
गुरु त्राण मांहि चरण लिपटाई। जीव गोद दोनो बैठाई ॥
सो तुमही, यह और न होई। तुम तजि फिरत अपनपौ खोई ॥
तुम विवेक राजा जितवायो। करयो मोह ते निज मन भायो ॥
गुरु विवेक गुरु ब्रह्म वपु, गुरु कृतज्ञ जनपाल।
भक्ति ज्ञान वैराग्य गुरु, बसौं चरण मो भाल ॥६५॥
बेर बेर गुरु पद शिरनाई। तन मन बचन भक्ति उपजाई ॥
शिर धरि चरण कहत गुरु बानी। मो वपु रहो तोरि बुधि सानी ॥
यह इतिहास सबन सुखदाई। या माधे मोह विवेक लड़ाई ॥
सो शुठि भक्ति ज्ञान वैरागी। यह इतिहास जासु बुधि पागी ॥
नर नरेन्द्र मुनि ऋषि सुविवेकी। बसत हँसत हित सब ते एकी ॥
कहत सुनत न तजत उर टेकी। लोक वेद विधि बनि मन छेकी॥
यह इतहास तासु मन माहीं। व्यापत हर्ष शोक भय नाहीं ॥
लोभ न क्रोध काम तन मोहा। आश त्रास उसास न द्रोहा ॥
सन्त प्रशंसित सुनि कथा, भ्रामिक धरत विषाद।
दासकिशोर विचार करि, प्रश्न करत हित आद ।६६

दोहा—महा मधुर रस करषि जल, ब्रह्म रसानदसार ।
प्रेम सिंधु चहुँ दिशि भरयो, अतुलित अमित अपार ॥
प्रीतम अलि तिय कमल तनु, पीवत परशि पराग ।
शीत भीत लपटत लटकि, उदति, अमित अनुराग ॥
प्रेमानन्द प्रकाश सुख, मत्त महल रस रासि ।
निरखि प्रवेश प्रसन्न अति, रति हित करत सुहासि ॥
रसिक सहेली रूप बनि, रचि बसंत रस सार ।
निकसि परम सचि कुंज ते, निरमित विपिन विहार ॥
मुक्ता कुसुम प्रवाल फल, सौरभ सुखद सवाद ।
चन्द्रादिक अमृत अखिल, सकल रसन को आदि ॥
दम्पति रति छिन छिन चहत, लहत सकल सुख सार ।
प्रेम सहेली ते रचित, सचित कुसुम आगार ॥
श्रीयमुना चहुँ फेरि घिरि, पोषत धर द्रुमबेलि ।
विविध रंग नग मिलि सलिल, चलन चहत युग केलि ॥

॥ छन्द ॥

पंक रूप अनूप गज पिय पीन रस तामें धसे ।
अनुकूल वर प्रतिकूल भामिनि प्रणत उर तामें बसे ॥
अखिल मन्मथ मन मथत वपु विवश ह्वै द्विपवत फसे ।
कोक निपुन नवेलि नववर हरषि हँसि निज कर कसे ॥
दोहा—यमुना जल रस वपु प्रबल, बहत रहत चहुँ ओर ।
कूजित कोइल केकि शुक, सारस हंस चकोर ॥
कुसुम गुच्छ मुसकनि दशन, अरुन अधर फल सार ।
प्रीतम तनु मन अटकि अलि, भ्रमत न पावत पार ॥

हरिजस गावत सब सुधरे ।
अकुलीन बिमुख खल किलेक गनौं बुरे ॥
ठ-जुलाहो सनमुख जाय जुरे ।
ो सुख दियौं साँवरे नाहिन बिरद दुरे ॥
वखान सुत के हित द्वै अखरा उच्चरे ।
र प्रभु कोटि अजामिल पतित पवित्र करे ॥

धृग धृग ऐसे जनम जियौ ।
यौ तोष्यौ तन तिनहि सु मन न दियौ ॥
सुकृत न बिचारयौ चरननि चित न छियौ ।
विषया के लालच सुखहि न समझि लियौ ॥
र के अपराधहि काँपत डरनि हियौ ।
साधी अपराधी गुरु करि बैर कियौ ॥
कहत हैं विवेकी पाँव पखारि पियौ ।
श्री गुरु सेवन बिन नाहिन भजन बियौ ॥